जनवरी–मार्च 2018
ISSN : 2320-7736

सत्यमेव जयते

विज्ञान गरिमा सिंधु

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

कृषि विज्ञान विशेषांक

(कृषि विज्ञान मूलभूत शब्दावली सहित)

Digital India
Power To Empower

अंक–104

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग) भारत सरकार
Commission for Scientific and Technical Terminology
Ministry of Human Resource Development
(Department of Higher Education)
Government of India

ISSN : 2320-7736 (Print)

विज्ञान गरिमा सिंधु

(त्रैमासिक विज्ञान पत्रिका)

कृषि-विज्ञान विशेषांक

अंक - 104
(जनवरी-मार्च 2018)

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
(उच्चतर शिक्षा विभाग)
भारत सरकार

'विज्ञान गरिमा सिंधु' एक त्रैमासिक विज्ञान पत्रिका है। पत्रिका का उद्देश्य है– हिंदी माध्यम से विश्वविद्यालयी व अन्य छात्रों के लिए विज्ञान-संबंधी उपयोगी एवं अद्यतन पाठ्य पुस्तकीय तथा संपूरक साहित्य की प्रस्तुति। इसमें वैज्ञानिक लेख, शोध–लेख, तकनीकी निबंध, शब्द–संग्रह, शब्दावली–चर्चा, विज्ञान–कथाएँ, विज्ञान–समाचार, पुस्तक–समीक्षा आदि का समावेश होता है।

लेखकों के लिए निर्देश–

1. लेख की सामग्री मौलिक, अप्रकाशित तथा प्रामाणिक होनी चाहिए।
2. लेख का विषय मूलभूत विज्ञान, अनुप्रयुक्त विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबंधित होना चाहिए।
3. लेख सरल हो जिसे विद्यालय/महाविद्यालय के छात्र आसानी से समझ सकें।
4. लेख लगभग 2000 से 3000 शब्दों का हो। कृपया टाइप किया हुआ या कागज के एक ओर स्पष्ट हस्तलिखित लेख भेजें जिसके दोनों तरफ हाशिया भी छोड़ें।
5. प्रकाशन हेतु भेजे गए लेख के साथ उसका सार भी हिंदी में अवश्य भेजें। लेख में आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली का प्रयोग करें तथा प्रयुक्त तकनीकी/वैज्ञानिक हिंदी शब्द का मूल अंग्रेजी पर्याय भी आवश्यकतानुसार कोष्ठक में दें।
6. श्वेत–श्याम या रंगीन फोटोग्राफ स्वीकार्य हैं।
7. लेख के प्रकाशन के संबंध में संपादक का निर्णय ही अंतिम होगा।
8. लेखों की स्वीकृति के संबंध में पत्र-व्यवहार का कोई प्रावधान नहीं है। अस्वीकृत लेख वापस नहीं भेजे जाएँगे। अतः लेखक कृपया टिकट–लगा लिफाफा साथ न भेजें।
9. प्रकाशित लेखों के लिए मानदेय की दर 2500/– रुपए प्रति हजार शब्द है, तथा भुगतान लेख के प्रकाशन के बाद ही किया जाएगा।
10. कृपया लेख की दो प्रतियां निम्न पते पर भेजें:
    डॉ० अशोक एन. सेलवटकर
    संपादक, विज्ञान गरिमा सिंधु
    वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
    पश्चिमी खंड – 7, रामकृष्णपुरम्
    नई दिल्ली – 110066
11. अपने लेख E-mail द्वारा तथा CD में भी (फॉन्ट के साथ) भेज सकते है। E-mail: vgs.cstt@gmail.com
12. समीक्षा हेतु कृपया पुस्तक/पत्रिका की दो प्रतियाँ भेजें।

सदस्यता शुल्क:

	सामान्य ग्राहकों / संस्थाओं के लिए	विद्यार्थियों के लिए
प्रति अंक	₹ 14.00	₹ 8.00
वार्षिक चंदा	₹ 50.00	₹ 30.00
पाँच वर्ष	₹ 250.00	₹ 150.00
दस वर्ष	₹ 500.00	₹ 300.00
बीस वर्ष	₹ 1000.00	₹ 600.00

वेबसाइट: **www.cstt.gov.in**
कापीराइट © 2018
प्रकाशक:
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
भारत सरकार, पश्चिमी खंड–7
रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली – 110066

बिक्री हेतु पत्र–व्यवहार का पता:
सहायक निदेशक, बिक्री एकक
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली
आयोग, पश्चिमी खंड–7,
रामकृष्णपुरम्, सेक्टर–1,
नई दिल्ली– 110066
दूरभाष– (011) 26105211
फैक्स – (011) 26102882

बिक्री स्थान:
प्रकाशन नियंत्रक, प्रकाशन विभाग
भारत सरकार,
सिविल लाइन्स, दिल्ली–110054

अध्यक्ष की कलम से

वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा विभिन्न वैज्ञानिक तकनीकी एवं अन्य संबद्ध क्षेत्रों में तैयार की गई शब्दावली के समुचित उपयोग सुनिश्चित करने तथा उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में वैज्ञानिक एवं तकनीकी लेखन को प्रोत्साहित करने के उददेश्य से "विज्ञान गरिमा सिंधु" का प्रकाशन करता है | आयोग द्वारा पत्रिका के समय-समय पर कुछ विशेष विषयों पर विशेषांकों का प्रकाशन किया है । इसी श्रृंखला में "कृषि-विज्ञान विशेषांक" अपने पाठकों व लेखकों को सौंपते हुए मुझे अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है । एक ही विषय पर वैविध्यपूर्ण जानकारी प्रस्तुत करने से पाठकों को संबंधित क्षेत्रों में हो रहे नवीनतम अनुसंधानों एवं शोध-कार्यों की अद्यतन सूचनाएँ एक ही स्थान पर उनकी भाषा में उपलब्ध हो जाती हैं ।

"विज्ञान गरिमा सिंधु" का जनवरी-मार्च 2018 का अंक विशेष रूप से कृषि विज्ञान पर केंद्रित किया जा रहा है । पत्र-पत्रिकाएँ न केवल संस्था विशेष के ज्ञान के वैशिष्ट्य की परिचायक होती हैं, बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर अलग-अलग क्षेत्रों में हो रहे महत्त्वपूर्ण अनुसंधानों व शोध कार्यों का एक समेकित व जनोपयोगी सार्थक मंच भी है । यद्यपि अन्य वैज्ञानिक पत्रिकाओं के समानांतर ही "विज्ञान गरिमा सिंधु" का उद्देश्य भी मूल रूप से हिंदी में वैज्ञानिक लेखन को प्रचारित-प्रसारित करना है, जिसका कार्यान्वयन व अनुपालन पत्रिका अपने प्रत्येक अंक में करती ही रही है ।

मैं इस अवसर पर देश के प्रतिनिधि विश्वविद्यालयों, तकनीकी, वैज्ञानिकों एवं अन्य संस्थाओं के अधिकारियों से अपेक्षा करता हूँ, कि वे अधिक से अधिक आयोग के विशेषज्ञ विद्वानों के सहयोग से तैयार की गई प्रामाणिक व मानक शब्दावली का प्रयोग कर अपना सार्थक सहयोग प्रदान करें ।

इस कृषि विशेषांक को प्रकाशित करने के लिए प्रभारी अधिकारी व प्रकाशन एकक प्रभारी श्री शिवकुमार चौधरी, सहायक निदेशक, विज्ञान गरिमा सिंधु के संपादक डॉ. अशोक एन. कुमार सेलवटकर, सह-संपादक श्री शैलेन्द्र सिंह, के प्रति धन्यवाद व्यक्त करता हूँ। मैं इस विशेषांक के लेखकों को भी साधुवाद देता हूँ ।

सुधी पाठकों के अमूल्य सुझावों व सहयोग की प्रतीक्षा रहेगी ।

(प्रोफेसर अवनीश कुमार)
अध्यक्ष

संपादकीय

विज्ञान गरिमा सिंधु के 104 वें अंक को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है । प्रस्तुत अंक कृषि-विज्ञान विशेषांक के रूप में सामने आया है ।

अध्यक्ष महोदय के आदेशानुसार विज्ञान गरिमा सिंधु के कृषि-विज्ञान विशेषांक पर सामग्री एकत्रित करने तथा इसे सम्पादित करने का अवसर मिला । यद्यपि बहुत कम समय में इसका संयोजन-संपादन वास्तव में कठिन कार्य था लेकिन नित्य प्रति के प्रयासों के साथ-साथ सभी लेखों का संपादन व प्रूफ़ शोधन प्रारंभ हुआ । लेखों का विषयानुसार वर्गीकरण, संयोजन तथा परामर्श समिति द्वारा पत्रिका के विशेषांक का नामकरण किया जाना, इस विशेषांक को सार्थक रूप देने में अभीष्ट सिद्ध हुआ ।

प्रस्तुत विशेषांक में देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों व संस्थानों के विभिन्न लेखकों के आलेख प्राप्त हुए हैं ।

विशेषांक अपने विषय कि अधुनातन जानकारी के आलेखों से परिपूर्ण है । आलेखों में हिंदी जगत् के सामने इस सर्वोपयोगी विज्ञान के अनेक सारगर्भित बिन्दुओं पर विचार-विमर्श किया गया है । इनमें 'फलों की सघन बागवानी है लाभकारी' डॉ. राम रोशन शर्मा तथा 'संरक्षित सब्जी पौद उत्पादन : एक व्यवसाय' डॉ.प्रवीन कुमार सिंह के लेख अपने विषय की अनूठेपन और आधुनिक कृषि विज्ञान में एक नवीन आयाम प्रस्तुत करने के कारण विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट करते हैं ।

मैं माननीय अध्यक्ष महोदय का आभारी हूँ, जिनके मार्गदर्शन व प्रोत्साहन से ही यह दुरूह कार्य नियत समय में निष्पादित हो सका । इसके साथ ही मैं परामर्श एवं संपादन समिति के प्रति आभार ज्ञापित करता हूँ, जिनके अथक एवं समग्र प्रयासों से ही इस पत्रिका की संकल्पना को मूर्त रूप मिल सका ।

मुझे विश्वास है, कि इन आलेखों से हमारे पाठकों को अवश्य प्रेरणा मिलेगी ।

डॉ. अशोक एन. कुमार सेलवटकर
संपादक

विशेषांक संपादन एवं परामर्श समिति

प्रधान संपादक
प्रोफेसर अवनीश कुमार, अध्यक्ष

संपादक
डॉ. अशोक एन. सेलवटकर, सहायक निदेशक

सह-संपादक
श्री शैलेंद्र सिंह, स. वैज्ञानिक अधिकारी (कृषि)

1 डॉ. राम रोशन शर्मा
प्रधान वैज्ञानिक
खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी
संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
पूसा, नई दिल्ली - 110012

2. श्री डी.डी. नौटियाल
पूर्व सचिव
वै. त. श. आयोग
नई दिल्ली

3. डॉ. प्रवीन कुमार सिंह
प्रधान वैज्ञानिक
संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी केंद्र
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
पूसा, नई दिल्ली - 110012

4. डॉ. निमिष कपूर
वैज्ञानिक जी
विज्ञान प्रसार
नोएडा

5. डॉ. मनीष श्रीवास्तव
प्रधान वैज्ञानिक
फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
पूसा, नई दिल्ली - 110012

विज्ञान गरिमा सिंधु

हिंदी में वैज्ञानिक एवं तकनीकी लेखन की स्तरीय त्रैमासिकी

कृषि-विज्ञान विशेषांक

अंक 104, जनवरी-मार्च 2018 **(ISSN : 2320-7736)**

प्रधान संपादक
प्रो. अवनीश कुमार
अध्यक्ष

संपादक
डॉ. अशोक एन. सेलवटकर
सहायक निदेशक

सह-संपादक
श्री शैलेंद्र सिंह
स. वैज्ञानिक अधिकारी

प्रकाशन-मुद्रण व्यवस्था
श्री शिव कुमार चौधरी
सहायक निदेशक

बिक्री एवं वितरण
डॉ. भीमसेन बेहरा
वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी
(आयुर्विज्ञान)

संपर्क सूत्र :
संपादक
"विज्ञान गरिमा सिंधु"
वैज्ञानिक तथा तकनीकी
शब्दावली आयोग
पश्चिमी खंड-7
आर. के. पुरम
नई दिल्ली -110066

अनुक्रम *पृ. सं.*

1	फलों की सघन बागवानी है लाभकारी	*डॉ. राम रोशन शर्मा*	1
2	कृषि विकास पर जलवायु-परिवर्तन का प्रभाव	*डॉ. आर.एस. सेंगर एवं डॉ. रेशू चौधरी*	10
3	कृषि-विज्ञान एवं आधुनिक प्रौद्योगिकी का खाद्यान्न उत्पादन में योगदान	*डॉ. वीरेंद्र कुमार*	16
4	उर्वरकों के संतुलित प्रयोग की आवश्यकता	*डॉ. दिनेश मणि*	23
5	मधुमक्खियों द्वारा परागण एवं उसका महत्व	*डॉ.रचना पांडे, डॉ.विवेक शाह, डॉ.प्रभुलिंगा टी., डॉ.मधु टी.एन., डॉ.पूजा वर्मा*	28
6	फल और सब्जियों का निर्जलीकरण	*डॉ. प्रेरणा नाथ और डॉ. एस.जे. काले*	34
7	दलहनी एवं तिलहनी फसलों का मूल्यवर्धन	*डॉ. अल्का जोशी एवं डॉ. राम रोशन शर्मा*	43
8	नागफनी - रेगिस्तान का एक उपेक्षित पोषक तत्व खजाना	*डॉ.विजय राकेश रेड्डी, डॉ.रामकेश मीना, डॉ.डी.के. सरोलिया*	50
9	लीची का भूरापन: समस्या एवं समाधान	*डॉ.कल्याण बर्मन, डॉ.स्वाति शर्मा, डॉ.राम रोशन शर्मा, डॉ.विशाल नाथ और डॉ.पुष्पा कुमारी*	52
10	अल्पदोहित फल : करौंदा	*डॉ. हरे कृष्ण*	54
11	हिमाचल प्रदेश की पर्वतीय कृषि में जलवायु-परिवर्तन, अनुकूलन एवं समाधान विकल्पों की समीक्षा	*डॉ.रणबीर सिंह राना, डॉ.रानू पठानिया, डॉ.सुदेश रादोत्रा, डॉ.वैभव कालिया एवं डॉ.शारदा सिंह*	57
12	पर्यावरण परिवर्तन से कृषि को बचाने की आवश्यकता	*डॉ. आर.एस. सेंगर*	65

इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों, अभिव्यक्त विचारों आदि से वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय या संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। यह पत्रिका वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली के प्रचार–प्रसार के साथ हिंदी में वैज्ञानिक लेखन को प्रोत्साहित करने के लिए प्रकाशित की जाती है।

अनुक्रम *पृ. सं.*

13	फूलों की खेती से ग्रामीण समृद्धि	*श्री जगनारायण*	70
14	जैव उर्वरकों का मानकीकरण एवं उपयोगिता	*डॉ. एन.के. बोहरा*	76
15	कद्दू वर्गीय सब्जियों की वैज्ञानिक खेती	*डॉ. बृजगोपाल छीपा*	79
16	संरक्षित सब्जी पौद उत्पादन : एक व्यवसाय	*डॉ.प्रवीन कुमार सिंह*	83
	लेखक परिचय		88
	कृषि विज्ञान मूलभूत शब्दावली		89

1

फलों की सघन बागवानी है लाभकारी

डॉ. राम रोशन शर्मा

हमारे देश में कई प्रकार के फल उगाए जाते हैं। इस समय भारत, विश्व में फलोत्पादन में चीन के बाद दूसरे स्थान (88.9 मिलियन टन) पर है। हमारे फल वैज्ञानिकों, प्रौद्योगिकी प्रसार विशेषज्ञों, प्रसार कार्यकर्ताओं एवं किसानों के अथक प्रयासों के कारण आज हमें यह स्थान मिला है। हम यदि आंकड़ों पर ध्यान दें तो पता चलता है कि हमारे देश में मुख्य फलों की उत्पादकता अन्य देशों की अपेक्षा कम है जबकि इनकी उत्पादन क्षमता बहुत अधिक है एवं इसे बढ़ाने की नितांत आवश्यकता है।

तेजी से हो रहे शहरीकरण, भू-खंडन एवं औद्योगीकरण के कारण बागवानी के लिए उपलब्ध भूमि क्षेत्र दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही है। इसके अतिरिक्त, उपयुक्त भूमि की कमी, उच्च प्रबंधन लागत, उचित जल की कमी, जल प्रयोग पर रोक, श्रमिकों की कमी आदि समस्याओं के कारण अब यह अति आवश्यक हो गया है कि यथासंभव कम से कम समय एवं लागत से अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने के बारे में सोचा जाए। ऐसी परिस्थितियों के कारण ही 'सघन बागवानी' की प्रौद्योगिकी का मानकीकरण हुआ। इस प्रौद्योगिकी का सर्वप्रथम प्रयोग यूरोपीय देशों में आड़ू में किया गया जो बहुत ही सफल रहा। बाद में सघन बागवानी अन्य शीतोष्ण फलों जैसे सेब, नाशपाती, खुबानी, अलूचा आदि में भी सफल रही जिसके परिणामस्वरूप इन फलों के उत्पादन व उत्पादकता में अत्यधिक वृद्धि हुई। यही कारण है कि यूरोपीय देशों जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैन्ड आदि में अधिकतर फलवृक्षों के बगीचे सघन बागवानी के अंतर्गत लगे हैं।

सघन बागवानी

प्रति इकाई क्षेत्रफल में अधिकाधिक फलवृक्षों का समावेश करके एवं मिट्टी की उत्पादन क्षमता को खराब न करके उससे लगातार अधिकाधिक एवं अच्छी गुणवत्ता वाली फसल लेना ही 'सघन बागवानी' कहलाता है।

सघन बागवानी की प्रौद्योगिकी

सघन बागवानी के लिए बौने पौधों का होना अत्यन्त आवश्यक होता है ताकि प्रति इकाई क्षेत्रफल में अधिकाधिक पौधों का समावेश हो सके। अतः विश्व के विभिन्न भागों में अनेक फलों के लिए इष्टतम अंतराल ज्ञात करने के उद्देश्य से बौनी किस्मों के विकास, बौने मूलवृंतों के चयन, पादप नियामकों के प्रयोग आदि के प्रयास किए गए। इसके अतिरिक्त ओजस्वी किस्मों के लिए कम दूरी, सधाई एवं काट-छांट, कोणीय आधार पर बाग संस्थापन एवं विषाणुओं के उपयोग से भी कुछ फलवृक्षों में सघन बागवानी के सफल प्रयोग किए गए हैं, जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है।

1. बौनी किस्म

अधिकाधिक पेड़ों को प्रति इकाई क्षेत्रफल में लगाने हेतु पौधों का बौना होना नितांत आवश्यक है। अतः वैज्ञानिकों द्वारा फलों की कई बौनी किस्में विकसित की हैं, जिनका उपयोग सघन बागवानी में किया गया है। उदाहरणतः आम की 'आम्रपाली' किस्म सघन बागवानी के लिए सर्वोचित है। आम की कुछ अन्य किस्में जैसे अर्का अरूणा, अर्का अनमोल आदि भी अपेक्षाकृत बौनी हैं जिन्हें कम दूरी पर लगाया जा सकता है। नींबू की कागजी कलां, केले की 'बसरई', सेब की 'रेड़चीफ', 'ऑरेगन स्पर', 'रेड़ स्पर', अनन्नास की 'क्यू' आदि किस्में भी अपेक्षाकृत बौनी हैं जिन्हें सघन बागवानी के अंतर्गत लगाया जा सकता है।

2. बौने मूलवृंत

बौने मूलवृंत, ओजस्वी किस्मों को बौना बना देते हैं जिससे उन्हें आसानी से कम दूरी पर सघन बाग के रूप में लगाया जा सकता है। बौने मूलवृंतों का सबसे अधिक उपयोग जल्दी फसल प्राप्त करने हेतु किया गया है। क्योंकि किस्म-विशेष को बौने मूलवृंत पर प्रत्यारोपण करने से पौधे जल्दी फल देना शुरू कर देते हैं। उदाहरणतः एम-7 व एम-9 मूलवृंतों ने सेब की बागवानी की तस्वीर ही बदल दी है क्योंकि ये मूलवृंत यूरोपीय देशों में सेब की सघन बागवानी हेतु उपयुक्त पाए गए हैं। हालांकि हमारे देश की भौगोलिक परिस्थितियों में ये मूलवृंत सफल नहीं हो पाए हैं। 'फ्लाइंग ड्रेगन' भी ऐसा ही मूलवृंत है जिसे कई देशों में नींबू-वर्गीय फलों हेतु सघन बागवानी में सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है। हमारे देश में किन्नो संतरे की सघन बागवानी हेतु 'ट्रायर सिटरेंज' मूलवृंत की सिफारिश की गई है। आम में 'ओलूर', 'कृपिंग', 'विलाईकोलुम्वन' आदि मूलवृंत बौने सिद्ध हुए हैं। 'क्विंस सी' मूलवृंत नाशपाती के लिए बौना मूलवृंत है।

3. वृद्धि नियामक

पौधे की वृद्धि को कम करने हेतु ए.एम.ओ.-1618, 'फॉस्फोन-डी' आदि वृद्धि नियामकों का उपयोग नींबू वर्गीय फलों, सेब, नाशपाती आदि में सघन बागवानी के लिए किया गया है। कुलतार (पैक्लोव्युट्राजोल) के प्रयोग से न केवल आम के पौधे बौने हो जाते हैं बल्कि उनकी उत्पादन क्षमता में भी अत्यधिक वृद्धि होती है व 'द्विवर्षी फलन' की समस्या भी काफी हद तक हल हो जाती है। इस वृद्धि नियामक का प्रयोग भूमि में या प्रर्णीय छिड़काव से हो सकता है परंतु भूमि में प्रयोग से यह अधिक प्रभावी होता है। वैज्ञानिक यह सलाह देते हैं कि कुलतार का प्रयोग हर तीसरे वर्ष किसी विशेषज्ञ की सलाह से ही किया जाना चाहिए।

4. इष्टतम अंतराल

फलवृक्षों के लिए इष्टतम दूरी निर्धारित करना बहुत ही कठिन होता है क्योंकि कतार से कतार व पौधे से पौधे की दूरी बागवान के उद्देश्य, किस्म-विशेष, मिट्टी की संरचना, जलवायु, सधाई व काट-छांट एवं सस्य क्रियाओं पर निर्भर करती है। प्रयोगों के आधार पर वैज्ञानिकों ने कई फलवृक्षों की सघन बागवानी हेतु उचित पादप दूरी की सिफारिश की है। जैसे 1930 से 1950 दशक के बीच आस्ट्रेलिया व जापान में संतरे की सघन बागवानी के लिए दूरी 11 x 11 फुट थी। भारत में किन्नो संतरे के लिए 4-5 मीटर दूरी की सिफारिश की गई है लेकिन सघन बागवानी हेतु यह दूरी 1.8 x 1.8 मी. रखी गई है। केले की बसरई (बौनी) किस्म की सघन बागवानी हेतु 1.2 x 1.2 मीटर एवं ओजस्वी किस्मों के लिए 1.8 से 2.2 मीटर दूरी की सिफारिश की गई है।

5. सधाई एवं काट-छांट

फलदार पौधों की सधाई के विभिन्न मानकीकृत तरीके भी सर्वप्रथम शीतोष्ण वर्गीय फलों में ही

अपनाए गए। सधाई की विभिन्न प्रणालियों में से 'सेंटर लीडर', 'ओपन सेंटर', 'स्पिंडल वुश', 'लिंकन केनोपी', 'शीर्ष', 'निफिन', 'बॉवर', 'टेलीफोन', 'कॉर्डन', 'वाई ट्रैलिस', 'टटूरा ट्रैलिस' आदि प्रमुख हैं। आड़ू की सघन बागवानी के लिए 'टटूरा ट्रैलिस' सधाई की विधि उचित पाई गई है। सेब के अधिकतर सघन बाग 'स्पिंडल बुश' विधि द्वारा ही स्थापित किए गए हैं। बाग की संस्थापना के शुरू के वर्षों में जहां उचित सधाई की आवश्यकता होती है वहीं बाद के वर्षों में उचित काट-छांट की। काट-छांट का स्तर किस्म-विशेष, फलवृक्ष-विशेष एवं सधाई की विधि पर निर्भर करता है।

सघन बागवानी के लाभ

सघन बागवानी से कई लाभ होने के कारण इसे विदेशों में काफी बड़े स्तर पर अपनाया गया है। सघन बागवानी के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं :

- फलोत्पादन व उत्पादकता में वृद्धि।
- कृषि कार्यों में आसानी।
- पेड़ों के बीच खाली स्थान का भरपूर उपयोग।
- खरपतवारों की संख्या में कमी।
- खाद एवं उर्वरकों के अपव्यय में कमी।
- पानी का समुचित उपयोग।
- फलों की गुणवत्ता में आश्चर्यजनक सुधार।
- फल उत्पादन में यांत्रिकीकरण को बडावा।

सघन बागवानी की सीमाएं

सघन बागवानी के लाभों के साथ-साथ कुछ सीमाएं भी होते है, जैसे-

- बाग लगाने हेतु आरंभ में अधिक व्यय होता है।
- कुछ फलवृक्षों के फलों के आकार में कमी आ जाती है।
- कभी-कभी फलों के रंग में कमी आ जाती है।
- सस्य क्रियाओं जैसे कीटनाशी एवं कवकनाशी का छिड़काव, फलों की तुड़ाई आदि में काफी कठिनाई आती है।
- एक समय सीमा के बाद कुछ फलों में शाखाएं एवं टहनियां आपस में मिल जाती हैं।

भारत में फलों की सघन बागवानी

हमारे देश में सघन बागवानी का प्रथम सफल प्रयोग 1973 में अनन्नास में किया गया। बाद में केले में भी यह तकनीक अच्छी कारगार सिद्ध हुई। अतः भारत में अनन्नास व केले के उत्पादन व उत्पादकता में वृद्धि का मुख्य कारण सघन बागवानी ही है (तालिका-1)। अब इस तकनीक का मानकीकरण कई अन्य फलों में भी किया गया है, जिसका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित हैः

आम की सघन बागवानी

भारत में आम की मुख्य किस्मों को समान्यतः 10-12 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है जिससे प्रति हेक्टेयर केवल 70 से 100 पौधे ही लगाए जा सकते हैं। इन पौधों के बीच में अधिक दूरी होने के कारण काफी जगह खाली रह जाती है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने आम की आम्रपाली एवं मल्लिका दो अति उत्तम संकर किस्में विकसित की हैं। 'आम्रपाली' के विकास के साथ ही आम की सघन बागवानी का जन्म हुआ क्योंकि बौनी किस्म होने के कारण यह सघन बागवानी के लिए अति उत्तम पाई गई। आम्रपाली की सघन बागवानी हेतु निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिएः

- आम्रपाली की सघन बागवानी के लिए 'स्व: स्थाने' बाग लगाएं जिस के लिए अप्रैल-मई के महीने में 60 x 60 x 60 सेमी. आकार के (2.5 x 2.5 मीटर दूरी एवं तिकोनी विधि में) (रेखाचित्र-1) गड्ढे खोद लें। मई-जून में इन गड्ढों को मिट्टी एवं गोबर खाद की 1:1 मात्रा के

तालिका 1: भारत में सघन बागवानी का विवरण

फलवृक्ष	मुख्य तकनीक का उपयोग	रोपण दूरी	रोपण विधि	पौधों की प्रति हे. संख्या	अपेक्षित फलोत्पादन (टन/है.)
आम	बौनी किस्म (आम्रपाली)	2.5 x 2.5 मी.	तिकोनी	1,600	22
	ओजस्वी किस्मों (दशहरी) में 'डीहॉर्निंग' तकनीक का उपयोग	2.5 x 3.0 मी.	आयताकार	1,333	18
किन्नो	बौना मूलवृंत (ट्रॉयर सिटरेंज)	1.8 x 1.8 मी.	वर्गाकार	3,000	25-30
केला	कम दूरी का उपयोग	1.2 x 1.2 मी. (बसरई) 1.8 x 1.8 मी. (पूवन)	वर्गाकार वर्गाकार	6,944 3,074	174 99
अनन्नास	बौनी किस्म (क्यू)	25 x 60 x 75 सेमी.	दोहरी कतार विधि	63,700	118
अमरूद	बौना मूलवृंत (पूसा सृजन)	3 x 3 मी.	वर्गाकार	1,111	25-30
अंगूर	शीर्ष सधाई विधि	1.2 x 1.2 मी.	वर्गाकार	6,400	35-40
पपीता	बौनी किस्म (पूसा नन्हा)	1.2 x 1.2 मी.	वर्गाकार	6,400	60-65
सेब	कम ओजस्वी मूलवृंत (एम.एम-106, 109, 111)	2.5 से 4 मी.	वर्गाकार	1,200-800	25-30

साथ भर दें। जुलाई माह में प्रत्येक गड्ढे में किसी भी आम की ताजी निकाली हुई 3-4 गुठलियां (मूलवृंत के लिए) लगा दें। अगले वर्ष जून-जुलाई में इन गुठलियों से निकली कोपलें कलम-बंधन करने योग्य हो जाएंगी। कलम-बंधन के बाद यदि प्रत्येक गड्ढे में एक से अधिक गुठलियों में फुटाव आ जाए तो एक को छोड़ कर अन्य को निकाल दें।

- सांकुर तैयार करने के लिए 'आम्रपाली' का स्वस्थ पौधा छांटें। 4 से 6 माह पुरानी टहनी से ही अच्छी सांकुर तैयार करें। मार्च-अप्रैल या जुलाई-अगस्त में कलम-बंधन का कार्य करें।
- आम्रपाली के पौधों से पहले तीन साल तक कोई फसल न लें और जब नया फुटाव आए तो उसे मरोड़ दें। ऐसा करने से पौधा घना एवं झाड़ीनुमा बनेगा और भविष्य में अच्छा फल देगा।
- पौधों को स्वस्थ एवं हरा भरा रखने के लिए उन्हें समयानुसार पानी, खाद एवं उर्वरक दें।
- आम्रपाली में बहुत फल लगते हैं जिससे उनके आकार में भिन्नता आ जाती है। अतः अप्रैल में फलों का विरलीकरण करें।
- आम्रपाली के सघन बाग 12-14 वर्षों तक तो सही फसल देते हैं। उसके बाद उत्पादन में कमी आने लगती है क्योंकि पौधों की टहनियां एक दूसरे पेड़ों पर चढ़ जाती हैं जिससे सूर्य की पर्याप्त रोशनी नहीं मिल पाती है। इस समस्या से बचने के लिए पौधों की काट-छांट करने की सलाह दी जाती है। काट-छांट हमेशा फलों की तुड़ाई के बाद, जुलाई में करें। ऐसा करने पर सघन बाग से 20-25 वर्षों तक आसानी से लाभदायक फसल ली जा सकती है।

तालिका 2: आम की परंपरागत एवं सघन बागवानी (आम्रपाली किस्म) की लागत, लाभ एवं अन्य तुलनात्मक विवरण

विवरण	परंपरागत बागवानी	सघन बागवानी
पादप दूरी	10 मी. x 10 मी.	2.5 मी. x 2.5 मी.
प्रति हेक्टेयर पौध संख्या	100	1,600
बाग स्थापना की लागत	रु. 30,000	रु. 75,000
वार्षिक लागत	रु. 20,000	रु. 35,000
स्थायी उपज	8 से 10 वर्ष पश्चात	7 से 8 वर्ष पश्चात
उत्पादन (किग्रा./हे.)	6,000 से 8,000	1.6 से 1.9 लाख
उपज की थोक बिक्री (रु. 10.0 प्रति किग्रा. की दर से)	रु. 60,000 से 80,000	रु. 1.6 से 1.9 लाख
शुद्ध लाभ	रु. 40,000 से 60,000	रु. 1.25 से 1.55 लाख

अम्रपाली आम का सघन बाग

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर यदि आम्रपाली की सघन बागवानी की जाए तो बागवान आम्रपाली से प्रत्येक वर्ष लगातार 2.5 से 3 गुना अधिक फसल ले सकते हैं जिससे आम की बागवानी और भी अधिक लाभ वाला व्यवसाय बन सकता है (तालिका 2)।

दशहरी आम की सघन बागवानी

आम की ओजस्वी किस्म दशहरी को भी सघन बागवानी में लगाने की तकनीक विकसित की गई है। इस तकनीक के अनुसार 'दशहरी' आम को 2.5 x 3.0 मीटर (1,333 पेड़/हेक्टेयर) की दूरी पर लगाना चाहिए। ये बाग 10 वर्षों तक अच्छी फसल देते हैं, लेकिन उसके बाद फलत घटने लगती है क्योंकि पौधों की टहनियां घनी व लंबी तथा आपस में एक दूसरे पर चढ़ जाती हैं जिससे पौधों को सूर्य की पर्याप्त रोशनी नहीं मिलती है। अतः 10 वर्ष बाद पौधों की 50 प्रतिशत टहनियों को छांट देना चाहिए। ग्यारहवें वर्ष अन्य 25 प्रतिशत व बाहरवें वर्ष शेष 25 प्रतिशत टहनियों को निकाल दें, इस छंटाई की तकनीक को 'डीहॉर्निंग तकनीक' का नाम दिया गया है। वैज्ञानिकों ने ऐसे बागों में 5-8 ग्राम कुलतार प्रति पेड़ के हिसाब से देने की भी सिफारिश की है। इस प्रकार 'दशहरी' के सघन बाग लगातार व कई वर्षों तक फल देते हैं। सघन बागवानी व लगातार छंटाई से पौधों में द्विवर्षी फलन की समस्या भी हल हो जाती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित किस्मों जैसे पूसा अरुणिमा, पूसा सूर्या, पूसा प्रतिभा, पूसा लालिमा, पूसा श्रेष्ठ, पूसा पीतांबर आदि के पौधे भी कम ओजस्वी होते हैं। अतः इन किस्मों का भी मध्यम सघन बागवानी में प्रयोग किया जा सकता है। इन किस्मों के पौधे सघन रोपण (6 मी. x 6 मी.) के लिए उपयुक्त हैं। इन किस्मों के फल उच्च गुणवत्ता वाले होते हैं एवं निर्यात के लिए भी उपयुक्त होते हैं। सिंधु किस्म के पौधे भी सघन बागवानी के लिए उपयुक्त हैं। इन्हें 7.5 मी. x 5.0 मी. की दूरी पर रोपकर प्रति हेक्टेयर 266 पौधों को लगाया जा सकता है। आम में सघन बागवानी के लिए बौने मूलवृंतों के प्रयोग की भी संस्तुति की गई है। उदाहरणार्थ बहुभ्रूणीय मूलवृंत 'विलाईकोलुम्बन' और 'ओलूर' अलफांसो किस्म में ओजपन को घटाने में सक्षम हैं। यद्यपि बौनी किस्मों और बौने मूलवृंतों के प्रयोग से आम की सघन बागवानी में प्रायोगिक सफलता मिली है फिर भी यह आम उत्पादकों के बीच प्रचलित नहीं हो पाई है।

किन्नो संतरे की सघन बागवानी

भारत में किन्नो संतरे की बागवानी पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, दिल्ली एवं हिमाचल प्रदेश के कम ऊंचाई वाले क्षेत्रों में अत्यधिक सफल पाई गई है। इसकी सफल बागवानी हेतु तीन मूलवृंतों जैसे ट्रॉयर सिटरेंज, करना खट्टा व सोह सरकार की सिफारिश की गई। 'ट्रॉयर सिटरेंज' एक बौना मूलवृंत है और इस मूलवृंत पर किन्नो की कलिकायन करके बागों को 6 x 6 फुट की दूरी (3,000 पौधे/हे.) लगाने की सिफारिश की गई है। इसके अतिरिक्त करना खट्टा (अर्ध- ओजस्वी) व सोह सरकार (ओजस्वी) मूलवृंतों पर भी किन्नो के सघन बाग स्थापित किए जा सकते हैं। पौधों की शुरू में इस प्रकार सधाई की जाती है ताकि उनसे शुरू से ही दो-तीन तने निकलें। इन बागों की उचित देखभाल करने पर ये तीन वर्ष में ही अच्छी फसल देने लगते हैं। ऐसे बागों का प्रबंधन भी आसान हो जाता है क्योंकि खरपतवारों की समस्या कम हो जाती है और पानी का सुचारु उपयोग होता है। 4-5 वर्षों बाद ऐसे बागों से बागवान 1.8 से 2.1 लाख का शुद्ध लाभ कमा सकते हैं (तालिका 3)।

केले की सघन बागवानी

केले में किए गए शोध कार्यों के बाद यह सिफारिश की गई है कि 'ड्वार्फ केवेन्डिस' (बसरई) किस्म सघन बागवानी के लिए सर्वोचित है, जिसे 1.2 x 1.2

तालिका 3: किन्नो की परंपरागत और सघन बागवानी (ट्रायर सिट्रेंज मूलवृंत) की लागत, लाभ एवं अन्य तुलनात्मक विवरण

विवरण	परंपरागत बागवानी	सघन बागवानी
पादप दूरी	6 मी. x 6 मी.	1.8 मी. x 1.8 मी.
प्रति हेक्टेयर पौधों की संख्या	278	3,086
बाग स्थापना की लागत	रु. 35,000	रु. 75,000
वार्षिक लागत	रु. 20,000	रु. 40,000
स्थायी उपज	5 वर्ष पश्चात	4 वर्ष पश्चात
उत्पादन (किग्रा./हे.)	10,000 से 12,000	22,000 से 25,000
उपज की थोक बिक्री (रु. 10 प्रति किग्रा. की दर से)	रु. 1.0 से 1.20 लाख	रु. 2.20 से 2.50 लाख
शुद्ध लाभ	रु. 80,000 से 1.0 लाख	रु. 1.8 से 2.1 लाख

मीटर (6,944 पौधे/हे.) की दूरी पर लगाना चाहिए। ओजस्वी किस्मों, विशेषकर 'पूवन' की भी सघन बागवानी संभव है परंतु इसके लिए 1.8 x 1.8 मीटर दूरी (3,074 पौधे/हे.) की सिफारिश की गई है। सघन बागवानी के लिए वैसे तो अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है परंतु पोटाश की मात्रा पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। केले में सघन बागवानी को अपनाकर बागवान 160 से 175 टन प्रति हेक्टेयर उत्पादन ले सकते हैं एवं किसान 3 से 4 लाख तक का लाभ कमा सकते हैं।

अनन्नास की सघन बागवानी

परंपरागत ढंग से लगाए गए अनन्नास के बागों में मात्र 15,000 से 20,000 पौधे ही लगाए जा सकते थे जिससे न केवल लागत में वृद्धि होती थी अपितु उत्पादन भी काफी कम रहता था। अनन्नास की सघन बागवानी हेतु 'क्यू' किस्म सबसे उपयुक्त है जिसे 'दोहरी कतार' की विधि द्वारा 25 x 60 x 75 सेमी. की दूरी पर लगाया जाना चाहिए। सघन बागवानी हेतु 250 से 300 ग्राम के 'स्लिप' या 500 से 600 ग्राम भार के 'भूस्तारी' अच्छे रहते हैं। इस विधि से पौधे लगाने पर प्रति हेक्टेयर लगभग 63,700 पौधे आ सकते हैं और बागवान 115 से 120 टन तक फलोत्पादन ले सकते हैं, जिससे बागवान की आमदनी में 4 से 6 गुणा वृद्धि हो सकती है।

अमरूद की सघन बागवानी

भारत में अमरूद की प्रमुख किस्मों को समान्यतः 8 से 10 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है जिससे पौधों के बीच काफी खाली स्थान बच जाता है। अमरूद में सघन बागवानी हेतु बौने मूलवृंत 'पूसा सृजन' का विकास किया गया। अमरूद की सबसे प्रचलित किस्म 'इलाहाबाद सफेदा' को बौने मूलवृंत 'पूसा सृजन' पर प्रत्यारोपित करके 10 x 10 फुट पर लगाने की सिफारिश की गई है। इस मूलवृंत पर 'इलाहाबाद सफेदा' किस्म के पौधों का आकार लगभग एक तिहाई रह जाता है व पौधे 3 से 4 वर्षों बाद अच्छा उत्पादन देना शुरू कर देते हैं। फलों में मिठास एवं विटामिन 'सी' की मात्रा भी अपेक्षाकृत अधिक हो जाती है। 10 से 12 वर्षों के सघन बाग से 20 से 25 टन फलत प्रति हेक्टेयर मिल सकती है जो परंपरागत ढंग से लगाए बागों से 2.5 से 3 गुना अधिक है। ऐसे बागों से बागवान 1.2 से 1.4 लाख का शुद्ध लाभ कमा सकते हैं (तालिका-4)।

तालिका 4: अमरूद में पूसा सृजन मूलवृंत का उपयोग कर इलाहाबाद सफेदा किस्म में सघन एवं परंपरागत बागवानी का तुलनात्मक विवरण

विवरण	परंपरागत बागवानी	सघन बागवानी
मूलवृंत	गूटी द्वारा तैयार पौधे	पूसा सृजन
पौध अंतरण	6 मी. x 6 मी.	3 मी. x 3 मी.
प्रति हेक्टेयर पौध संख्या	278	1,111
बाग स्थापना की लागत	रु. 15,000	रु. 50,000
वार्षिक लागत	रु. 15,000	रु. 30,000
पहली उपज	3 वर्ष पश्चात	4 वर्ष पश्चात
उपज (किग्रा./हे.)	8,000 से 10,000	25,000 से 28,000
उपज की थोक बिक्री (रु. 6 प्रति किग्रा. की दर से)	रु. 48,000 से 60,000	रु. 1.5 से 1.7 लाख
शुद्ध लाभ	रु. 33,000 से 45,000	रु. 1.2 से 1.4 लाख

पपीते की सघन बागवानी

पपीते की 'पूसा नन्हा' किस्म के विकास के साथ ही सघन बागवानी की शुरूआत हुई। साधारणतः पपीते की प्रमुख किस्मों को 2.5 x 3.0 मीटर या 2.5 x 2.5 मीटर की दूरी पर लगाने की सिफारिश की जाती है, परंतु 'पूसा नन्हा' के लिए यह दूरी मात्र 1.25 x 1.25 मीटर निर्धारित की गई है। पौधों को इस दूरी पर लगाने से एक हेक्टेयर बाग में 6,400 पौधे आ सकते हैं (तालिका 1)। ऐसे बागों से 60 से 65 टन फलत ली जा सकती है जो परंपरागत ढ़ंग से लगाए बागों की अपेक्षा 3 से 4 गुना अधिक है। ऐसे सघन बागों से बागवान 3.4 से 3.9 लाख का शुद्ध लाभ कमा सकते हैं (तालिका 5)।

अंगूर की सघन बागवानी

अंगूर में सघन बागवानी हेतु सधाई की 'शीर्ष विधि' की सिफारिश की गई है। सधाई की इस विधि

तालिका 5: पपीते की परंपरागत और 'पूसा नन्हा' किस्म के उपयोग से सघन बागवानी शुद्ध लाभ एवं अन्य तुलनात्मक विवरण

विवरण	परंपरागत बागवानी	सघन बागवानी
पादप दूरी	2.4 मी. x 2.4 मी.	1.25 मी. x 1.25 मी.
प्रति हेक्टेयर पौधों की संख्या	1,736	6,400
बाग स्थापना की लागत	रु. 40,000	रु. 70,000
वार्षिक लागत	रु. 25,000	रु. 40,000
स्थायी उपज	2 वर्ष पश्चात	2 वर्ष पश्चात
उत्पादन (किग्रा./हे.)	43,000 से 46,800	75,000 से 86,400
उपज की थोक बिक्री (रु. 10 प्रति किग्रा. की दर से)	रु. 2.15 से 2.34 लाख	रु. 7.05 से 8.64 लाख
शुद्ध लाभ	रु. 1.9 से 2.1 लाख	रु. 3.4 से 3.92 लाख

हेतु वही किस्में उचित पाई गई हैं जिनकी निचली गांठों पर फलन होता है। ऐसी किस्मों में 'ब्यूटी सीड़लेस' सबसे उपयुक्त है। इस विधि द्वारा सधाई के लिए पौधों को 1.2 x 1.2 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है। ऐसे सघन बागों में सभी सस्य क्रियाएं आसानी से की जा सकती हैं और उत्पादन भी ठीक रहता है क्योंकि पौधों की प्रति हेक्टेयर संख्या काफी अधिक (6,400 पौधे/हे.) होती है, जिससे बागवान की आय में अप्रत्याशित वृद्धि होती है।

सेब की सघन बागवानी

सेब में सघन बागवानी हेतु दूसरे देशों में उपयोग में लाए गए बौने मूलवृंत (एम-27 व एम-9) भारत में कारगर सिद्ध नहीं हुए हैं क्योंकि ये मूलवृंत रेतीली व कम उपजाऊ मिट्टी में सफल नहीं है। परंतु हिमाचल प्रदेश की रेतीली एवं कम उपजाऊ मिट्टी में एम.एम-106, एम.एम-109 व एम.एम.-111 मूलवृंत (कम ओजस्वी) सघन बागवानी के लिए अच्छे पाए गए हैं। इन मूलवृंतों के अलावा सेब की सघन बागवानी के लिए 'ड्वार्फ पिरामिड', 'स्पिडल बुश' एवं 'पाल्मिट्टे' आदि सधाई की प्रणालियां उचित पाई गई हैं। सधाई की विभिन्न प्रणालियां में हमारे देश में सेब व आडू की सघन बागवानी हेतु सधाई की 'टटूरा ट्रेलिस' विधि को अपनाया गया है। विदेशों में इन

सेब का सघन बाग

फलों की सघन बागवानी हेतु 'हेजरो' रोपण विधि का प्रयोग किया जाता है।

निष्कर्ष

यदि हम उपरोक्त सिफारिशों पर ध्यान दें तो पता चलता है कि भारत में अनन्नास व केले में सघन बागवानी व्यावसायिक स्तर पर की जा रही है और आम, किन्नो, अमरूद, अंगूर व सेब आदि में सघन बागवानी शुरूआती दौर में ही है। परंतु यह पूर्ण दावे के साथ कहा जा सकता है कि इन फलवृक्षों में भी हमें सघन बागवानी को बृहद् स्तर पर शुरू करना होगा ताकि फलों के उत्पादन व उत्पादकता में वृद्धि की जाए एवं इस तकनीक का भरपूर लाभ उठाया जा सकें, जो इस समय की मांग भी है और आवश्यकता भी।

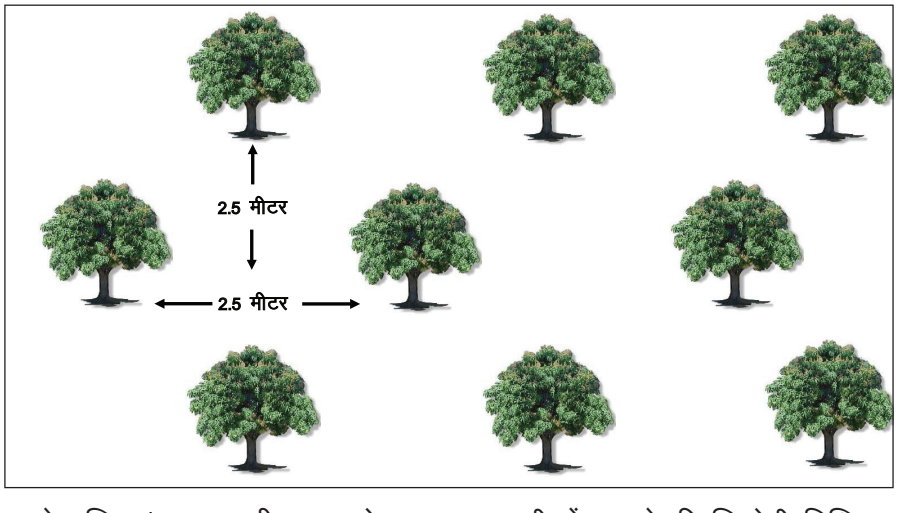

रेखाचित्र 1: आम्रपाली आम को सघन बागवानी में लगाने की तिकोनी विधि

2

कृषि विकास पर जलवायु-परिवर्तन का प्रभाव

डॉ. आर.एस. सेंगर एवं डॉ. रेशू चौधरी

वैश्विक तापन (ग्लोबल वार्मिंग) के चलते आज सबसे बड़ी चुनौती पर्यावरण एवं विकास में संतुलन को बनाकर चलने की है। औद्योगीकरण की शुरूआत से ही यह चिंता का विषय रहा है। पर्यावरण के संदर्भ में दुनिया भर की विकास परियोजनाओं पर प्रश्न चिह्न लगते रहे हैं। जलवायु परिवर्तन और कृषि पर इसके प्रभाव को लेकर एक बार फिर बहस तेज हुई है। इसकी वजह अंतरराष्ट्रीय खाद्य नीति शोध संस्थान (आई.एफ.पी.आर.आई.) की वह रिपोर्ट है जिसमें कहा गया है कि जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभाव से विश्व स्तर पर अनाज उत्पादन में भारी गिरावट आएगी। वर्ष 2050 तक गेहूँ की उत्पादकता में 50 प्रतिशत, चावल की उत्पादकता में 17 प्रतिशत और मक्के के उत्पादन में 6 प्रतिशत की कमी आएगी। परिणाम-स्वरूप इन कृषि उत्पादों की कीमतें आसमान छूने लगेंगी। रिपोर्ट के मुताबिक इन उत्पादों की कीमतों में 180 से 194 प्रतिशत वृद्धि होगी। इस दौरान बिना जलवायु परिवर्तन के भी गेहूँ की कीमत 40 प्रतिशत, चावल की कीमत 60 प्रतिशत, एवं मक्का की कीमत 30 प्रतिशत तक बढ़ेगी। जलवायु परिवर्तन के साथ इनकी कीमतों में क्रमश: 194, 121 एवं 153 प्रतिशत तक वृद्धि होगी।

जलवायु परिवर्तन से सबसे अधिक क्षति दक्षिण एशियाई देशों को होगी। भारत, बांगला देश, नेपाल तथा अफगानिस्तान में कृषि उत्पादकता में सर्वाधिक कमी आएगी। बाढ़, सूखा, असमय वर्षा, जलवायु परिवर्तन के परिणाम के रूप में सामने आएंगे या फिर कहिए कि आने लगे हैं। फिलहाल दुनिया में 2,400 लाख हेक्टेयर भूमि पर गेहूँ की खेती की जाती है जिसमें 90 लाख हेक्टेयर की कमी की आशंका हे। भारत में जलवायु परिवर्तन और खेती के संदर्भ में कई अध्ययन किए गए हैं। कृषि वैज्ञानिक एम.एस. स्वामीनाथन का आकलन है कि तापमान में 0.50 प्रतिशत की वृद्धि से पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश में गेहूँ के उत्पादन में दस प्रतिशत की कमी आएगी। एक अन्य अध्ययन में कहा गया है कि तापमान के बढ़कर 3.5 डिग्री हो जाने से कृषि से प्राप्त राजस्व में नौ से लेकर 25 प्रतिशत तक की कमी आ सकती है। वर्ष 2050 तक अनाज का उपभोग 50 प्रतिशत घट सकता है। इस आधार पर कैलोरी उपलब्धता में 15 प्रतिशत की गिरावट आएगी। बताया गया है कि जलवायु परिवर्तन का सबसे बुरा प्रभाव दक्षिण एशियाई देशों पर पड़ने वाला है। इससे इस क्षेत्र में रह रहे 1.6 अरब लोगों की खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ जाएगी। कुपोषण मिटाने के प्रयास अप्रभावी हो सकते हैं। शेष दुनिया भी इससे अछूती नहीं रहेगी। रिपोर्ट के अनुसार विश्व स्तर पर कुपोषण के शिकार बच्चों की संख्या में 2.5 करोड़ की बढ़ोतरी हो सकती है। पेरिस में हुए सम्मेलन में चौकाने वाली बात यह

है कि जलवायु परिवर्तन पर होने वाली इस बातचीत में कृषि शामिल नहीं है, जबकि इससे कृषि ही सबसे अधिक प्रभावित होने जा रही है और कृषि क्षेत्र ही ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन कम करने की दिशा में मददगार साबित हो सकता है।

जलवायु परिवर्तन पर होने वाली किसी भी बातचीत में कृषि को जोड़ा ही जाना चाहिए। परंतु मुख्य प्रश्न यह है कि जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव न्यूनतम कैसे किए जाएं। रिपोर्ट का आकलन है कि इसके लिए दक्षिण एशिया में कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए 1.5 अरब डॉलर के अतिरिक्त वार्षिक निवेश की जरूरत पड़ेगी। वैश्विक स्तर पर इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सात अरब डॉलर के निवेश की आवश्यकता होगी, जबकि खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.) पहले ही कह चुका है कि वर्ष 2050 में दुनिया की पूरी आबादी को भरपेट भोजन के लिए खाद्यान्न उत्पादन को 70 प्रतिशत बढ़ाने की आवश्यकता होगी। विकासशील देशों में निवेश को 50 प्रतिशत बढ़ाकर 83 अरब डॉलर करना होगा। खासकर दुनिया के दो विशालतम उपभोक्ता देश भारत तथा चीन को कम से कम 29 अरब डॉलर निवेश की आवश्यकता है। कुल मिलाकर जलवायु परिवर्तन से दुनिया के खासकर विकासशील देशों की खाद्य सुरक्षा खतरे मे पड़ने वाली है। इससे बचने के लिए भारी निवेश और पर्यावरण हितैषी प्रोद्योगिकी अपनानी होगी। जलवायु परिवर्तन एक ऐसा मसला है जिसके लिए निर्विवाद रूप से सबसे ज्यादा विकसित देश जिम्मेदार हैं। इस आधार पर पर्यावरण संतुलन बनाए रखने की पहली जिम्मेदारी भी विकसित देशों की ही है। इसकी भरपाई तभी संभव है जब विकसित देश सकल घरेलू उत्पादन का निश्चित हिस्सा जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को कम करने में खर्च करेंगे।

चढ़ता रहेगा पारा, गिरने लगेगा उत्पादन

ग्लोबल वार्मिंग के दुष्प्रभाव को कम करने की वैश्विक राजनीति पिछले दो दशकों से बढ़ रही है। यह मसला धरती के प्राकृतिक संसाधनों के कुशलतम उपयोग से जुडा है। पिछली सदी के दौरान विकसित देश भारी मात्रा में पर्यावरण में ग्रीन हाउस गैसों को उन्मुक्त कर रहे हैं। अब जबकि भारत जैसे विकासशील देशों की बारी है तो ग्लोबल वार्मिंग की यह समस्या सामने आ खड़ी हुई है। अत: वैश्विक शक्तियां ढेर सारे प्रतिबंधों को थोप रही हैं। विकासशील देशों की अपनी जरूरतें हैं। वर्ष 1992 से इस दिशा में कई प्रमुख समझौते हुए लेकिन देशों के अपने-अपने हितों के चलते वे सफल नहीं हो सके।

वैश्विक तापमान में वृद्धि के लिए ग्लोबल वार्मिंग और अल-निन्यो जैसी प्रणालियां जिम्मेदार हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि वर्ष 2050 तक दुनिया की एक चौथाई जातियाँ विलुप्ति के कगार पर पहुँच जाएंगी और फसलों की पैदावार 30 फीसदी तक कम हो जाएगी। 15 में 14 सबसे गर्म साल 20वीं सदीं में दर्ज हुए हैं। 0.1 से 0.4 डिग्री सेल्सियस तक सामान्य से अधिक पारा पहुँच चुका है। पिछले 18 साल से वैश्विक तापमान के स्थिर होने से ग्लोबल वार्मिंग पर लगी रोक हटती नजर आ रही है। मार्च 2015 में वैश्विक कार्बन उत्सर्जन का पहली बार 40 पी.पी.एम. का आकड़ा लांघना और समुद्रों के द्वारा अतिरिक्त ऊष्मा को सोखने की गति में कमी आना इसकी मुख्य वजह बताई जा रही है। जलवायु परिवर्तन से तापमान बढ़ने की स्थिति में मत्स्य उत्पादन पर भी प्रभाव पड़ेगा जिससे इसके 40 फीसदी तक घटने के आसार है।

कृषि जलवायु परिवर्तन के प्रति अधिक संवेदनशील है। उच्च तापमान वांछित फसलों की पैदावार को कम करता है जबकि घास-पात एवं नाशक कीटों को प्रोत्साहित करता है। वर्षा के स्वरूप में परिवर्तन के कारण अल्पकालीन फसलों की पैदावार में न्यूनता

एवं दीर्घकालीन फसलों में गिरावट की संभावना बढ़ जाती है। हालांकि विश्व के कुछ क्षेत्रों में कुछ फसलों में लाभ हो सकता है, लेकिन कृषि पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव अधिकतर वैश्विक खाद्य सुरक्षा पर भयंकर संकट उत्पन्न करता है। विकासशील देशों में जनसंख्या और खाद्य-असुरक्षा पहले से ही अति संवेदनशील है जिसके जलवायु-परिवर्तन के कारण और अधिक प्रभावित होने की संभावना है। आज भी विश्व के 75 प्रतिशत गरीब ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं। भारत समेत पूरी दुनिया में पूँजीवाद का प्रभाव बढ़ रहा है। अपने देश में भी अरबपतियों की संख्या बढ़ रही है लेकिन किसान व कृषि-कर्म बेहद खस्ता हालत में हैं। अपने आस-पास के क्षेत्र में सर्वेक्षण करके आपको पता चल जाएगा कि कितने लोग किसानी कर रहे हैं या करना चाहते हैं। परंतु इस सब के बीच सबसे बड़ी समस्या यह है कि जब किसान उगाएगा ही नहीं तो लोग खाएंगे क्या? एक बड़ी आबादी की खाद्यान्न की जरूरतें पूरी होंगी कि नहीं। अब खेती-किसानी पर ग्लोबल वार्मिंग का खतरा मंडराने लगा है। यदि समय रहते हम लोग नहीं चेते तो उत्पादकता भी प्रभावित होगी। देश में करीब 85 फीसदी खेती करने वाले छोटे किसान हैं। भारत में 13.78 करोड़ कृषि भूमि घारकों में से लगभग 11.71 करोड़ छोटे या मझौले स्तर के किसान हैं। भारत के आर्थिक, औद्योगिक व खाद्यान्न संबंधी लक्ष्यों के पूरा करने में इस विशाल समुदाय का योगदान अहम है। हमारी कृषि का भविष्य छोटे किसानों के हाथों में ही है। फिलहाल 52 फीसदी आबादी कृषि पर निर्भर है। आजादी के समय कृषि का जी.डी.पी. में योगदान 52 फीसदी तक था, जो अब घटकर 14.5 फीसदी रह गया है। आज 52 फीसदी आबादी का मतलब वे 60 करोड लोग हैं जो कृषि कार्य में हैं। जहाँ इसके लिए सरकार नें 12वीं पंचवर्षीय योजना में 1.5 लाख करोड़ रुपए का प्रावधान किया, वहीं उद्योगों को 42 लाख करोड़ रुपए की कर-छूट दी गई है यदि यह राशि उद्योग से वसूल कर ग्रामीण क्षेत्रों के विकास तथा खेती-किसानी में लगे तो कृषि एक लाभकारी व्यवसाय साबित होगी।

नदियों के किनारे में कद्दूवर्गीय एवं अन्य सब्जियों का विपुल उत्पादन होता है और यही कारण है कि मई-जून की भीषण गर्मी में हमें तरबूज जैसा शीतल फल खाने को मिलता है जो हमारी प्यास को शांत करता है। किंतु कल्पना उस स्थिति की कीजिए जब कि नदियों में जल प्रवाह कम हो जाएगा । इससे नदियों की तलहटी में होने वाले उत्पादन से हाथ धो बैठेंगे। यदि हमने आज इस बारे में गंभीरता से नहीं सोचा तो वर्ष 2050 की भयावह त्रासदी के लिए तैयार रहना होगा। यह एक ऐसी आपदा होगी, जिसका प्रबंधन कर पाने में हम पूर्णतया असफल रहेंगे।

वर्षा की अनिश्चितता के कारण हमारी वन संपदा भी समाप्त होने के कगार पर होगी। जलवायु परिवर्तन के संकेत अभी से हमें मिलने लगे हैं, जिनमें रेगिस्तानी क्षेत्रों में बाढ़, मुंबई में बादलों का फटना, पर्वतीय क्षेत्रो में बादल फटने से विनाश, तूफान, सुनामी, भूकंप जैसी स्थितियां हमारे सामने आ चुकी हैं। गरमाती हुई घरती, पिघलते हुए ग्लेशियर एवं ओजोन का घटना एक महाविनाश की ओर संकेत कर रहे हैं। हमने उनसे कोई सबक नहीं लिया और न ही कभी गंभीरता से यह सोचा है कि यह सब क्यों हो रहा है।

यह जल का ही करिश्मा है कि शहरों में लोग गृह वाटिकाओं, छत/छज्जों पर गमलों और लकडी के खोखे में साग सब्जियां व फुलवारी उगा रहे हैं तथा ग्रामीण क्षेत्रों में घर के पिछवाड़े में यह क्रियाकलाप अपनाकर हम सघन प्रयास कर अच्छा पोषण पाने की जुगत कर रहे हैं। किंतु जब जल ही सीमित हो जाएगा तो हम क्या कर पाएंगे? इस बारे में सभी स्तरों पर गंभीर चिंतन एवं चर्चा की आवश्यकता है। एक ठोस कार्यक्रम को ईमानदारी से लागू करने का

संकल्प लेना होगा ताकि आने वाली आपदा से बचा जा सके।

जहाँ तक कार्बन डाईऑक्साइड की मात्रा बढ़ने का प्रश्न है, वैज्ञानिकों का मत है कि वायुमंडल में इसकी मात्रा लगातार बढ़ती जा रही है जिसका प्रमुख कारण विभिन्न प्रकार की ईंधनों का जलाया जाना है। वायुमंडल में कार्बन डाईऑक्साइड की बढ़ी असाधारण मात्रा से सूर्य की गर्मी का एक हिस्सा पृथ्वी से परावर्तित होकर बाहर नहीं निकल पाता क्योंकि यह आवरण के रूप में उनके लिए अवरोधक का कार्य करता है। इसके फलस्वरूप एक ऐसी प्रक्रिया जिसे 'पौधाघर प्रभाव' (ग्रीन हाउस इफेक्ट) कहते हैं, प्रारंभ हो जाती है। हालांकि इस गैस के अलावा कुछ अन्य गैसें भी इस प्रक्रिया को उत्पन्न करती हैं। लेकिन इन गैसों का संयुक्त प्रभाव कार्बन डाईऑक्साइड से काफी कम अथवा लगभग इसके बराबर होता है। यदि वर्तमान दर से ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन इसी प्रकार जारी रहा तो ऐसा प्रतीत होता है कि वर्ष 2050 तक पृथ्वी का तापमान 1.5 से 4.5 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ जाएगा। जहाँ तक ओजोन परत के क्षरण का प्रश्न है, वैज्ञानिकों का मत है कि मानवजन्य कारणों से वायुमंडल में अधिक मात्रा में क्लोरोफ्लुओरो कार्बन जैसे फ्रेओन गैस तथा कुछ अन्य गैसों के अत्यधिक मात्रा में उत्सर्जन से इस परत का बड़ी तेजी से क्षरण हो रहा है। इस फ्रेओन गैस की पहचान ओजोन परत को नुकसान पहुँचाने वाली प्रमुख गैस के रूप में की गई है। वर्तमान में वातानुकूलन और प्रशीतन मे इसका व्यापक रूप से प्रयोग किया जा रहा है। ओजोन परत सूर्य से उत्पन्न पराबैंगनी विकरणों को अवशोषित करती है परंतु इसके क्षीण पड़ जाने से पृथ्वी पर पराबैंगनी विकिरण की मात्रा लगातार बढ़ती जा रही है। उपग्रहों से प्राप्त प्रारंभिक आकड़ों से पता चलता है कि वर्ष 1998 में ओजोन परत में उत्पन्न छेद 2.73 करोड़ वर्ग किलोमीटर के आकार तक पहुँच चुका था जो वर्ष 1996 में लगभग 1.0 करोड़ किलोमीटर आकार तक का आंका गया था। पृथ्वी के तापमान में निरंतर वृद्धि से विभिन्न प्रकार के खतरे जैसे भयंकर तूफान, पहाड़ों पर ग्लेशियरों का पिघलना इत्यादि उत्पन्न हो सकते हैं तथा उनका प्रभाव विनाशकारी होता है क्योंकि इनके कारण समुद्र की सतह ऊपर उठ सकती है और तूफानों की प्रचंडता और भी बढ़ सकती है। ग्रीन हाउस प्रभाव के कारण वर्षा, हिमपात और जमीन में नमी की मात्रा के संतुलन पर भी असर पड़ता है। इसका एक पक्ष यह भी है कि इससे कुछ क्षेत्रों को तो अवश्य लाभ होता है लेकिन अनुपातन अन्य क्षेत्रों में जलवायु एवं विशेष रूप से कृषि पर बुरा प्रभाव पड़ता है। ज्ञात है कि गर्म मौसम और कार्बन डाइऑक्साइड की अधिकता में कुछ पेड़-पौधे तेजी से विकसित होते हैं एवं पानी का भी अधिक से अधिक कारगर उपयोग करते हैं। परंतु इस संदर्भ में जो भी निष्कर्ष निकाले गए हैं वे सभी प्रयोगशालाओं की स्थितियों में किए गए परीक्षणों पर ही आधारित है। इसके अतिरिक्त इन अनुमानों में खराब जलवायु सूखे एवं लू के दुष्प्रभावों, कीड़े-मकोड़ो के प्रकोपों एवं फसलों के पौष्टिक गुणों में आने वाली विभिन्नताओं की अनदेखी की गई है।

ग्लोबल वार्मिंग का शाब्दिक अर्थ धरती के तापमान में वृद्धि है। इसके प्रभाव से ग्लेशियर पिघल रहे हैं, पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है एवं कहा जा रहा है कि नदियाँ सूखकर नाला बन जाएंगी तथा समुद्री जल स्तर में वृद्धि के कारण तटवर्ती शहर जलमग्न हो जाएंगे। फलस्वरूप आबादी कहीं अन्य जगह स्थानांतरित करनी पड़ेगी। वायुमंडल के तापमान में मामूली परिवर्तन से जलवायु में जो बदलाव आएंगे उनसे पारिस्थितिकीय संतुलन में भारी गड़बडी उत्पन्न हो सकती है। तापमान वृद्धि से आर्कटिक समुद्र में बर्फ पिघलने से नए सीमा-विवाद पैदा हो सकते हैं और ऐन्टार्कटिक के संसाधनों तक पहुँच आसान हो जाने से नए मतभेद उत्पन्न हो सकते हैं। समुद्र की सतह में अत्यधिक वृद्धि

वर्तमान में सबसे गंभीर विषय है। इससे दुनिया के कई तटवर्ती और निचले इलाके जैसे बांग्लादेश और मालदीव समुद्र में जलमग्न हो सकते हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार बीसवीं सदी का आखिरी दशक सर्वाधिक गर्म दशक, तथा वर्ष 1998 सर्वाधिक गर्म वर्ष रहा। ओजोन परत क्षरण, ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन एवं पृथ्वी के तीव्रता से बढ़ते तापमान का ज्ञान वैज्ञानिक जगत को तो है, परंतु सामान्य आद्मी इसकी गंभीरता का आकलन नहीं कर पा रहा है। पर्यावरण प्रदूषण तथा इन परिस्थितियों से जुड़े मुद्दे विशेष रूप से अमेरिका, यूरोप एवं अन्य विकसित देशों में तो चर्चा के विषय बनते हैं, परंतु भारत जैसे तमाम विकासशील देशों की कार्यसूची पर अभी तक इसे गंभीरता से नहीं लिया जा रहा है।

ओजोन वैज्ञानिक जगत के लिए नई नहीं है। यह हमारे वायुमंडल में आंशिक रूप से विद्यमान है तथा वायुमंडल के दो भागों में पाई जाती है। 10 प्रतिशत ओजोन उस भाग में पाई जाती है जिसकी शुरूआत पृथ्वी के घरातल से 8-18 किमी ऊपर होते हुए 30 किमी तक रहती है और इसी भाग को स्ट्रैटोस्फियर कहते हैं तथा इसी भाग के ओजोन को आमतौर पर ओजोन परत कहा जाता है। शेष ओजोन का 10 प्रतिशत अंश वायुमंडल के निचले भाग में होता है जिसे ट्रोपोस्फियर कहा जाता है तथा जिसकी रचना वाहनजनित प्रदूषकों से होती है। इन दो भागों में पाए जाने वाले ओजोन अणु रासायनिक तौर पर तो समान होते हैं परंतु फिर भी मनुष्यों एवं अन्य जीवित प्राणियों पर इनके प्रभाव अलग होते हैं। स्ट्रैटोस्फियर में मौजूद ओजोन ही महत्वपूर्ण है क्योंकि यह जैविक रूप से हानिकारक पराबैंगनी (अल्ट्रवायलेट) किरणों को सोख कर उनकी कम मात्रा को ही पृथ्वी पर पहुंचने देती है। इन किरणों का ओजोन द्वारा अवशोषण ही तापमान को कम करने का उचित माध्यम है। इस प्रकार ओजोन, पृथ्वी वायुमंडल के तापमान की रचना में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। ओजोन के इस क्षरण की क्रिया को यदि अलग रख दिया जाए तो सूर्य की मारक पराबैंगनी किरणें वायुमंडल में प्रवेश कर पृथ्वी के जीवधारियों के लिए घातक साबित हो सकती हैं। ओजोन क्षरण के कुछ प्रतिकूल प्रभाव जैसे त्वचा-संबंधी बीमारियां, मोतियाबिंद, प्रतिरक्षा क्षमता (इम्यूनिटी) में कमी, प्लास्टिक पर कुप्रभाव, फसलों को नुकसान, मानव खाद्य पदार्थों में कमी तथा समुद्र के तल पर उपजे फाइटोप्लैक्ट्रान की हानि आदि हैं जिसके फलस्वरूप संपूर्ण खाद्य शृंखला में असंतुलन इत्यादि प्रमुख है।

मानव शरीर को काफी कम मात्रा में पराबैंगनी-बी भी आवश्यक होता है क्योंकि विटामिन-डी के संश्लेषण में यह एक उत्प्रेरक की भांति कार्य करता है। परंतु अधिकता की स्थिति में यह खतरनाक होता है। लंबी अवधि तक पराबैंगनी किरणों के अवशोषण से त्वचा में कैंसर जैसी बीमारियां हो जाती हैं। जिन व्यक्तियों की त्वचा का रंग साफ होता है, उनमें प्रभाव पड़ता है। ज्यादा देर तक इनके संपर्क में रहने के कारण आंखों के आस-पास की त्वचा लाल होकर झुलस जाती है जिसे फोटोक्रिरैटीटीस कहते हैं। मोतियाबिंद जो कि एक गंभीर समस्या है उसका कारण भी यही है कि इसकी रोकथाम न करने पर व्यक्ति स्थायी रूप से अंधा हो जाता है। पराबैंगनी-बी, त्वचा के प्रतिरोधक तंत्र को कमजोर बना देती है और त्वचा ही सबसे पहले प्रतिकारकों के संपर्क में आती है, जो बाहरी संक्रमण के कारण उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार ये विनाशकारी किरणें विभिन्न बीमारियों का कारण बनती हैं।

ओजोन-क्षरण कारक

वर्तमान में 96 ओजोन क्षरण कारकों को मॉन्ट्रियल विधियों द्वारा नियंत्रित किया जा रहा है। उनमें से महत्वपूर्ण ओजोन-क्षरण कारक निम्न हैं :

हैलो कार्बन : सी.एफ.सी. (क्लोरोफ्लुओरो कार्बन) की खोज 1828 में हुई थी और इसे अद्‌भुत गैस कहा जाता था क्योंकि यह काफी समय तक रहने वाली, अविषैली होती है। यह असंक्षारक, और अज्वलनशील बहुमुखी गैस है। 1960 से अब तक इसका उपयोग रेफ्रीजरेटर, एयर कंडीशनर, स्प्रे-कैन, फोम और कई दूसरे क्षेत्रो में होता है। सी.एफ.सी. टूटने के लिए 50 से 1700 वर्ष लगते हैं, जबकी हैलोजेनों की कायविधि लगभग 42 साल है।

कार्बन ट्रेटा क्लोराइड : इसका उपयोग विलायक के रूप में करते हैं और इसके विघटन की आयु 42 साल है।

मेथिल कार्बन : इसे भी विलायक के रूप में उपयोग करते हैं और इसके विखंडन के लिए 5.4 वर्ष लगते हैं।

हाइड्रोब्रोमोफ्लुओरो कार्बन : इसका उपयोग पहले ओजोन क्षरण कारकों को रोकने में किया गया था। परंतु इसका प्रतिकूल प्रभाव भी पड़ता है।

हाइड्रोक्लोरोफ्लुओरो कार्बन : इसे सबसे पहले सी.एफ.सी. के विकल्प के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। यह सी.एफ.सी. से कम हनिकारक होता है फिर भी यह ओजोन क्षरण कारक के रूप में कार्य करता है। वायुमंडल में इनकी आयु 1.4 से 19.5 वर्ष तक है।

मेथिल ब्रोमाइड : इनकी ज्यादातर खपत दुनिया भर के तकनीकी देशों में होती है। इनकी मात्रा 70,000 टन है और इसके खंडन की अवधि लगभग सात वर्ष होती है।

कुछ ग्रीन हाउस गैसें भी इसके क्षरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वायुमंडल में नाइट्रोजन की भागीदारी लगभग 79%, ऑक्सीजन लगभग 20%, कार्बन डाई-ऑक्साइड 3% तथा अन्य गैसें हैं। औद्‌योगीकरण, वाहन प्रदूषण तथा अन्य कारणों से कार्बन डाई-ऑक्साइड की मात्रा वायुमंडल में बढ़ रही है। जापान सरकार की एक रिपोर्ट के अनुसार अमेरिका सर्वाधिक 22.2%, चीन 14%, रूस 6.6%, जापान 4.96%, भारत 4.2%, जर्मनी 3.6%, इंग्लैंड 2.3% तथा अन्य राष्ट्र 42.6% कार्बन डाई-ऑक्साइड का उत्सर्जन करते हैं। इसके अतिरिक्त मेथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, क्लोरोफ्लुओरो कार्बन प्रमुख तौर पर ग्रीन हाउस गैसों के नाम से जाने जाते हैं। इन ग्रीन हाउस गैसों की वायुमंडल में सांद्रता बढ़ने पर एक आवरण का निर्माण हो जाता है जिसके फलस्वरूप पृथ्वी के तापमान में वृद्‌धि हो जाती है। वायुमंडल में मेथेन 1%, नाइट्रस ऑक्साइड 0.25% तथा क्लोरोफ्लुओरो कार्बन 50% वृद्‌धि की दर प्रति वर्ष आंकी गई है।

ओजोन परत के क्षरण को रोकने वाले कारक

कई विकासशील देशों जैसे चीन, भारत, ब्राजील आदि ने ऐसे उत्पादनों का निर्माण किया है जो कि ओजोन परत की रक्षा करने में सहायक होते हैं। सी.एफ.सी. के विकल्प के रूप में एच.एफ.सी 134, हाइड्रोकार्बन, एच.एफ.सी. ब्लेंड्स, एच.सी. एफ.सी 22 और अमोनिया का उपयोग विकल्प के रूप में रेफ्रिजरेशन एवं वातानुकूलन इकाइयों में किया जाता है। एच.एफ.सी., डाई-मेथिल ईथर और पर फ्लोरल ईथर, ओजोन के लिए लाभदायक होते हैं। कुछ उत्पादन जैसे मैन्यू पंप, स्प्रेयर और सूखे पाउडर इन्हेलर इत्यादि हैं। संक्षेप में कह सकते हैं कि – "अपनी धरती को बचाओ, अपने आप को बचाओ या ओजोन की परतों को बचाओ"।

वैज्ञानिकों ने इस सत्य को जाना कि यदि ओजोन क्षरण कारकों को हटा दिया जाए तो हो सकता है कि ओजोन परत की रक्षा की संभावना फिर बन जाए। इसलिए जनसामान्य तक इनकी महत्ता एवं जानकारी पहुँचाई जानी चाहिए जिससे हम इस जीवनदायी परत की रक्षा कर मानव एवं अन्य जीवधारियों का कल्याण कर सकें।

3

कृषि-विज्ञान एवं आधुनिक प्रौद्योगिकी का खाद्यान्न उत्पादन में योगदान

डॉ. वीरेंद्र कुमार

आज विश्व की आबादी का एक बड़ा हिस्सा खाद्य असुरक्षा जैसी गम्भीर समस्या से जूझ रहा है। यह समस्या स्वतः ही विभिन्न समस्याओं को जन्म देती है। भूखमरी के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जिंक, आयरन, विटामिन ए और आयोडीन की कमी से भी विश्व आबादी का बड़ा भाग ग्रसित हो रहा है। दूसरी तरफ कृषि की रीढ़ माने जाने वाले प्राकृतिक संसाधनों जैसे मृदा, जल और वायु की मात्रा और गुणवत्ता में लगातार गिरावट होती जा रही है। खाद्य सुरक्षा, राष्ट्रीय सुरक्षा का अभिन्न अंग है। देश की तेजी से बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्यान्न की आत्मनिर्भरता सुनिश्चित करना नितांत आवश्यक है, जिससे कोई भी भारतीय भूखे पेट न सो सके, साथ ही खाद्यान्न के क्षेत्र में भारत दुनिया को नेतृत्व कर सके। अतः भविष्य में खाद्यान्न आपूर्ति के लिए व्यापक तौर पर असरदार कार्य करने की आवश्यकता है।

संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन की रिर्पोट में कहा जा चुका है कि वर्ष 2050 तक दुनिया की कुल आबादी 9.1 अरब के आंकड़े तक पहुँच सकती है। अभी विश्व की कुल जनसंख्या लगभग 6.8 अरब है। जनसंख्या बढ़ने के साथ ही खाद्य पदार्थो की मांग लगभग दुगुनी हो जाएगी। यही नहीं, संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुमान के मुताबिक जलवायु परिवर्तन, योग्य कृषि भूमि की कमी, जल-संकट आदि के चलते 2050 तक खाद्यान्न का उत्पादन कम होने की संभावना है। एक तरफ जनसंख्या बढ़ रही है, दूसरी तरफ कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल भी घट रहा है। भारत में भी उद्योगों के विकास और आवासीय परियोजनाओं के कारण पिछले दो दशक में कृषि योग्य भूमि लगभग 2 प्रतिशत तक घट गई है।

खाद्यान्न उत्पादन की दुर्दशा को देखते हुए प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि के विकास को प्रमुखता दी गई। देश के प्रथम प्रधान मंत्री, पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कृषि क्षेत्र की प्रगति पर विशेष जोर देने को कहा, जिससे भारत में उच्च कोटि का कृषि अनुसंधान, कृषि प्रसार व कृषि शिक्षा का ढांचा स्थापित किया जा सका। बिना किसी देरी के कृषि क्षेत्र के चहुँमुखी विकास के लिए योजनाएं बनाई गई। सन् 1958 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली को 'मानद विश्वविद्यालय' का दर्जा दिया गया और वहाँ अमेरिका के लैंड ग्रान्ड प्रणाली के तहत कृषि शिक्षा का प्रावधान किया गया। इसी के साथ कृषि अनुसंधान व कृषि प्रसार को भी नई दिशा दी गई। देश में 1960-1970 का समय एक चमत्कारी दशक के रूप में आया। इस दशक में कृषि क्षेत्र की तरक्की के लिए व्यापक स्तर पर अनेक कार्यक्रम बनाए गए। जिनमें से प्रमुख इस प्रकार हैं :

सन् 1960-1961 में उत्तराखंड के पंतनगर, जिला नैनीताल में उच्च स्तर का प्रथम कृषि

विश्वविद्यालय स्थापित किया गया, जिसका कैम्पस लगभग सोलह हजार एकड़ भूमि में फैला हुआ है। इस विश्वविद्यालय में प्रमुख रूप से कृषि शिक्षा, कृषि अनुसंधान और कृषि प्रसार से संबंधित कार्यक्रम बनाए गए। इसी के साथ देश के हर राज्य में कम से कम एक कृषि विश्वविद्यालय खोलने का मार्ग भी प्रशस्त हुआ। इसका पूरा श्रेय देश के प्रथम प्रधान मंत्री जवाहर लाल नेहरू को जाता है, जिन्होंने कृषि और ग्रामीण भारत के विकास एवं प्रगति की नींव रखी।

वर्ष 1960-65 के दौरान देश में खाद्यान्न उत्पादन निम्न स्तर पर चल रहा था। इस समय जो विदेशी गेहूँ भारत में मंगाया गया, वह बहुत ही निम्न गुणवत्ता वाला था। इसी समय देश के तत्कालीन प्रधान मंत्री लाल बहादुर शास्त्री जी ने 'जय जवान जय किसान' का नारा दिया। जिससे इस कठिन समय में खाद्यान्न उत्पादन को बढ़ावा मिला। इस समय मेक्सिको से गेहूँ की अधिक उपज देने वाली बौनी किस्में देश में अनुसंधान हेतु आ चुकी थीं। गेहूँ की उन बौनी किस्मों का भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के अनुसंधान फार्म पर परीक्षण व आंकलन भी किया गया। इसी के साथ भारत में खाद्य सुरक्षा व खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता के आसार नजर आने लगे थे। वर्ष 1962-63 के दौरान विश्वविख्यात कृषि वैज्ञानिक व नोबेल पुरस्कार विजेता, नार्मन ई. बारलॉग ने मेक्सिकन गेहूँ की बौनी किस्मों पर भारतीय वैज्ञानिकों के साथ मिलकर विभिन्न अनुसंधान केंद्रों पर परीक्षण किए। भारतीय वैज्ञानिकों के अथक प्रयासों से गेहूं की अधिक उपज देने वाली 'कल्याण सोना' एवं 'सोनालिका' नामक किस्में विकसित कीं, जो देश के कई प्रांतों में काफी प्रचलित रहीं। इस प्रकार देशी गेहूं की अपेक्षा दोगुनी उपज प्राप्त हुई। अतः यह निर्णय लिया गया कि अतिशीघ्र किसानों को इन बौनी किस्मों का बीज उपलब्ध कराया जाए। इसके अलावा किसानों के लिए खेती की प्रौद्योगिकी भी विकसित की जाए तथा कृषि प्रसार के माध्यम से किसानों तक शीघ्र ही यह तकनीक पहुंचायी जाए। देश के किसानों ने इस गेंहू को बड़े जोर-शोर से अपनाया। इस युग परिवर्तन में पूसा संस्थान का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

इस दौरान विश्व-प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक व राष्ट्रीय किसान आयोग के पूर्व अध्यक्ष डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन, हरित क्रांति अभियान के मार्गदर्शक बने। पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय तथा पंजाब कृषि विश्वविद्यालय ने भी बौने गेहूँ पर अनुसंधान कार्य किए तथा अनेक किस्में विकसित कीं। नवीनतम तकनीक व अधिक उपज देने वाली किस्मों के आने से गेहूँ का उत्पादन वर्ष 1967-68 में बढ़कर 27.5 मिलियन टन हो गया। इसके पीछे गेहूँ की खेती करने वाले किसानों के प्रयासों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही। इसी के साथ देश में खाद्यान्न उत्पादन के संबंध में आत्मनिर्भरता का संकेत नजर आया। इसी दशक में चावल की भी अधिक उपज देने वाली किस्में विकसित की गईं जिनके कारण खाद्यान्न उत्पादन में बढ़ोतरी हुई। खाद्यान्न के क्षेत्र में आई इस लहर से भारत सरकार ने देश में हरित क्रांति के आगमन की घोषणा की। देश की तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने पूसा संस्थान में स्वयं पधार कर हरित क्रान्ति डाक टिकट का शुभारंभ किया। डॉ. एम.एस स्वामीनाथन भारत में हरित क्रांति के जनक बने। हरित क्रांति के महानायक नारमन ई. बारलॉग का 95 वर्ष की आयु में 11 सिंतबर, 2009 को निधन हो गया। उन्हें वर्ष 1970 में विश्व शान्ति के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

हरित क्रांति की उपलब्धि के साथ-साथ अन्य मुख्य फसलों पर भी अनुसंधान ने जोर पकड़ा। इस संबंध में अखिल भारतीय समेकित अनुसंधान परियोजनांए शुरू की गईं। इस तरह की पहली परियोजना मक्का

की फसल पर शुरू की गई। तत्पश्चात् धान, गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा, गन्ना, मोटे अनाज, दलहली व तिलहनी फसलों पर भी ऐसी परियोजनाएं शुरू करने की रूपरेखा बनी। इसी दौरान रबी, मक्का की खेती पर अनुसंधान कर उसे सम्पूर्ण उत्तरी भारत में अपनाने की सिफारिश की गई। इसी दशक के मध्य में बरानी व शुष्क क्षेत्रों के विकास पर भी विशेष जोर दिया गया। इन क्षेत्रों के लिए सूखा सहन करने वाली व गुणवत्ता से भरपुर धान्य फसलों की अधिक उपज देने वाली किस्मों को विकसित करने तथा सर्वोत्तम सस्य तकनीक खोजने पर विशेष जोर दिया गया। इसी दशक के अंतिम चरण में धान-गेहूँ फसल प्रणाली का शुभारंभ हुआ। उत्तर भारत के सिंचित क्षेत्रों में इसे अपनाने की सस्तुंति की गई। आज इस फसल पद्धति के अंतर्गत लगभग 11 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र है। जो प्रमुख रूप से गंगा-यमुना के उपजाऊ क्षेत्रों में फैला हुआ है। हमारे देश में कुल खाद्यान्न उत्पादन का सबसे बड़ा हिस्सा इसी फसल प्रणाली से आता है। किसानों के खेतों पर प्रति इकाई क्षेत्र उत्पादन में निरंतर वृद्धि देखी गई, जिसके कारण पंजाब, हरियाणा व पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसानों में खुशहाली की लहर दौड़ गई। इसके साथ ही संतोषजनक कृषि उत्पादन बढ़ने से देश की आर्थिक दशा में सुधार हुआ। ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में रहन-सहन के स्तर में भी सुधार हुआ एवं कृषि के साथ-साथ अन्य व्यवसाय भी पनपने लगे।

इसी दौरान संपूर्ण भारत में कृषि विज्ञान के प्रमुख विषयों पर स्नातक व स्नातकोत्तर शिक्षा देने, कृषि प्रसार को बढ़ावा देने के लिए कृषि अनुसंधान परिषद् का पुर्नगठन किया गया। डॉ. बी.पी. पाल को नवगठित परिषद् का प्रथम महानिदेशक नियुक्त किया गया। साथ ही कृषि से संबंधित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए योजनाएं बनाई गई। नए-नए, कृषि विश्वविद्यालय खोले जाने की अनुशंसा की गई। कृषि प्रसार को और अधिक प्रभावशाली बनाने की रूपरेखा भी इसी दशक के अंत में रखी गई जिसके फलस्वरूप देश के हर जिले में एक कृषि विज्ञान केंद्र खोलने की संकल्पना की गई। इस प्रकार वर्ष 1960 का दशक कृषि विकास का स्वर्णयुग कहा जा सकता है।

सन् 1980 के दशक तक खाद्यान्न उत्पादन में उत्तरोत्तर वृद्धि देखी गई। इसका मुख्य कारण अधिक उपज देने वाली बौनी किस्में, संतुलित उर्वरक प्रबंधन, सिंचाई प्रबंधन, कीट एवं रोगों के उचित प्रबंधन हेतु रासायनिकों का उचित उपयोग थे। देश की निरंतर बढ़ती जनसंख्या के अनुपात में खाद्यान्नों का भी उत्पादन बढ़ता जा रहा था। चारों तरफ कृषि और कृषि से संबंधित व्यवसायों का भी चहुमुखी विकास हो रहा था। वर्ष 1985 के अंत तक धान का 86 मिलियन टन और गेहूँ का 75 मिलियन टन उत्पादन हो रहा था। इस समय कुल खाद्यान्न उत्पादन लगभग 200 मिलियन टन था। भारतीय खाद्य निगम के गोदामों में पर्याप्त खाद्यान्न उपलब्ध था, जो प्राकृतिक आपदाओं जैसे सूखा, बाढ, चक्रवात इत्यादि से निपटने के लिए पर्याप्त था। इसके अलावा देश का दुग्ध व दुग्ध पदार्थ, मछली उत्पादन, मांस व फल और सब्जियों के उत्पादन में भी अभूतपूर्व सफलता मिली। इन सबके पीछे प्राकृतिक संसाधनों जैसे वायु, जल, मृदा, भूमिगत जल की गुणवत्ता का भी विशेष योगदान था। इसी अवधि के दौरान उत्पादन में धीरे-धीरे गिरावट आती रही। धान-गेहूँ फसल प्रणाली के अंतर्गत मृदा में कार्बनिक कार्बन की कमी और मृदा उत्पादकता में कमी आने लगी थी। रासायनिक उर्वरकों के अनुचित, असंतुलित और अंधाधुंध प्रयोग से मृदा में कुछ द्वितीय व सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के संकेत मिलने लगे थे। किसानों ने फसल की उपज बढ़ाने के लिए रासायनिक उर्वरकों मुख्यतः नाईट्रोजन उर्वरकों का अधिक प्रयोग करना शुरू कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप खेती में

रोगों, कीटों और खरपतवारों का प्रकोप बढ़ने लगा। कीट-पतंगे और खरपतवार रासायनिक दवाइयों के प्रतिरोधी हो गए। जल और भूपृष्ठ जल प्रदूषित होने लगा था। इस तरह पर्यावरण प्रदूषण की समस्या पैदा हो गई। यह समस्या स्वतः ही विभिन्न समस्याओं को जन्म देने लगी। इससे कृषि वैज्ञानिक विशेषज्ञ और किसान चिंतित होने लगे थे। इस प्रकार पर्यावरण प्रदूषण को कम करने के लिए संधारणीय खेती पर जोर दिया जाने लगा। संधारणीय खेती पर देश के विभिन्न अनुसंधान केंद्रों में शीघ्र ही अनुसंधान प्रारंभ हो गए। संधारणीय खेती को निम्न प्रकार परिभाषित किया गया "प्राकृतिक संसाधनों का उचित उपयोग करके फसलोत्पादन में निरंतर वृद्धि करके खाद्य पदार्थो, दूध, चारा, ईंधन, कपड़ा आदि आवश्यकताओं की आपूर्ति बिना पर्यावरण को नुकसान पहुँचाए करना तथा प्राकृतिक संसाधनों को भविष्य के लिए संरक्षित रखना संधारणीय खेती कहलाता है।"

1980 के दशक में जब देश का खाद्य तेल आयात चितांजनक स्तर पर पहुंच गया तब भूतपूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने स्वयं हस्तक्षेप करके तिलहन पर तकनीकी मिशन शुरू कराया। इसके अंतर्गत सिंचित क्षेत्रों में तिलहनों की खेती को प्राथमिकता दी गई। कई उन्नत/संकर तिलहन किस्मों का विकास किया गया जिसके परिणामस्वरूप तिहलन उत्पादन में बढ़ोतरी दर्ज की गई। वर्ष 1986-87 में तिलहन उत्पादन 11 मिलियन टन था, जो 1994-1995 में बढ़कर 22 मिलियन टन तक पहुँच गया। इस प्रकार खाद्य तेलों के मामले में भारत ने कुछ हद तक आत्मनिर्भरता हासिल कर ली। उपउत्पाद खली आदि के निर्यात से विदेशी मुद्रा की कमाई भी होने लगी। इसे पीली क्रांति के नाम से जाना गया। देश में तिलहनों की खेती छोटे और सीमांत किसानों द्वारा की जाती है। तिलहनों की बोआई, कटाई, पेराई वर्ष भर चलती रहती है जिसमें गांव के अकुशल श्रमिकों को रोजगार मिलता रहता है। इस प्रकार लोगों को पौष्टिक खाद्य तेल भी मिलता रहता है। साथ ही उदारीकरण की नीतियों और आसियान देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौतों के कारण भारत को सस्ते में पामोलिव तेल मिलने लगा तो उसके तिहलन उत्पादकों को नजर अंदाज करना शुरू कर दिया। इसके साथ ही खाद्य तेल आयात में बढ़ोतरी होने लगी और देखते ही देखते भारत दुनिया का सबसे बड़ा खाद्य तेल आयातक देश बन गया। इस बदलाव में बहुराष्ट्रीय कंपनियों की भी बड़ी भूमिका रही। उन्होंने अपवाह फैला दी कि सरसों के तेल में आर्जीमोन नामक खरपतवार के बीजों का तेल मिलाया जाता है, जो खाने योग्य नहीं है। अतः सरसों के तेल को शंका की दृष्टि से देखा जाने लगा। इसमें पामोलिव व सोयाबीन तेल के आयात को बढ़ावा मिला। आज कुल खाद्य तेल आयात में इनकी हिस्सेदारी 50 प्रतिशत हो गई। 2012-13 में देश का खाद्य तेल आयात 102 लाख टन के आंकड़े को पार कर गया जिसके लिए हमें 50 हजार करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ी।

सन् 1990 के दशक के अंत में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने 'जय जवान, जय किसान' के नारे में 'जय विज्ञान' की एक कडी जोड़कर देश को आगे बढ़ाने का संकल्प सुदृढ़ किया। इस तरह वर्ष 1990 के दशक में संधारणीय खेती पर अनुसंधान शुरू हो गए थे। अनुसंधानों से प्राप्त परिणामों के आधार पर जो संस्तुति की गई, वह निम्न प्रकार है –

फसल विविधीकरण: खेती में लगातार एक ही प्रकार की फसलें उगाने व एक ही तरह के निवेशो का प्रयोग करने से खेती में न केवल फसलों की पैदावार में कमी आई बल्कि उनकी गुणवत्ता में भी गिरावट दर्ज की गई। एक फसल प्रणाली न तो आर्थिक दृष्टि से लाभदायक है, और न ही पारिस्थितिक दृष्टि से अधिक उपयोगी। अतः फार्म पर धान्य फसलों

के साथ दलहनी फसलें, बागवानी फसलें, पशुपालन, मछली पालन व मधुमक्खी पालन को अपनाया जाए जिससे यदि किसी वर्ष मुख्य फसल नष्ट हो जाए तो अन्य कृषि व्यवसाय किसानों की आमदनी का स्रोत बन जाते हैं। साथ ही फसल विविधिकरण में प्राकृतिक संसाधनों का भी उचित उपयोग होता है। इसके अतिरिक्त किसान मांग और पूर्ति में होने वाले परिवर्तनों के परिणामस्वरूप मूल्यों में उतार-चढ़ाव से कम प्रभावित होते हैं। फसल विविधता से खेत में जैविक समृद्धि भी लाई जा सकती है। इस प्रकार कृषि विविधीकरण को अपनाकर खेती को टिकाऊ बनाया जा सकता है।

संरक्षित खेतीः संरक्षित खेती, टिकाऊ खेती की ऐसी पद्धति है जिसमें खेतों की बिना जुताई किए ही या कम से कम जुताई करके फसलों की बोआई पूर्ववर्ती फसल के अवशेषों में एक विशेष मशीन 'जीरो टिल ड्रिल' द्वारा की जाती है, जिससे भूमि की नमी, मृदा संरक्षण एवं पर्यावरण संरक्षित रहते हैं। इस तकनीक से जहाँ एक ओर फसल उत्पादन लागत में कमी आई है तो दूसरी तरफ यह पर्यावरण हितैषी भी है, क्योंकि इस तकनीक से कार्बन-डाई-आक्साइड़ का 135 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से उत्सर्जन कम किया जा सकता है। जैसा कि हम जानते हैं कि 1 लीटर डीजल के जलने से 2.6 कि.ग्रा. कार्बन-डाई-आक्साइड का उत्सर्जन होता है, जिसके कारण वायुमंडल में ग्रीन हाउस गैसों की सांद्रता बढ़ती है। अनुसंधानों द्वारा ज्ञात हुआ है कि खेत की बार-बार जुताई करने से कोई विशेष लाभ नहीं होता और न ही फसल की पैदावार में कोई अतिरिक्त वृद्धि होती है, बल्कि अच्छी खासी लागत लगाने के बावजूद किसान को कम आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। जीरो टिलेज/संरक्षण जुताई किसानों के आर्थिक उत्थान और पर्यावरण को स्वच्छ रखने में उपयोगी सिद्ध हुई है।

उर्वसिंचन: यह शब्द उर्वरक और सिंचाई दो शब्दों से मिलकर बना है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली में जल के साथ-साथ उर्वरकों को भी पौधों तक पहुँचाना 'उर्वसिंचन' कहलाता है। उर्वसिंचन द्वारा उर्वरकों को कम मात्रा में और कम अंतराल पर पूर्वनियोजित सिंचाई के साथ दे सकते हैं। इससे उर्वरक उपयोग दक्षता बढ़ने के साथ-साथ पौधों को आवश्यकतानुसार पोषक तत्व मिल जाते हैं। साथ ही मंहगे उर्वरकों का अपव्यय भी कम होता है। इस विधि से जल और उर्वरक पौधों के मध्य न पहुँचकर सीधे पौधों की जड़ों तक पहुँचते हैं। इसलिए फसल में खरपतवार भी कम पनपते हैं।

समेकित जल-प्रंबंधन: जल एक अति महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है। अतः इसका सोच-समझकर प्रयोग करने के लिए समेकित जल प्रबंधन धारणा विकसित की गई। ऐसा अनुमान है कि भविष्य में जल की कमी एक बडी समस्या होगी। आज भी देश में होने वाली कृषि का एक बड़ा भाग वर्षा पर आधारित है। भूमिगत जल का अंधाधुंध दोहन होने के कारण जलस्तर तेजी से गिरता जा रहा है जिसके कारण कुओं के पानी का सूखना, जलापूर्ति की समस्या, जल की आविषता, लवणीकरण और पंपिंग सैट लगवाने की लागत बढ़ना आदि समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। अतः वर्षा जल का अधिकतम संरक्षण और बहते जल को जलागम में इकट्ठा करके पुनः प्रयोग करना चाहिए। धान की फसल के लिए धान सघनता प्रणाली पर अनुसंधान कार्य चल रहे हैं, जिससे केवल 10-12 दिन की पौद की रोपाई की जाती है, जिसमें सिंचाई जल की अत्यधिक बचत होगी। अधिक सिंचाई से फसलों को नुकसान हो सकता है। साथ ही महत्वपूर्ण जल संसाधन की बर्बादी हो सकती है। अतः विभिन्न फसलों के लिए स्थापित मानकों के अनुसार सिंचाई करनी चाहिए। इस तरह बिजली व डीजल की भी बचत की जा सकती है।

समेकित पोषक तत्व प्रबंधनः खाद्यान्न फसलों की अधिक उपज देने वाली बौनी और अर्ध-बौनी किस्मों की निरंतर खेती में रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग का मृदा, पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। साथ ही उर्वरकों की बढ़ती कीमतों व इनके कम उत्पादन की वजह से छोटे और सीमांत किसान बुरी तरह से प्रभावित हो रहे हैं। इस समस्या के निराकरण हेतु और मृदा को स्वस्थ बनाए रखने के लिए खेती में एकीकृत पोषण प्रबंधन की सलाह की जाती है। टिकाऊ फसल उत्पादन हेतु एकीकृत पोषण प्रबंध के अंतर्गत रासायनिक उर्वरकों के साथ पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने वाले अन्य सभी स्रोतों का प्रयोग किया जाता है। इन स्रोतों में गोबर की खाद, कंपोस्ट खाद, हरी खाद, मुर्गी खाद, वर्मी कंपोस्ट, फसल अवषेश प्रबंधन और जैविक उर्वरक प्रमुख हैं। ये सभी स्रोत पर्यावरण हितैषी हैं और इनसे मुख्य पोषक तत्वों के अतिरिक्त सूक्ष्म पोषक तत्व भी पौधों को धीरे-धीरे व लंबें समय तक उपलब्ध होते रहते हैं।

समेकित कीट एंव रोग प्रबंधनः समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन की धारणा टिकाऊ खेती का महत्वपूर्ण अंग है। इसके अंतर्गत कीट नियंत्रण के लिए रासायनिक एवं जैविक दवाओं के साथ-साथ सस्य एवं यांत्रिक विधियों का भी प्रयोग किया जाता है जिससे पर्यावरण स्वच्छ रहे एवं उत्पादन बढ़े। इसमें कीटनाशियों व पीड़कनाशियों का कम से कम प्रयोग तथा साथ ही किसान के मित्र कीटों का फसलों के हानिकारक कीटों एवं रोगों के विरूद्ध प्रयोग किया जाता है। बी.टी. कपास का विकास कर एवं उसका बीज किसानों को उपलब्ध कराकर इस दिशा में बड़ी सफलता प्राप्त की है।

जैविक खेतीः वर्तमान परिवेश को देखते हुए खाद्य पदार्थों को आविषी कृषि रसायनों के कुप्रभाव से बचाना नितांत आवश्यक है। इस संबंध में जैविक खेती की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है। फसलों से अच्छी गुणवत्ता की अधिक पैदावार लेने हेतु तथा जमीन के उपजाऊपन को बनाए रखने के लिए जैविक खेती का महत्वपूर्ण योगदान है। आधुनिक खेती की बढ़ती उत्पादन लागत भी किसानों को जैविक खेती की ओर प्रेरित कर रही है, जिसका मुख्य उद्देश्य कम से कम लागत से अधिक से अधिक उत्पादन लेना तथा जमीन का उपजाऊपन कायम रखकर आविष मुक्त खाद्य पदार्थों का उत्पादन करना है। जैविक खेती से तात्पर्य फसल उत्पादन की उस पद्धति से है जिसमें रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशियों, पीड़कनाशियों, शाकनाशियों, पादप, वृद्धि नियामकों का उपयोग नहीं किया जाता बल्कि उचित फसल चक्र, फसल अवशेष, पशुओं का गोबर व मलमूत्र, दलहनी फसलों का प्रयोग, हरी खाद द्वारा भूमि की उपजाऊ शक्ति बनाए रखकर पौधों को पोषक तत्वों की उपलब्ध कराई जाती है। जैविक आहार का प्रचलन दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। आज देश के कई प्रदेशों में फलों एवं सब्जियों की जैविक खेती का भविष्य उज्जवल नजर आ रहा है।

परिशुद्ध खेतीः वर्तमान परिवेश में बढ़ते शहरीकरण, औद्योगिकीकरण और आधुनिकीकरण की वजह से कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल दिनों-दिन घटता जा रहा है। भविष्य में इसके बढ़ने की संभावना नगण्य है। देश की बढ़ती आबादी की खाद्यान्न आपूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों का आवश्यकता से अधिक दोहन किया जा रहा है। जिसका नतीजा भूमि की उत्पादकता में ह्रास, भू-जल का गिरता स्तर, घटते जल-स्रोतों, सिकुड़ती जैवविविधता, सूखे, बाढ़ों और जलवायु परिवर्तन के रूप में देख रहे हैं। यदि समय रहते हमने प्राकृतिक संसाधनों प्रमुख रूप से मृदा एवं जल सरंक्षण पर विशेष जोर नहीं दिया तो भविष्य में गंभीर खाद्य समस्या का सामना करना पड़ सकता है। इस संबंध

में, मृदा के उपजाऊपन एवं उत्पादकता बढ़ाने में परिशुद्ध खेती की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। परिशुद्ध खेती सूचना तकनीकी पर आधारित कृषि विज्ञान की एक आधुनिक अवधारणा है जो पर्यावरण हितैषी, किसानों के लिए उपयोगी तथा उत्पादन बढ़ाने की संभावनाओं के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों के दोहन को कम करने में सहायक है। इसमें खेत की स्थानीय जानकारी प्राप्त करने के लिए अत्याधुनिक तकनीकों जैसे जी.आई.एस. जी.पी.एस सुदूर संवेन रिमोट से पद्धति एवं सूचना तकनीक का प्रयोग किया जाता है। उपयुक्त सभी तंत्रो से सूचना एकत्रित कर लागत संसाधनों की मात्रा निर्धारित की जाती है। परिशुद्ध खेती को स्थान विशेष कृषि के नाम से भी जाना जाता है। इसमें लागत संसाधनों का अत्यधिक क्षमता से उपयोग होता है। परिशुद्ध खेती में लागत साधनों जैसे खाद व उर्वरक, सिंचाई, कीटनाशियों और शाकनाशियों आदि को उस स्थान विशेष पर ही प्रयोग किया जाता है, जहाँ फसल को उनकी आवश्यकता होती है, जबकि पारंपरिक खेती में किसान पूरे खेत में उपर्युक्त साधनों का समान रूप से प्रयोग करते हैं जिसमें न केवल संसाधनों का दुरूपयोग होता है बल्कि मृदा उत्पादकता में कमी व उत्पादन लागत में वृद्धि के साथ - साथ पर्यावरण को भी नुकसान पहुचाता है। आने वाले समय में खाद्यान्न उत्पादन को बढ़ाने के लिए उत्पादन लागत को घटाना तथा उपलब्ध संसाधनों जैसे उर्वरक, सिंचाई, जल, कीटनाशी इत्यादि के बेहतर उपयोग को सुनिश्चित करते हुए मृदा उत्पादकता एवं उर्वरता को बनाए रखना नितांत आवश्यक है।

पोषण कृषि: प्रतिष्ठित कृषि वैज्ञानिकों के सुझाव पर कृषि मंत्रालय इस बारे में एक योजना तैयार करेगा, जिसके जरिए फसल की नई किस्में जो सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर होंगी, जिसमें लौहयुक्त बाजरा, प्रोटीनयुक्त मक्का व जिंकयुक्त गेहूँ का विकास किया जाएगा। 2013-14 के बजट में कृषि अनुसंधान से उत्पादकता बढ़ाने और सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर फसलों की नई किस्मों की खेती पर जोर दिया गया था। वित्तमंत्री ने बजट 2013-2014 में पोषण कृषि पर एक प्रायोजित कार्यक्रम शुरू करने के लिए 200 करोड़ रूपये के आबंटन का भी प्रस्ताव किया था।

कृषि पर सबसे अधिक दबाव बढ़ती जनसंख्या का है। देश के 329 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में से केवल 143 मिलियन हेक्टेयर पर ही खेती की जाती है। हमें उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों को बिना नुकसान पहुँचाये उत्पादन व उत्पादकता बढ़ानी होगी। खाद्यान्न का उत्पादन वर्ष 1950 में 50 मिलियन टन था। वर्ष 2010-11 के दौरान देश में 241.56 मिलियन टन खाद्यान्न का रिकार्ड उत्पादन हुआ था, जो 2013-14 में बढ़कर 259 मिलियन टन हो गया। कृषि मंत्रालय के अनुसार वर्ष 2007-08 में देश में 230.70 मिलियन टन का खाद्यान्न उत्पादन हुआ था, जिसके मुकाबले वर्ष 2010-11 में खाद्यान्न उत्पादन में 10.86 मिलियन टन की वृद्धि दर्ज की गई। वर्ष 2012-13 में देश में 92.46 मिलियन टन गेहूँ का उत्पादन हुआ जबकि वर्ष 2007-08 में 78.5 मिलियन टन का उत्पादन हुआ था। इसी प्रकार वर्ष 2012-13 में 104.40 मिलियन टन धान का उत्पादन हुआ था। दालों का उत्पादन वर्ष 2012-13 में 18.45 मिलियन टन हुआ था, जबकि वर्ष 2007-08 में 14.7 मिलियन टन। वर्ष 2012-13 में तिलहनों का उत्पादन 31.10 मिलियन टन था। जो कि वर्ष 2007-08 के उत्पादन 29.7 मिलियन टन से अधिक था। गत 66 वर्षों में आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी जैसे संकर बीज, रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशियों व नवीनतम कृषि यंत्रो की सहायता से खाद्यान्न उत्पादन में कई गुना वृद्धि हुई है।

4

उर्वरकों के संतुलित प्रयोग की आवश्यकता

डॉ. दिनेश मणि

मृदा और जल दो महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है, जिन पर किसी देश की कृषि निर्भर करती है। मृदा एवं जल-प्रबंधन के प्रभावी उपायों को अपनाकर निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या के भरण-पोषण की चुनौती से निपटा जा सकता है। एक अनुमान के अनुसार सन् 2020 तक हमारी जनसंख्या 1.8 प्रतिशत की मौजूदा वृद्धि दर के साथ 30 प्रतिशत तक बढ़ जाऐगी, जिसके लिए 50 प्रतिशत अतिरिक्त खाद्यान्न की जरूरत होगी।

हमारी मृदा, जल तथा वायु निरंतर प्रदूषित होते जा रहे हैं। भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशांए बिगड़ती जा रही हैं। सघन खेती एवं रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से पर्यावरण पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है। मृदा की उर्वरा शक्ति कम हो रही है जिसके परिणामस्वरूप पर्याप्त उत्पादन नहीं हो पा रहा है।

वर्तमान परिवेश को देखते हुए मृदा को प्रदूषित होने से बचाना अत्यंत आवश्यक है जिससे मृदा की उर्वराशक्ति का नुकसान न हो सके। इसके लिए फसलों में प्रयोग किए जाने वाले रासायनिक उर्वरकों के अनुचित व असंतुलित मात्रा में बिना सूझ-बूझ के प्रयोग में कमी लाने की आवश्यकता है, अन्यथा मृदा में उपस्थित लाभकारी जीवाणु और जीव-जन्तु विलुप्त हो जाएंगे और इनकी अनुपस्थिति में मृदा में होने वाली विभिन्न अपघटन तथा विघटन इत्यादि क्रियाओं पर प्रतिकूल असर पडेगा। जिससे पोषक तत्वों एवं खनिज लवणों का बहुत बड़ा हिस्सा पौधों को प्राप्त नहीं हो सकेगा। साथ ही रासायनिक उर्वरकों की बढ़ती कीमतों व उनके कम उत्पादन होने के कारण लघु व सीमांत किसान बुरी तरह से प्रभावित होंगे। अतः फसलों से अच्छी गुणवत्ता की अधिक पैदावार लेने के लिए तथा जमीन के उपजाऊपन को बनाए रखने के लिए रासायनिक उर्वरकों का संतुलित प्रयोग आवश्यक है। इसके लिए खेती में रासायनिक उर्वरकों के साथ-साथ पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने वाले अन्य स्रोतों के प्रयोग की भी आवश्यकता है।

रासायनिक उर्वरकों के अनुचित और असंतुलित प्रयोग ने हरित-क्रांति की सफलता पर प्रश्न चिह्न लगा दिया है। कभी हरित-क्रांति आवश्यक थी, परंतु रासायनिक उर्वरकों का उपयोग इतना अधिक हो गया है कि अब इसके दुष्परिणाम स्पष्ट दिख रहे हैं। देश के अनेक कृषि क्षेत्रों में पौधों के लिए तीन मुख्य पोषक तत्वों, नाइट्रोन, फॉस्फोरस व पोटाश का प्रयोग असंतुलित अनुपात में किया जा रहा है। किसी-किसी क्षेत्र में तो यह अनुपात 9:2:1 है। जबकि अनाज वाली फसलों में आदर्श अनुपात 4:2:1, दाल वाली फसलों में 1:2:1 तथा सब्जी वाली फसलों में यह अनुपात 2:1:1 होना चाहिए। स्वस्थ जीवन के लिए हम सबको स्वच्छ वायु जल, भोजन, चारा, ईंधन,

आवास और प्रदूषण मुक्त पर्यावरण की आवश्यकता है। ये आवश्यकताएं कहीं न कहीं आधुनिक खेती से जुड़ी हुई हैं। बढ़ते शहरीकरण, आधुनिकीकरण, औद्योगिकीकरण और रासायनिक उर्वरकों के अंधाधुंध व असंतुलित प्रयोग से उपजाऊ भूमि बंजर भूमि में परिवर्तित हो रही है जिसके परिणास्वरूप पारिस्थितिक असंतुलन की स्थिति पैदा हो गई है।

उर्वरकों के असंतुलित प्रयोग के दुष्परिणाम

1. अत्यधिक बढ़ते प्रयोग से वायु, जल और मृदा प्रदूषण में लगातार वृद्धि हो रही है जिसके फलस्वरूप मानव स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

2. रासायनिक उर्वरकों के लगातार असंतुलित प्रयोग से कृषि भूमि की उर्वरता और उत्पादकता दोनों घटती जा रही हैं।

3. केंचुए और मिट्टी में उपस्थित अनेक सूक्ष्मजीव अपनी जैविक क्रियाओं से भूमि में पोषक तत्व तो देते ही हैं साथ ही मिट्टी को भुरभुरा बनाकर उसमें धूप और हवा के आवागमन को सुगम बनाते हैं। पंरतु दुर्भाग्यवश रासायनिक उर्वरकों के बढ़ते प्रयोग से केचुंए विलुप्त होते जा रहें हैं।

4. असंतुलित उर्वरक उपयोग में मुख्यतः नाइट्रोजन प्रदान करने वाले अकार्बनिक उर्वरकों का अधिक प्रयोग करने से मृदा में कुछ द्वितीयक व सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होती जा रही है जिसके परिणामस्वरूप फसलों की गुणवत्ता और पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

5. दलहनी फसलों में अत्याधिक नाइट्रोजन का प्रयोग करने अथवा अधिक उर्वरता वाली भूमि में उगाने के फलस्वरूप, जड़ों में ग्रंथि निर्माण और वायुमंडलीय नाइट्रोजन प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

6. देश के अनेक कृषि क्षेत्रों जैसे पंजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और हरियाणा आदि में एक ही किस्म के रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक और अंधाधुंध प्रयोग के परिणामस्वरूप भूमि का बहुत बड़ा हिस्सा तेजी से लवणीय, अम्लीय और क्षारीय होता जा रहा है।

7. प्रयोग किए गए रासायनिक उर्वरकों का अधिकांश भाग भूमि में रिस कर या अन्य तरीकों से भूमिगत जल, नदियों, तालाबों और झरनों में मिल जाता है। जिसके फलस्वरूप पानी के स्रोत प्रदूषित होते जा रहे हैं। साथ ही फसल उत्पादों में इन रसायनों की आविषता भी बढ़ती जा रही है।

8. रासायनिक उर्वरकों के बढ़ते प्रयोग से मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है जिससे पोषक तत्वों एवं खनिज लवणों का बहुत बड़ा हिस्सा पौधों को प्राप्त नहीं हो पाता है।

9. रासायनिक उर्वरकों की बढ़ती कीमतों व उनके कम उत्पादन होने के कारण लघु और सीमांत किसान बुरी तरह से प्रभावित हो रहे हैं क्योंकि रासायनिक उर्वरकों की बढ़ती कीमतें उनकी पहुँच के बाहर हैं।

10. अधिकांश रासायनिक उर्वरकों का अवषेश प्रभाव श्वसन तंत्र व आहार तंत्र को प्रभावित करता है। फसल उत्पादों में नाइट्रोजन मुख्यतः नाइट्रेट के अत्यधिक संचय के कारण बच्चों में हीमोग्लोबीनिमिया और ब्ल्यू बेबी सिंड्रोम नामक बीमारियाँ हो जाती हैं। यह बीमारी धान उगाने वाले क्षेत्रों में अधिक प्रचलित है जहाँ पर धान के फसल में दिए गए नाइट्रोजन उर्वरकों का अधिकांश भाग नाइट्रेट के रूप में भूमिगत जल में मिल जाता है। इसके अतिरिक्त प्रयोग

किए जाने वाले नाइट्रोजन उर्वरकों से उत्पन्न एमाइनों के परिणामस्वरूप मनुष्यों में कैंसर होने ही संभावना होती है।

11. इसके अतिरिक्त किसानों के अनेक मित्र-कीट जैसे मधुमक्खी, तितली और भौंरें इत्यादि, जो परागण में सहायता करते हैं, भी बुरी तरह से प्रभावित हो रहे हैं।

12. उर्वरकों से निकलने वाली ग्रीन हाउस गैस (नाइट्रस ऑक्साइड) वायुमंडल में उपस्थित ओजोन परत को नष्ट करती है। ओजोन परत सूर्य से निकलने वाली खतरनाक पराबैंगनी किरणों को रोकने में सहायता करती हैं। इन किरणों के कारण मनुष्यों में त्वचा कैंसर हो जाता है।

उर्वरकों द्वारा होने वाले प्रदूषण को कम करने के उपाय -

खेती में रासायनिक उर्वरकों के अंसतुलित प्रयोग से होने वाले दुष्परिणामों को निम्न तरीकों को अपनाकर के कम किया जा सकता है –

1. खेत की मिट्टी की जांच के आधार पर ही रासायनिक उर्वरकों की मात्रांए सुनिश्चित करें।

2. भरपूर पैदावार के लिए, पत्ती रंग चार्ट (लीफ कलर चार्ट) है। उसे देख कर फसलों में उर्वरकों की संस्तुति की जानी चाहिए। इस तकनीक का मूलभूत सिद्धांत यह है कि पत्तियों का हरापन जितना ज्यादा होगा, उतनी ही उर्वरकों की कम आवश्यकता पड़ती है। चार्ट में दिए गए अंकों के आधार पर उर्वरकों की मात्रा और उनके प्रयोग का सही समय तक किया जाता है।

3. फसल उत्पादों की अच्छी गुणवत्ता और अधिक पैदावार लेने के लिए गोबर की खाद, मुर्गी खाद, वर्मी कंपोस्ट, हरी खाद, फसल अवशेषों का प्रयोग, फसल चक्र दलहनी फसलों का समायोजन और अन्य जैविक खादों का प्रयोग भी रासायनिक उर्वरकों के साथ अपेक्षित है। इससे पौधों को मुख्य, गौण व सूक्ष्म पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में और लंबी अवधि तक मिलते रहते हैं। प्रयोगों द्वारा यह भी पाया गया कि रासायनिक उर्वरकों को जैविक खादों के साथ संयुक्त रूप से देने पर प्रयोग किए उर्वरकों की उपयोग दक्षता भी अधिक पाई गई है।

4. इसके अतिरिक्त खेती में रासायनिक उर्वरकों के साथ-साथ जैव उर्वरकों जैसे - एजोटोबेक्टर, राइजोबियम, नील हरित शैवाल, अज़ोला, एजोस्पिरिलम, फॉस्फोबेक्टीरिया व माइकोराइजा का प्रयोग भी लाभदायक रहता है। जैविक उर्वरकों के प्रयोग से विभिन्न फसलों की उपज में 15-25 प्रतिशत की वृद्धि हो सकती है।

5. किसानों को समय-समय पर रासायनिक उर्वरकों के संतुलित प्रयोग के लिए उचित परामर्श देकर भी इनके दुष्प्रभावों को कम किया जा सकता है। इसके लिए किसानों को उर्वरकों की उपयुक्त प्रयोग विधि व उनके प्रयोग करने के उचित समय की जानकारी होना अतिआवश्यक है। इसके लिए किसान सम्मेलन, किसान संगोष्ठी एवं किसान दिवस आदि का आयोजन किया जा सकता है।

6. रासायनिक उर्वरकों को बेचने वाले विक्रेता की सलाह पर उर्वरकों का प्रयोग नहीं करना चाहिए । यदि इसके लिए कृषि वैज्ञानिक, कृषि प्रसार कर्मियों की मदद ली जाए तो ज्यादा अच्छा रहेगा। इस प्रकार किसान अनावश्यक खर्च से भी बच जाएगा और फसल की अच्छी गुणवता व अधिक उत्पादन हो सकेगा। इसके साथ-साथ, नकली रासायनिक उर्वरकों की आपूर्ति पर भी प्रतिबंध लग सकेगा।

तालिका 1: मृदा उर्वरता के मानक स्तर

क्र. सं.	गुण/कारक	निम्नतम	मध्यम	उच्चतम
1.	कार्बनिक कार्बन (प्रतिशत)	0.5 से कम	0.5-0.75	0.75 से अधिक
2.	उपलब्ध नाइट्रोजन (कि.ग्रा./हे.)	280 से कम	280-560	560 से अधिक
3.	उपलब्ध फॉस्फोरस (कि.ग्रा./हे.)	10 से कम	10-25	25 से अधिक
4.	उपलब्ध पोटाश (कि.ग्रा./हे.)	108 से कम	108-280	280 से अधिक
5.	मृदा का पी.एच.मान	अम्लीय, 6.5 से कम	उदासीन, 6.5-8.5	क्षारीय, 8.5 से अधिक
6.	विद्युत चालकता	सामान्य	क्रान्तिम	संवेदनशील
7.	कुल घुलनशील लवण (मिलिमोल/सेमी.)	1 से कम	1-4	4 से अधिक

तालिका 2: मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों पर रासायनिक उर्वरकों का प्रभाव

क्र.स.	मृदा गुण	जैविक खेती	रासायनिक खेती
1	पी.एच. या अम्लता	7.26	7.55
2	विद्युत चालकता (डेसी.मी.)	0.76	0.78
3	कार्बनिक कार्बन	0.585	0.405
4	नाइट्रोजन (कि.ग्रा./हे.)	256	185
5	फॉस्फोरस (कि.ग्रा./हे.)	50.5	28.5
6	पोटाश (कि.ग्रा./हे.)	459.5	426.5
7	नाइट्रोजन (प्रतिशत)	0.068	0.050
8	कार्बनिक बायोमास (मि.ग्रा./कि.ग्रा. मिट्टी)	273	217
9	एजोटोबेक्टर (1000/ग्राम मिट्टी)	11.7	0.8
10	फॉस्फोरस बेक्टीरिया (100000 / कि.ग्रा. मिट्टी)	8.8	3.2

इस प्रकार फसलों द्वारा पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता को बढ़ाने के लिए संतुलित उर्वरक प्रयोग बहुत आवश्यक है। समुचित मात्रा में उर्वरकों के प्रयोग के लिए तथा उनकी उपयोग क्षमता बढ़ाने के लिए यह जानना बहुत जरूरी है कि मृदा में पोषक तत्वों की मात्रा क्या है और फसलों को किन-किन तत्वों की कितनी आवश्यकता है। यदि मृदा में नाइट्रोजन की कमी है तो फॉस्फोरस, पोटाश या किसी भी अन्य पोषक तत्व की कितनी मात्रा डालने से उसका समुचित उपयोग नहीं होगा क्योंकि किसी भी एक तत्व की उपलब्धता तथा उसका उपयोग अन्य पोषक तत्वों की मात्रा पर भी निर्भर करता है। इस प्रकार फॉस्फोरस की मृदा में कमी होने से नाइट्रोजन व पोटाश का समुचित उपयोग नहीं हो सकता। अतः मृदा में किसी एक तत्व की कमी को दूसरे तत्वों से पूरा नहीं किया जा सकता है। किस फसल में कितनी मात्रा किस पोषक तत्व की दी जाए, यह इस बात पर निर्भर करता है कि फसल कौन-सी है और किस प्रयोजन के लिए उगाई गई है।

रासायनिक उर्वरक वर्तमान सघन खेती पद्धति में समंवित/एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण घटक है। भारत में ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व में 50 प्रतिशत बढ़ोतरी केवल रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से हुई है। लेकिन फसलों द्वारा उर्वरकों की

उपयोग क्षमता लगभग 50 प्रतिशत या इससे भी कम है तथा शेष मात्रा विभिन्न प्रकार की हानि प्रक्रियाओं द्वारा नष्ट हो जाते हैं। आजकल उच्च विष्लेशण उर्वरकों जैसे - यूरिया, डाई अमोनियम फॉस्फेट और म्यूरेट ऑफ पोटाश का प्रचलन अधिक बढ़ गया है जो केवल नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश के अतिरिक्त अन्य पोषक तत्वों को प्रदान नहीं करते हैं। जबकि पारंपरिक निम्न विष्लेशण उर्वरकों के प्रयोग से फसलों को गौण तथा सूक्ष्म पोषक तत्व प्राप्त होते रहते हैं। उच्च विष्लेशण उर्वरकों के लगातार प्रयोग से मिट्टी में गौण तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी आ रही है। भारत में 47 प्रतिशत मृदाओं में जस्ता, 11.5 प्रतिशत में लोहा, 4.8 प्रतिशत में तांबा तथा 4 प्रतिशत मृदाओं में मैंगनीज की कमी है जिनका प्रभाव फसलों की उपज पर भी पड़ रहा है। दलहन, तिलहन तथा अधिक उपज देने वाली फसलों में गंधक का प्रयोग जरूरी हो गया है। भारतीय मृदाओं में कार्बनिक कार्बन की सर्वत्र कमी है। कार्बनिक खादें जैसे गोबर की खाद तथा कंपोस्ट मृदा उर्वरता बनाए रखने, उत्पादन को स्थिर रखने एवं पोषक तत्वों का सही परिणाम प्राप्त करने के लिए आवश्यक है। कार्बनिक खादें वर्तमान फसल को तो लाभ पहुँचाती ही हैं साथ ही साथ दूसरी फसल को भी अवशेषी प्रभाव द्वारा लाभ पहुँचाती हैं। एक टन गोबर की खाद से लगभग 12 कि.ग्रा. पोषक तत्व (नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश) प्राप्त होते हैं तथा 3.6 कि.ग्रा. उर्वरक तत्वों के बराबर अनाज पैदा करती हैं। खरीफ की फसलों में गोबर की खाद के प्रयोग से उत्पादकता में बगैर हानि पहुंचाए उर्वरक प्रयोग में कटौती की जा सकती है। रासायनिक उर्वरकों की मांग को कम करने के लिए उपलब्ध अवशिष्ट पदार्थो को कार्बनिक स्रोत के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।

उर्वरकों का सर्वोतम उपयोग तभी हो सकता है जब कार्बनिक खाद के साथ भूमि में डाला जाए। हमारे देश में कार्बनिक खाद के उपयोग की बड़ी संभावनाए हैं। कार्बनिक खाद से पोषक तत्वों की आपूर्ति के अतिरिक्त भूमि की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशाओं में सुधार लाकर फसलों की उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है। कार्बनिक खाद को रासायनिक उर्वरकों के साथ देने से रासायनिक उर्वरकों की उपलब्धता में धीमापन आता है और उनका लाभ पौधों को धीरे-धीरे मिलता है। अतः फसल की आवश्यक नाइट्रोजन की आधी मात्रा कार्बनिक खादों से तथा आधी मात्रा रासायनिक उर्वरकों से दी जाए तो फसल पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा क्योंकि फसल को रासायनिक उर्वरकों द्वारा शीघ्र तथा अधिक मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त मिट्टी के द्वारा जो भी पोषक तत्व पानी में अत्यधिक घुलनशील होते हैं, उसके रिसाव को भी बचाया जा सकता है।

मृदा में होने वाले पोषक तत्वों की क्षति की भरपाई उन्नत पोषक तत्व प्रबंधन विधियों, दक्ष फसल चक्र प्रणाली, जैव-उर्वरक, अच्छी कंपोस्ट एवं फसल चक्र में दलहनी फसलों के समावेश के द्वारा संभव है। चूंकि बढ़ा हुआ कृषि उत्पादन मुख्यतः वर्तमान कृषि योग्य भूमि से ही आयेगा, अतएव कृषि उत्पादन बढ़ाने एवं मृदा में उर्वरता बनाए रखने के लिए उर्वरक एवं कार्बनिक पदार्थों का लगातार संतुलित मात्रा में प्रयोग जरूरी है। दीर्घकालीन उर्वरक प्रयोग परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि जहाँ पर नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश एवं गोबर की खाद का संयुक्त रूप से प्रयोग किया गया वहाँ गोबर की खाद के प्रयोग से फसलोत्पादन में 20 प्रतिशत तक वृद्धि हुई। इस प्रकार सार-रूप में यह कहा जा सकता है कि रासायनिक उर्वरकों के साथ-साथ जैविक खादों, हरी खाद, कंपोस्ट, वर्मी कंपोस्ट, जैव उर्वरकों के समन्वित प्रयोग से मिट्टी की उर्वरा शक्ति को दीर्घकाल तक कायम रखा जा सकता है और अधिकतम फसलोत्पादन प्रात्त किया जा सकता है।

5

मधुमक्खियों द्वारा परागण एवं उसका महत्व

डॉ. रचना पाडे, डॉ. विवेक शाह, डॉ. प्रभुलिंगा टी., डॉ. मधु टी.एन., डॉ. पूजा वर्मा

भारत एक कृषि-प्रधान देश है। कृषि के उत्पादन को बढ़ाने के लिए कृषि-वैज्ञानिक फसलों की आनुवंशिक संरचना, मृदा के पोषण में परिवर्तन तथा कई रासायनिक कीटनाशियों का उपयोग कर रहे हैं। परंतु कभी-कभी कृषक इन सभी घटकों को प्रयोग में लाने के पश्चात् भी उचित उत्पादन प्राप्त नहीं कर पाते हैं। अतः एक ऐसा उपाय खोजा जाना चाहिए जिसमें कृषकों को कम मेहनत में उचित फल मिल जाए, और वह उपाय है मधुमक्खियों द्वारा पूर्ण रूप से उचित परागण। पर्यावरण संरक्षण, जैव विविधता तथा मधुमक्खी द्वारा परागण का कार्य, तीनों परस्पर आश्रित हैं। जैसा कि हम जानते हैं कि मधुमक्खियां अपने भोजन के लिए पूर्ण रूप से पुष्पों पर निर्भर करती हैं। मधुमक्खियों का मुख्य भोजन मकरंद व परागकण हैं जिससे वह अपनी शर्करा व प्रोटीन की आवश्यकता को पूरा करती हैं। लेकिन मधुमक्खियों के भोजन के लिए पुष्पों पर यह निर्भरता एकतरफा नहीं है, अपितु पुष्प भी अपनी आधारभूत आवश्यकता के लिए मधुमक्खियों पर निर्भर करते हैं और यह आवश्यकता है, 'उचित परागण'। परागण वह क्रिया है जिसमें पुष्पों का पराग कण उसी अथवा अन्य फूलों के अंडाणु के संपर्क में आता है जिससे निषेचन की क्रिया संपन्न होती है, जिसके परिणामस्वरूप पुष्पों से फल व बीज बनते हैं। यह प्रक्रिया पुष्पों व किसानों दोनों के लिए ही अत्यंत महत्वपूर्ण है। सफल व पूर्ण परागण के फलस्वरूप ही किसानों को उत्तम फल व उत्तम प्रकार के बीज प्राप्त होते हैं।

प्रकृति में यह परागण दो रूपों में होता है : स्वपरागण एवं पर-परागण

स्व-परागण: जब एक पुष्प का पराग कण उसी पुष्प के अंडाणु पर गिरता है और निषेचन संपन्न होता है, तब इस क्रिया को स्व-परागण कहते हैं। इस प्रकार के परागण में मधुमक्खी व अन्य जैविक घटक का कोई भी योगदान नहीं होता हैं। इस तरह की प्रमुख फसलों में उदाहरण स्वरूप गेहूँ, धान, जौ इत्यादि धान्य फसलें सम्मिलित हैं। प्रकृति में पाए जाने वाले पादपों में केवल 5 प्रतिशत पादपों में स्वपरागण होता है।

पर-परागणः स्वपरागण के विपरीत जब एक पुष्प का पराग दूसरे पुष्प के अंडाणु को निषेचित करता है तो उसे पर-परागण कहते हैं। यह परागण कीटों, हवा, तथा अन्य माध्यमों, जैसे कि मनुष्य द्वारा भी हो सकता है। प्रकृति में पर-परागण लगभग 95 प्रतिशत तक होता है जिसमें 10 प्रतिशत हवा के द्वारा तथा 85 प्रतिशत कीटों व अन्य जैविक घटकों द्वारा होता है। परंतु पर-परागण वाली अधिकांश फसलों में पर-परागण कीटों से ही संभव हो सकता है, जिनमें मधुमक्खियां प्रमुख हैं। मधुमक्खियों के अतिरिक्त प्रमुख कीट जो कि पर-परागण के लिए उत्तरदायी है

वे हैं, तितलियां, पतंगे, ततैये, भौंरे, घरेलू मक्खियां इत्यादि। परंतु कुल कीट-परागण का 80 प्रतिशत केवल मधुमक्खियों द्वारा ही संपन्न होता है। प्रकृति में पाए जाने वाले लगभग 50 प्रतिशत पौधे अपने अगले पीढी के लिए बीजों पर निर्भर करते हैं और बीजों के उत्पादन के लिए वह पूर्णतः कीटों पर निर्भर करते हैं। अधिकांश दालें व तिलहन, फल व सब्जियां अपने परागण के लिए मधुमक्खियों पर निर्भर करती हैं। इसके अतिरिक्त प्याज, गोभी, बंदगोभी, तंबाकू, और लौंग आदि सभी फसलें बीज उत्पादन के लिए मधुमक्खियों पर ही निर्भर करती हैं।

मधुमक्खी वंश में तीन प्रकार की मधुमक्खियां होती हैं: रानी, नर व श्रमिक। कोष्ठों से निकलने के 2-3 सप्ताह बाद श्रमिक मधुमक्खियां विभिन्न प्रकार के पुष्पों से पुष्परस या मकरंद, पराग व पानी लाना प्रारंभ कर देती हैं। कुछ श्रमिक मक्खियां केवल मकरंद, कुछ केवल पराग तथा कुछ पराग व मकरंद, लाती हैं। सामान्यतः श्रमिक मधुमक्खियां एक स्रोत से तब तक भोजन लाती रहती हैं जब तक कि उस स्रोत का भोजन समाप्त नहीं हो जाता। मधुमक्खियों के इस व्यवहार को 'पुष्प निष्ठा' कहते हैं। यों तो मधुमक्खियां 3-4 किमी की दूरी तक भोजन लाने में सक्षम होती हैं परंतु अधिकतर श्रामिक मधुमक्खियां केवल 400 मीटर की परिधि से ही भोजन एकत्र करती है।

भारत में पर-परागण के लिए मधुमक्खी पालन का अभिप्राय

मधुमक्खियां कई प्रकार की फसलों के पुष्पों से मकरंद व पराग एकत्र कर उनका सफल परागण करती हैं। भारत में कुल फसल क्षेत्र में से लगभग 50 लाख हेक्टेयर क्षेत्र परागण के लिए मधुमक्खियों पर निर्भर करता है।

शोधकर्ताओं द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि यदि कोई किसान मधुमक्खी द्वारा परागण का लाभ लेना चाहता है तो कम से कम उसे 3 मधुमक्खी बक्सों को प्रति हेक्टैयर रखना होगा। यदि इस हिसाब से अनुमान लगाया जाए तो भारत में मधुमक्खी द्वारा सफल परागण के लिए लगभग 150 लाख मधुमक्खी बक्स चाहिए। परंतु वर्तमान समय में भारत में केवल लगभग 1-2 लाख बक्से ही सक्रिय अवस्था में उपलब्ध हैं। तो अर्थ है कि अब भी हमें 100 लाख से ज्यादा बक्सों की आवश्यकता है। अतः भारत के किसानों व बेरोजगारों के पास मधुमक्खी पालन को अपना मुख्य व्यवसाय की तरह चुनने का विकल्प है।

यदि कोई कृषक या बेरोजगार 10 बक्सों से भी मधुमक्खी पालन प्रारंभ करता है तथा केवल शहद को ही मुख्य उत्पाद की तरह बेचता है तो वह भारतीय मधुमक्खी से प्रतिवर्ष लगभग 15,000 रु तथा यूरोपियन मधुमक्खी से लगभग 30,000 रु तक अर्जित कर सकता है।

मधुमक्खी परागण से होने वाले लाभ

मधुमक्खी द्वारा परागण की क्रिया द्वारा फसलों की उत्पादन क्षमता व उनकी गुणवत्ता दोनों में आश्चर्यजनक बढ़ोतरी होती है। इस तरह के ही कुछ तथ्य निम्नवत् हैं :

प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि मधुमक्खी द्वारा पर-परागण से उपज में कम से कम 60-70 प्रतिशत की वृद्धि होती है। मधुमक्खी परागण से फसल की उत्पादन क्षमता में बढ़ोतरी होती है चाहे वह अनाज हो या फल या उनसे मिलने वाले बीज। मधुमक्खी द्वारा पर-परागण से फलों एवं बीजों की गुणवत्ता में जैसे कि फलों के भार, आकार व बीज के वजन व अंकुरण क्षमता में वृद्धि होती है। मधुमक्खी परागण से तिलहनों, जैसे सूर्यमुखी, सरसों आदि के तेल उत्पादन की मात्रा में भी वृद्धि होती

चित्र 1: विभिन्न पुष्पों पर परागण करती हुई मधुमक्खियां

है। कद्दू, लौकी, खीरा, तोरई, करेला आदि जिन कद्दूवर्गीय फसलों में स्वपरागण संभव नहीं है उनके लिए मधुमक्खी द्वारा पर-परागण अति आवश्यक है। यह उनके बीज व फल दोनों की पैदावार के लिए आवश्यक है।

मधुमक्खियों द्वारा परागण के पश्चात् प्याज में बीज के बनने व उनके अंकुरण पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। वैज्ञानिक तथ्यों द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि मधुमक्खियों द्वारा परागण से होने वाला फसलों का लाभ, मधुमक्खी बक्सों से मिलने वाले उत्पाद (मधु/शहद व मोम) से 20 गुना अधिक होता है।

मधुमक्खी के पुष्प स्रोत

ऐसे पौधे जिनके पुष्प पराग या मकरंद या फिर दोनों का ही उत्पादन करते हैं उन्हें मधुमक्खियों का पुष्प स्रोत कहते हैं। मधुमक्खियां मुख्यतः उन्हीं पुष्पों के तरफ अधिक आकर्षित होती हैं जिनके पुष्परस में शर्करा की सांद्रता अधिक होती है। एक मधुमक्खी अपने भोजन एकत्र करते समय लगभग 50 से 100 पुष्पों पर बैठती हैं तथा वह इनमें लगभग 80 प्रतिशत तक रस लेती है और 20 प्रतिशत तक परागकण एकत्र करती है जिसका परागण की प्रक्रिया में विशेष महत्व है। भोज्य पदार्थ उत्पादन के आधार पर इन पुष्प स्रोत को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है:

मकरंद के स्रोतवाले पौधे: महुआ, करंज, शीशम, लीची इत्यादि।

पराग के स्रोतवाले पौधे: गुलाब, अरंडी, अनार, मक्का, धान, ज्वार, इत्यादि।

पराग व मकरंद के स्रोतवाले पौधे: केला, आड़ू, खट्टे (नींबू आदि) फल, अमरूद, सेब, मूली, गाजर, प्याज, सूर्यमुखी, नाशपाती, प्लम, आम, नीम, सेमल, यूकेलिप्टस, इमली, जामुन, आवला, बेल, नारियल, पपीता, अरहर, मूंग, मटर, उर्द, सरसों, तिलहन, धनिया, मेथी, कद्दूवर्गीय, सहजन, अलसी, सौंफ इत्यादि।

इनके अतिरिक्त मधुमक्खी बक्सों के आस पास पाए जाने वाले खरपतवारों के पुष्प भी पराग व मकरंद के स्रोत होते हैं।

मधुमक्खियां आदर्श परागण वाहक के रूप में

मधुमक्खियों की शारीरिक रचना व जीवन यापन इस प्रकार का होता है जो इन मधुमक्खियों को एक आदर्श परागक बनाता हैं। मधुमक्खी के वे गुण निम्नवत् हैं :

1. मधुमक्खियों का पूरा शरीर बालों/रोयों से ढ़का रहता है। जब मधुमक्खियां मकरंद अथवा पराग अथवा दोनों को एकत्रित करने के लिए एक पुष्प से दूसरे पुष्प पर जाती हैं तो उस समय एक पुष्प के परागकण उनके शरीर पर पाए जाने वाले रोएं में फंस जाते हैं या चिपक जाते हैं तथा दूसरे पुष्प में बैठने पर चिपके हुए परागकण से कुछ परागकण दूसरे पुष्प पर गिर जाते हैं।
2. मधुमक्खी के पैर भी पराग एकत्र करने में बहुत ज्यादा सहायक होते हैं जिस कारण मधुमक्खी के पैर पराग एकत्र करने वाले पैर के नाम से जाने जाते हैं। मधुमक्खियों के पिछले पैर में पाए जाने वाले रोएं, ब्रुश का काम करते हैं जिसे 'पॉलन ब्रुश' कहते हैं। यह ब्रुश पूरे शरीर में उपस्थित परागकण को एकत्र कर मधुमक्खियों के पिछले पैर में पाई जाने वाली एक और महत्वपूर्ण संरचना पराग-करंड में एकत्र कर देते हैं।
3. मधुमक्खियों का सबसे विशिष्ट गुण है कि वे परागण के दौरान पराग एकत्र करते समय फसलों को किसी प्रकार की हानि नहीं पंहुचाती है।
4. मधुमक्खी का पूरा वंश परागकण को भोजन के रूप में ग्रहण करता है जिस कारण मधुमक्खियों के लिए पराग को एकत्र करना एक अनिवार्य प्रक्रिया है। मधुमक्खी के प्रौढ़ व शिशु दोनों ही पराग को महत्वपूर्ण प्रोटीन के स्रोत के रूप में अपने जीवन यापन के लिए ग्रहण करते हैं।
5. मधुमक्खियां (मौन-वंश में) पर्याप्त मात्रा में पराग उपस्थित होने पर भी लगातार फलों से पराग एकत्र करती हैं क्योंकि यह पराग वह आगे आने वाले प्रतिकूल समय जैसे अत्यधिक गर्मी, वर्षा व सर्दी के लिए कोष्ठों में भंडारण करके रखती हैं।
6. मधुमक्खियां वर्ष भर सक्रिय रहने वाला कीट हैं जिस कारण उन्हें इस परागरूपी भोजन की आवश्यकता वर्ष भर होती है। इसी कारण मधुमक्खियां वर्ष भर भांति-भांति के पुष्पों से पराग एकत्र करती रहती हैं।
7. मधुमक्खियां प्रतिकूल समय के लिए पर्याप्त पराग का भंडारण अपने छत्तों में करके रखती हैं। फिर भी अत्यंत प्रतिकूल समय में भी श्रमिक मक्खियां परागकण की तलाश में अपने छत्तों से बाहर आकर आस-पास के क्षेत्र में उपलब्ध पराग को एकत्र करने का काम करती हैं।
8. मधुमक्खियों का शारीरिक आकार, संरचना, उनके मुखांग की संरचना-विशेषकर उनके जिह्वा की लंबाई अधिकतर पुष्पों से उन्हें पराग व मकरंद एकत्र करने में सक्षम बनाती हैं।
9. मधुमक्खी पालन से जुड़े हुए किसी भी संसाधन की कृषि-कार्य में उपयोग होने वाले साधनों से कोई स्पर्धा नहीं है। मधुमक्खी पालन बिना किसी कार्य को दुष्प्रभावित किए प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से मानव जाति को लाभान्वित करता है।
10. हम अपनी व फसल की आवश्यकतानुसार मधुमक्खी बक्सों की संख्या कम या अधिक कर सकते हैं।
11. मधुमक्खियों को पालने में कृषक इसलिए भी रुचि दिखाते हैं क्योंकि उन्हें इससे अपने प्रयोग के लिए शुद्ध शहद मिलता है जो कि खाने व औषधि दोनों के ही काम आता है।

मधुमक्खियों द्वारा परागण से लाभान्वित पादप-

मधुमक्खियों द्वारा परागण से होने वाले लाभों को देखकर मधुमक्खी पालन आजकल विकसित कृषि का एक अभिन्न अंग माना जाने लगा है। इस श्रेणी में आने वाले कुछ पादपों तथा उनके उत्पादन में वृद्धि के कुछ उदाहरण निम्नवत् हैं :

1. फल व नट: काफी, बादाम, सेब, खुबानी, आड़ू, स्ट्रॉबेरी, नारियल, नाशपाती, आलूबुखारा, इमली,

काजू, अमरूद, बेर, चेरी, अखरोट, आंवला, लीची, आम, मौसमी, संतरा, जामुन, तंबाकू, खजूर, केला, तरबूजा, खरबूज आदि।

2. सब्जियां और उनके बीज: बंदगोभी, फूलगोभी, गाजर, खीरा, प्याज, कद्दूवर्गीय फसलें, मूली, शलजम, करेला, धनियां, सौंफ, तोरिया आदि।
3. दाल व तिलहन: सूर्यमुखी, सरसों, राई, अरहर, लाही, कपास, चना, तिल आदि।
4. अनाज: ज्वार, सोयाबीन, कुट्टू आदि।
5. वृक्ष: नीम, सेमल, बॉटल ब्रश, शीशम, रबर, यूकेलिप्टस आदि।

इनके अतिरिक्त यह भी साबित हो चुका है कि बहुत हद तक मधुमक्खी द्वारा पराग से उत्पादन में होने वाली वृद्धि फसलों की जाति पर भी निर्भर करती है।

मधुमक्खी परागण से लाभान्वित पादप	उत्पादन में वृद्धि (प्रतिशत में)
सेब	200-6050
नाशपाती	≥200
चेरी	50-1000
स्ट्रॉबेरी	90
संतरा	40-900
अमरूद	70-140
पपीता	5-10
लीची	≥6000
प्याज	≥90
सरसों	≥150
सूर्यमुखी	≥1000
दालें	10-40
कपास	17-19
कद्दूवर्गीय सब्जियां	30-100
धनिया	≥100
इलायची	37

मधुमक्खी परागण के लिए प्रबंधन

किसान भाइयों के लिये यह बात ध्यान देने योग्य है कि मधुमक्खी बक्सों को केवल फसलों के पास रख देने से ही फसल उत्पादन में वृद्धि नहीं होगी। इसके लिए कुछ अत्यंत सूक्ष्म, परंतु महत्वपूर्ण, बातों पर ध्यान देना बहुत आवश्यक हैं। मधुमक्खियों द्वारा उचित व संपूर्ण परागण मुख्यतः निम्न बातों पर निर्भर करता है :

- मौन बक्सों की संख्या ।
- मौन वंशों में श्रमिक की संख्या।
- फसल के पुष्पों के जीवन चक्र।
- पुष्पों की सघनता।
- उस समय के विद्यमान मौसम की अवस्था।
- उनके स्थान-परिर्वतन के पश्चात् उनकी व्यवस्था।
- उनका फसल में वितरण।
- फसल के पुष्पों की ओर उनका आकर्षण।
- अन्य प्रतिस्पर्धी कीट।

मधुमक्खियों द्वारा संपूर्ण परागण के लिए बक्सों की एक आदर्श संख्या शोधकर्ताओं द्वारा सुनिश्चित की गई है जो कि 3-9 प्रति हेक्टेयर भारतीय मधुमक्खियों के लिए तथा 2-5 बक्से प्रति हेक्टेयर यूरोपियन मधुमक्खी के लिए है।

- मधुमक्खियां प्रायः परागकण व मकरंद (पुष्परस) को एकत्र करने के लिए 1-2 किलोमीटर तक की दूरी तय करती है और पुनः भोज्य एकत्र करने के पश्चात् उनके भंडारण के लिए अपने बक्सों में लौट आती हैं। अतः इस बात को ध्यान में रखते हुए ही बक्सों को स्थापित करना चाहिए।
- सदैव ही ध्यान रखें कि मधुमक्खी के बक्सों को

पुष्पान्वित फसलों के बहुत समीप रखें ताकि श्रमिक मक्खियां कम ही ऊर्जा व्यय कर उचित मात्रा में पराग व मकरंद वापस बक्सों में ला सकें। जितना लंबा मार्ग तय कर श्रमिक मक्खी पुष्पों तक जाएगी वह अपनी उतनी ही ऊर्जा व समय व्यर्थ में नष्ट करेगी।

- मधुमक्खी के बक्से जो फसलों के परागण के लिए फसल के समीप रखे गए हों उनमें कम से कम 5-6 सांचे (फ्रेम) अवश्य होने चाहिए।
- सांचे (फ्रेम) में सील शिशुओं की संख्या भी पर्याप्त होनी चाहिए ताकि नई श्रमिक मक्खियां बक्से से आती रहें।
- बक्से में उपस्थित रानी मधुमक्खी भी स्वस्थ अवस्था में होनी चाहिए ताकि वह समय समय पर अंडे दे कर बक्से की सुदृढता को बनाए रखे।
- बहुतायत पुष्प वाली फसल से श्रमिक मक्खियां प्रतिदिन ज्यादा मात्रा में परागकण व पुष्प रस एकत्र करती हैं। अतः बक्सों में कुछ खाली साँचे (फ्रेम) रखकर या मधुकक्ष को जोड़ कर श्रमिक मक्खियों को अतिरिक्त पराग व पुष्परस एकत्र करने व उनका भंडारण करने के लिए उचित प्रबंध करना चाहिए।
- मधुमक्खियों की उड़ान पर वातावरण के तापमान का भी सीधा असर पड़ता है। यदि तापमान लगभग 18.5° से 20° सेल्सियस हो तो मधुमक्खियां 100 प्रतिशत रूप से सक्रिय होती हैं, जबकि तापमान गिरने पर यह सक्रियता कम होती जाती है और 10.5° सेल्सियस तापमान पर उनकी सक्रियता घटकर केवल 6 प्रतिशत ही रह जाती है।
- यदि परागण की प्रक्रिया के समय तापमान बहुत ज्यादा हो तो बक्सों की सुरक्षा के लिए बक्से के ऊपर जूट बोरे को पानी में भिगोकर रख देना चाहिए। इससे मधुमक्खियों को अधिक तापक्रम से राहत मिलती है।
- ठीक उसी प्रकार ठंड के समय रात्रि में तापमान में अधिक गिरावट होने की दशा में बक्सों को किसी तापमान अवरोधी कपड़े या धान के भूसे से ढककर (मुख्य द्वार को छोड़कर) बंद कर देना चाहिए।
- तेज हवा चलने से भी मधुमक्खियां अपना कार्य बंद कर देती है।
- बागों में या फसलों में मधुमक्खी के बक्सों को जब 5-10 प्रतिशत पुष्प खिल जाएं तभी रखना चाहिए, क्योंकि यदि हम पुष्प खिलने से पूर्व ही बक्से बागों या फसलों में रखेंगे तो मधुमक्खियां अन्य पुष्पस्रोतों की तरफ आकर्षित हो सकती हैं।
- बक्सों को हमेशा 3-4 के झुंड में ही रखना चाहिए तथा एक झुंड को दूसरे झुंड से लगभग 200 मीटर के अंतर पर रखना चाहिए।
- बक्सों को सदैव पूर्व दिशा की ओर रखना चाहिए जिस से प्रातः पहली किरण के साथ श्रमिक मक्खियां सक्रिय होकर, अपना कार्य प्रारंभ कर दें।
- मधुमक्खी द्वारा सफल व सुनिश्चित परागण के लिए क्षेत्र के किसानों व मधुमक्खी पालकों का आपसी सहयोग व तालमेल होना बहुत आवश्यक है। जब तक बक्सों को परागण के लिए फसलों व बागों में रखा जा रहा हो तब तक किसानों को चाहिए कि वह किसी भी प्रकार के कीटनाशियों व दवाओं का प्रयोग अपनी फसलों पर न करें।

6

फल और सब्जियों का निर्जलीकरण

डॉ. प्रेरणा नाथ और डॉ. एस.जे. काले

फल एवं सब्जियां हमारे जीवन का आवश्यक अंग हैं। विभिन्न पोषक तत्वों एवं प्रतिआक्सीकारकों के कारण ताजे फलों को 'रक्षात्मक आहार' माना जाता है। भारत में हर प्रकार के फलों का उत्पादन होता है क्योंकि हमारे देश में अलग-अलग क्षेत्रों की जलवायु विभिन्न फलों को उगाने हेतु अनुकूल है। फल हमारे शरीर में विटामिन व खनिज तत्वों की आवश्यकता को पूरा करते हैं। परंतु फलों को तोडने के बाद इनमें श्वसन तथा वाष्पोत्सर्जन क्रियाएं होती रहती हैं जिसके कारण ये तुड़ाई के बाद ज्यादा समय तक ताजी अवस्था में नहीं रह सकते तथा शीघ्र ही समुचित व्यवस्था न होने के कारण सड़ने-गलने लगते हैं और नष्ट हो जाते हैं। इन्हें नष्ट होने से बचाने के लिए तुड़ाई के बाद इन की देखरेख आवश्यक है। साथ ही यह भी जरूरी है कि मौसम में जब पैदावार बहुत अधिक हो तो किसानों को इन्हें मजबूरन सस्ता ना बेचना पड़े। हमारे देश में पैदा होने वाले लगभग 300 मिलियन टन फलों और सब्जियों का लगभग 25-30 प्रतिशत भाग कटाई और तुड़ाई के बाद उपभोक्ता तक पहुंचते-पहुंचते नष्ट हो जाता है जिसका प्रभाव किसानों और उपभोक्ताओं पर पड़ता है और केवल 5-6 प्रतिशत भाग ही परिरक्षित किया जाता है।

फलों व सब्जियों का परिरक्षण : ताजे फलों एवं सब्जियों को विभिन्न तकनीकों द्वारा सुरक्षित रखा जा सकता है, जैसे निर्जलीकरण, डिब्बाबंदी, शीत कक्षों में भंडारण, जूस निकालना आदि। खाद्य परिरक्षण विधियों में से एक पुरानी विधि है 'निर्जलीकरण' अर्थात खाद्य पदार्थों को धूप आदि में सुखाकर संरक्षित करना। इससे पानी की गतिविधि कम हो जाने से जीवाणुओं का विकास बंद हो जाता है। मौसम में जब फल सस्ती दर पर मिलते हैं तो इन्हें सुखाकर बेमौसम में भी उपलब्ध करवाया जा सकता है। आजकल आधुनिक मशीनों से खाद्य पदार्थों को सुखा कर मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार किए जाते हैं, जिनकी बाजार में बहुत मांग है। फलों से कई उत्पाद (जैम, जैली, स्क्वैश इत्यादि) बनाकर उन्हें लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है, उसी तरह फलों में मौजूद पानी को सुखाकर (निर्जलीकरण) भी उन्हें लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। जरूरत पडने पर इन सूखे फलों को सीधे या पानी में डुबोकर फिर से ताजा करके खाया जा सकता है। यह बहुत ही कम लागत वाली तकनीक है, जिससे फलों को सुरक्षित करके बहुत लंबे समय तक उपयोग में लाया जा सकता है। इस तरह करने से फल का मूल्यवर्धन भी होता है और फलों को सुखाकर लाभ कमाया जा सकता है। खजूर, सेब, खुबानी, बेर आदि फलों को सुखाकर बहुत ही स्वादिष्ट और पोषण से भरपूर उत्पाद तैयार किए जाते हैं, जो बाजार में बहुत ही लोकप्रिय हैं।

फलों एवं सब्जियों का निर्जलीकरण : निर्जलीकरण

करने के लिए नियंत्रित वातावरण (तापमान, आर्द्रता तथा वायु) में कृत्रिम ऊर्जा के प्रयोग द्वारा जल की मात्रा को कम करने की प्रक्रिया है। निर्जलीकरण का मुख्य उद्देश्य फलों तथा सब्जियों में उस मात्रा तक जहां सूक्ष्म जीव निर्वाह नहीं कर पाएं तथा उनका गुणन ना हो पाए, मुक्त जल को कम करना है। इसी के साथ ठोस तत्वों तथा शर्करा, कार्बनिक अम्ल आदि को सूक्ष्म जीव के अवरोधन के लिए भी संकेंद्रित परासरणी विधि का भी प्रयोग किया जा सकता है। अतः फल एवं सब्जियों की क्रियाशीलता क्रमश: जल तत्व की कमी, पैकेजिंग, जैविक नियंत्रण तथा रासायनिक उपचार जिन्हें नष्ट होने वाली सामग्री के संरक्षण को सुगम बनाती हैं। फल एवं सब्जियों के निर्जलीकरण में हवा के दो सिद्धांत कार्य करते हैं। उत्पाद को उष्मा यंत्र से उष्मा देनी होती है जिसके कारण उत्पाद में स्थित जल वाष्पीकृत होता है तथा यह बाहरी वातावरण में नमी के हस्तांतरण का मार्ग भी बनती है। दोनों ही कार्य महत्वपूर्ण और जरूरी हैं।

निर्जलीकरण के मुख्य लाभ

1. उत्पाद का भार लगभग एक चौथाई तक रह जाता है जिससे ढुलाई का खर्चा बहुत कम हो जाता है।
2. उत्पाद का आकार घटने के कारण भंडारण के लिए कम जगह की आवश्यकता होती है।
3. निर्जलीकरण का मुख्य कैलोरी पर कम प्रभाव पड़ता है तथा फल और सब्जियों को परिरक्षण भी होता है। इससे खनिज तत्वों पर भी प्रभाव नहीं पड़ता।
4. पर्याप्त भंडारण के अंतर्गत शुष्क फल और सब्जियों की निधानी आयु असीमित होती है।
5. परिवहन, रख-रखाव तथा भंडारण लागत भी कम हो जाती है।
6. खरीदी गई समस्त सामग्री को उपभोक्ता द्वारा पूर्ण रुप से उपयोग किया जाता है। इस प्रकार अपशिष्ट के निपटारे में वायु प्रदूषण की कोई समस्या नहीं होती।
7. सूखे फल और सब्जियों में पोषक तत्वों की सांद्रता बहुत अधिक होती है।
8. सूखे खाद्य पदार्थ आहार को विविधता प्रदान करते हैं एवं उपभोक्ताओं के लिए तैयार सुविधाजनक भोजन प्रदान करते हैं।
9. अन्य परिरक्षण की विधियों की तुलना में, फल और सब्जियों का निर्जलीकरण सस्ता और सरल विकल्प है।

बागवानी फसलों को सुखाने की सामान्य विधि

सामग्री व मात्रा

सामग्री	मात्रा
फल	100 किलोग्राम
पानी	100 लीटर
पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट (के.एम.एस.)	500 ग्राम
गंधक	5 किलोग्राम

विधि

- पक्के एवं धब्बे रहित फल लें। साफ पानी से धो लें।
- किसी प्रकार के गले हुए और खराब हिस्से को हटा दें। छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लें।
- पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट, गंधक से तालिका 1 के अनुसार उपचारित करें।
- उपचारित फलों को साफ एल्युमिनियम या स्टील की ट्रे में फैला कर ड्रायर में 50-60 डिग्री सेल्सियस पर सुखा लें। सुखाने के बाद तैयार उत्पाद को साफ बर्तन या प्लास्टिक के थैलियों में डाल कर सील कर दें।
- भंडारण के लिए साफ, ठंडी एवं शुष्क जगह का ही चुनाव करें।

फलों का निर्जलीकरण

तैयार फलों को धोकर, छीलकर तथा साफ सुथरा कर लकड़ी या एल्युमिनियम की ट्रे में फैलाकर छायादार स्थान पर रखते हैं। इस के बाद उनका रंग बनाए रखने के लिए तथा सूक्ष्मजीवों से बचाए रखने के लिए उसमें सल्फर का धुआं दिया जाता है। तदुपरांत उन्हें ड्रायर में सुखाया जाता है।

सल्फर का धुआं देना

सल्फर का धुआं देने का कार्य ठोस लकड़ी से बने बंद चैंबर में रखे गए सल्फर बॉक्स में किया जाता है। इस के अंदर तैयार फलों को लकड़ी की ट्रे में रखा जाता है। चैंबर के पीछे की सतह पर सल्फर को ट्रे या मिट्टी के बर्तन में जलाया जाता है। प्रतिऑक्सीकारक तथा परिरक्षण लक्षणों के लिए सल्फर डाई-ऑक्साइड प्रयोग में लाई जाती है। सल्फर डाई-ऑक्साइड के उपचार से भूरापन रुकता है एवं कैरोटीन तथा एस्कॉर्बिक अम्ल के नष्ट होने को कम किया जा सकता है। 10 किलोग्राम फलों के लिए लगभग 100 ग्राम गंधक की आवश्यकता होती है। बाद में उपचारित फलों को धूप में या डीहाइड्रेटर में सुखाया जा सकता है। फल 15 से 25 प्रतिशत तक जबकि अधिकांश सब्जियां 4 प्रतिशत नमी तक सुखाई जाती हैं। अधिकांश चूर्णों को दो से तीन प्रतिशत नमी तक सुखाय़ा जाता है।

पैकेजिंग एवं भंडारण

सुखाए गए फलों की नमी को बराबर रखने के लिए उन्हें डिब्बों में या टाट के थैलों में भरा जाता है। इस प्रक्रिया को 'स्वेटिंग' कहा जाता है। अंतिम उत्पाद को तब डिब्बों या घर्षणदार सतह वाले टीनों या प्लास्टिक की थैली में डिब्बाबंद की जाती है तथा इसे वायु-रोधित किया जाता है। इस कंटेनरों को कीटों तथा चूहों आदि से मुक्त कमरे में रखा जाता है। फलों को सुखाने की समय सूची चित्र-1 में दी गई है।

सब्जियों का निर्जलीकरण

सब्जियों, विशेषकर कंदीय सब्जियों, को पानी से अच्छी तरह धोया जाता है ताकि उन पर मिट्टी ना रहे । सब्जियों को छीला जाता है और टुकड़े किए जाते हैं। किण्वक निष्क्रियता क्रम में तैयार की गई सब्जियों को उबलते हुए पानी में या भाप में डुबोकर और पानी में डालकर ठंडा किया जाता है और बाद में पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट युक्त पानी में डुबोया जाता है। इन पूर्व उपचारों से सब्जियों का अपना प्राकृतिक रंग बना रहता है, भूरापन रुका रहता है और ये लंबी अवधि तक परिरक्षित की जा सकती हैं। प्याज और लहसुन को ना तो डुबोया जाता है और ना ही उनका सल्फीकरण किया जाता है। हरी पत्तेदार सब्जियों को 01 प्रतिशत मैग्नीशियम ऑक्साइड, 01 प्रतिशत सोडियम बाइकार्बोनेट, 05 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट वाले उबले हुए जल में डुबोया जा सकता है। सब्जियों को तैयार करने को विवरण तालिका 2 में दिया गया है।

ब्लांचिंग (धवलीकरण)

तैयार सब्जियों को 3 से 7 मिनट तक उबलते पानी या भाप में रखा जाता है, जो सब्जी के प्रकार पर निर्भर करता है तथा उसके बाद उसे ठंडे पानी से धोया जाता है। ब्लांचिंग की क्षमता का मूल्यांकन एंजाइम नकारात्मक परीक्षण द्वारा की जाती है। उबलते हुए पानी या भाप में ब्लांचिग से जीवाणुओं की सारी प्रक्रियाएं रुक जाती हैं एवं सूक्ष्मजीव नष्ट हो जाते हैं। इससे एंजाइम भी निष्क्रिय हो जाते हैं जिससे रंगहीनता आ जाती है । स्वाद और गंध बदल जाते हैं, रंग हरा हो जाता है तथा सब्जियों में कसैलापन समाप्त हो जाता है। ब्लांचिंग के समय में विविधता होती है। सामान्यत: पत्ते वाली सब्जियों के लिए एक से 3 मिनट, मटर, बीन तथा दाने वाली सब्जियों के लिए 3 से 8 मिनट, तथा आलू, गाजर और इसी तरह की अन्य सब्जियों के लिए 3 से 6 मिनट का समय पर्याप्त है।

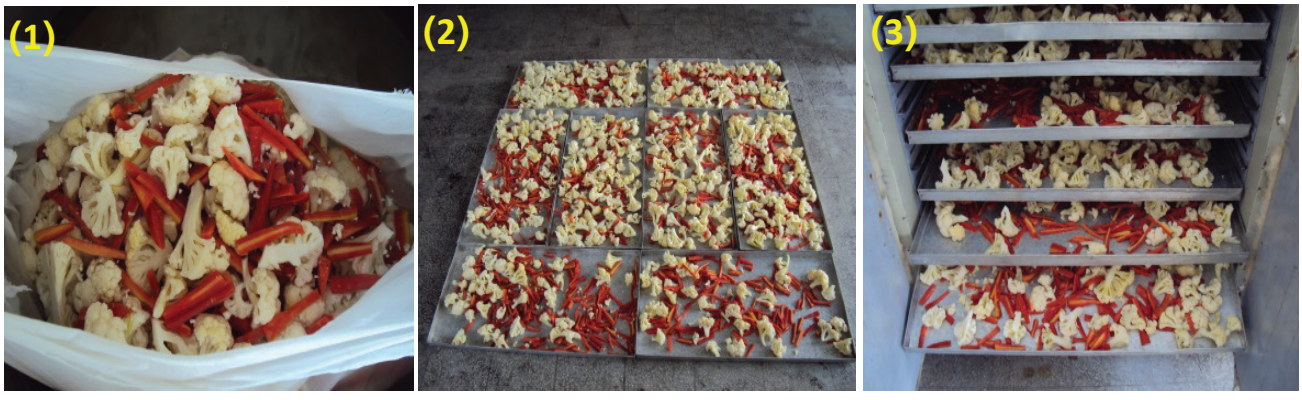

चित्र 1. सब्जियां सुखाने के कुछ महत्वपूर्ण चरण
(1) ब्लांचिंग प्रक्रिया (2) सुखाने से पहले ब्लांच्ड सब्जी को ट्रे में फैलाना
(3) उचित तापमान पर ट्रे ड्रायर में सब्जी सुखाना

सल्फीकरण, पैकिंग और भंडारण

तैयार की गई सब्जियों को पर्याप्त समय के लिए पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट के 0.5 प्रतिशत घोल में डुबोकर सल्फीकरण किया जाता है। 2 किलो सब्जी के लिए एक किलो घोल पर्याप्त होता है। इसके बाद उपचारित सब्जियां या तो सीधे धूप में या निर्जलीकरण मशीन में सुखाई जाती हैं। सूखी हुई सब्जियों को टीन में रखा जाना चाहिए । इन्हें अच्छी तरह बंद कर दें ताकि हवा न आ-जा सके और सूखी तथा ठंडी जगह में रखें।

फल एवं सब्जियों के निर्जलीकृत उत्पाद

आंवला कतरन (श्रेड्स)

सामग्री	मात्रा
आंवला (कद्दूकस किया हुआ)	100 किलोग्राम
पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट	300 ग्राम

आंवला चूर्ण बनाने की विधि

- साफ एवं धब्बे रहित फलों का ही प्रयोग करें। इन्हें अच्छी तरह से साफ पानी से धो लें।
- फलों को कद्दूकस कर लें और 0.3 प्रतिशत

चित्र 2: (1) आंवला घर्षणी द्वारा आंवला कतरन (श्रेड्स) तैयार करना (2) आंवला के श्रेड्स
(3) सूखे हुए आंवला श्रेड्स

पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट के साथ 3 मिनट तक गर्म करें।

- पकाने के बाद इसे 60° सेल्सियस तापमान पर सुखा लें।
- अच्छी तरह सूखने के बाद श्रेड्स को पैक कर लें या पीसकर चूर्ण बना लें।
- इस चूर्ण को छान लें। लिफाफे में भरकर सील कर दें।
- भंडारण के लिए साफ ठंडी एवं नमी रहित स्थान का चुनाव करें।

सावधानियां

- सुखाते समय तापमान का निरीक्षण करते रहें। अन्यथा तापमान बढ़ जाने से मिश्रण जलकर खराब हो सकता है।
- पाउडर की पैकिंग करने के बाद एक बार सील अवश्य चेक कर लें।
- भंडारण के लिए किसी साफ एवं नमी रहित स्थान का ही चुनाव करें।

आम का चूर्ण

सामग्री	मात्रा
फल	100 किलोग्राम
चीनी	100 किलोग्राम
पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट	200 ग्राम

आम का चूर्ण बनाने की विधि

- पूरी तरह से पके हुए आम के फलों का चुनाव करें। इन्हें साफ पानी से धोकर लंबी-लंबी फांकों में काट लें।
- कटी हुई फांकों को बराबर मात्रा के 70° ब्रिक्स चीनी के घोल में लगभग 3-5 मिनट के लिए डाल दें।
- चीनी के घोल में 0.1 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट डाल दें।
- आम की फांकों को चीनी के घोल से निथार लें और सूखने के लिए ट्रे ड्रायर में 60° सेल्सियस तापमान पर 10-12 प्रतिशत नमी तक सुखाएं।
- सूखी हुई फांकों को पीसकर चूर्ण बना लें। चूर्ण को प्लास्टिक की पन्नी में पैक करें तथा नमी रहित जगह पर भंडारण करें।

चूर्ण के उपयोग एवं लाभ

- यह उत्पाद बिना किसी तैयारी के खाया जा सकता है।
- इससे दूसरे मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे आम की लस्सी, आइसक्रीम, दही, श्रीखंड, शेक आदि बनाए जा सकते हैं।
- इस तकनीक को आसानी से लघु एवं कुटीर उद्योगों के रूप में अपनाया जा सकता है।
- यह उत्पाद बीटा कैरोटीन का अच्छा स्रोत है।
- इसे मूलभूत सामग्री के रूप में अन्य मूल्यवर्धित उत्पादों को बनाने के काम में लाया जा सकता है।

टमाटर का चूर्ण

टमाटर का रस निकालने के बाद जो छिलके बच जाते हैं उनको फेंकने से अच्छा है कि उनका चूर्ण बनाया जाए। टमाटर लाईकोपीन का अच्छा स्रोत होता है और यह छिलके में उच्च मात्रा में होता है।

टमाटर का चूर्ण बनाने की विधि

- प्लास्टिक की पन्नी पर थोड़ा सा तेल लगा लें ताकि टमाटर उसे चिपके नहीं।
- टमाटर के छिलकों को अच्छी तरह से ट्रे पर फैला दें।
- ट्रे ड्रायर में इन्हें 60° सेल्सियस तापमान पर सुखा लें एवं ग्राइंडर में पीसकर पैक करें।

चित्र 3: टमाटर का चूर्ण
(1) टमाटर (2) टमाटर का जूस (3) टमाटर का गूदा (4) टमाटर का जूस निकालने के बाद बचे हुए गुदे को ट्रे में फैलाना (5) टमाटर का तैयार चूर्ण

प्याज का चूर्ण

सामग्री	मात्रा
प्याज (सफेद)	एक किलोग्राम
पानी	धोने के लिए

प्याज का चूर्ण बनाने की विधि

- पूरी तरह से तैयार प्याज लें।
- चाकू की सहायता से प्याज को छील लें एवं साफ पानी से धो लें।
- स्लाइसर या चाकू की सहायता से इसकी करतने (स्लाइस) कर लें।
- इन्हें ट्रे ड्रायर में 60° सेल्सियस तापमान पर सुखा लें जब तक इसकी नमी की मात्रा 10 प्रतिशत से नीचे ना आ जाए।
- सुखे हुए प्याज की मिक्सर ग्राइंडर में डालकर पीस लें और चूर्ण बना लें।
- अच्छी तरह साफ पन्नी में पैक करें और सूखी जगह पर भंडारण करें।

उपयोग एवं लाभ

- यह उत्पाद सब्जी, सूप एवं चटनी बनाने के काम में लाया जा सकता है।
- इस उत्पाद की आयु लंबी होने के कारण काफी सारा प्याज इस तरीके से प्रसंस्कृत किया जा सकता है।
- इस तकनीक को आसानी से छोटे एवं कुटीर उद्योगों में अपनाया जा सकता है।

सूखे हुए गाजर के लच्छे

सामग्री	मात्रा
गाजर	1 किलोग्राम
चीनी	700 ग्राम
पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट	2.5 ग्राम

सूखे हुए गाजर के लच्छे बनाने की विधि

- पूरी तरह पकी एवं तैयार गाजर का चुनाव करें।
- इन्हें साफ पानी में अच्छी तरह धोकर छील लें।
- कद्दूकस की सहायता से गाजर के लच्छे बना लें।
- कटी हुई गाजर को 2 से 3 मिनट तक गर्म पानी में ब्लांच करें।
- ब्लांच हुए लच्छों को चीनी के घोल में लगभग 40 से 45 मिनट तक रखें जिसमें 0.25 पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट डाला हुआ हो।
- इन लच्छों को ट्रे ड्रायर में सुखा लें।
- बीच-बीच में पलटते रहें। गाजर की नमी 8-10 प्रतिशत होने पर इन्हें साफ पन्नी में पैक करें एवं भंडारित करें।

उपयोग एवं लाभ

- यह उत्पाद बिना किसी तैयारी के खाया जा सकता है।
- इसे दूसरे मूल्यवर्धित उत्पादों जैसे गाजर का हलवा, गाजर की आइसक्रीम, खीर, बर्फी, पुलाव, मीठे चावल बनाने के कार्य में लाया जा सकता है।
- इस तकनीक को आसानी से लघु एवं कुटीर उद्योगों में अपनाया जा सकता है।
- यह कैरोटीन का भी अच्छा स्रोत है।
- इसे मूलभूत सामग्री के रूप में अन्य मूल्यवर्धित उत्पादों को बनाने के काम में लाया जा सकता हैं।

निर्जलीकरण में सावधानियां एवं याद रखने योग्य बातें

- साफ एवं धब्बा-रहित फलों का ही प्रयोग करें।
- फल का किसी भी प्रकार का गला-सड़ा हिस्सा निकाल कर अलग कर दें अन्यथा इससे तैयार उत्पाद खराब हो सकता है।

तालिका 1: कुछ खास फलों को सुखाने से संबंधित जानकारी

फल	फलों की तैयारी	गंधक से उपचारित करने का समय (मिनट)	सुखाने का तापमान (°सेल्सियस)	सुखाने का समय (दिन)
सेब	छीलकर, बीच का हिस्सा निकाल दें, 5 मि.मी मोटे टुकडे काटें।	15-30	60-65	6-10
खुबानी	दो टुकड़ों में काटें और गुठली अलग कर दें।	20-25	55-65	10-12
केला	छीलकर 10 मि.मी मोटे टुकड़ों में काट लें।	15-30	55-65	18-20
अंगूर	5 सेकंड के लिए 0.2 प्रतिशत कास्टिक सोडे के घोल में उबालकर धो लें।	10-15	65-70	20-30
आम	छीलकर 10 मि.मी. मोटे टुकड़ों में काटें।	120	55-60	10-12
पपीता	छीलकर 5 मि.मी मोटे टुकड़ों में काटें।	120	55-60	10-12
आड़ू	आधा काटें, छीलें तथा गुठली निकाल दें।	20-25	60-65	15-20
नाशपाती	आधा काटें, छीलें तथा बीज वाला भाग निकाल दें।	15-20	60-65	15-24
अनानास	छीलकर 5 मि.मी मोटे टुकड़ों में काटें।	120	55-60	10-15

- सुखाने से पहले कुछ खास फलों को उपचारित करना आवश्यक है। इसके लिए किसी बंद कमरे या बक्से में गंधक को जलाकर उसका धुआं देना चाहिए या पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट के घोल में निर्धारित समय तक रखना चाहिए। इस तरह फलों का रंग खराब नहीं होता है और भंडारण के दौरान कीटों का प्रभाव भी कम होता है।
- धूप में सुखाते समय इन पर बारीक मलमल का कपड़ा डाल देना चाहिए, जिससे इन्हें धूल, मक्खियों तथा कीटों से बचाया जा सके।
- इन्हें समय-समय पर पलटते रहें ताकि कोई भी भाग बिना सूखे न रह जाए।
- समय-समय पर तापमान देखते रहें अन्यथा कई बार तापमान अधिक बढ़ जाने से उत्पाद जल भी सकता है। भंडारण के लिए ठंडे एवं नमी रहित स्थान का ही चुनाव करें।

तालिका 2: सब्जियों को सुखाने से पहले उपचार

सब्जियों	तैयारी	उबलते पानी में डुबोना	0.5 के एम.एस. में सल्फीकरण
आलू	छीलकर 3 मिलीमीटर मोटाई में टुकडे काटें	3-4 मि.	30 मि.
गाजर	-यही-	4-5 मि.	30 मि.
भिंडी	दोनों किनारों को काटकर 6 सेंटीमीटर मोटाई के टुकडे काटें	5-6 मि.	30 मि.
पत्तागोभी	ऊपरी परत को हटा दें और 4 से 8 मिलीमीटर मोटे टुकड़े काटें	5-6 मि.	30 मि.
फूलगोभी	डंठल पत्तियों को हटा दें और 10 मिलीमीटर मोटे टुकड़ो में काटें	5-6 मि.	30 मि.
मटर	फलियों को छीलें	पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट, सोडियम बाईकार्बोनेट और मैग्नीशियम ऑक्साइड वाले पानी	30 मि.
पालक	छंटाई कर के पानी में अच्छी तरह धोएं और 10 मिलीमीटर टुकड़ों में काटें	-यही-	शून्य
मेथी	छंटाई कर के डंठलों और तनों को हटा दें, अच्छी तरह धोएं	2-3 मिनट तक डुबोएं	शून्य
प्याज	छिलका हटा दें और मोटाई के टुकड़ों में काटें	शून्य	शून्य
लहसुन	छिलकों को छील दें और 6 मिली मी. के मोटे टुकड़ों में काटें	शून्य	शून्य
करेला	दोनों ओर से किनारे काट दें और 6 मिली मी. के मोटे टुकड़ों में काटें	8 मिनट तक उबलते हुए पानी में डुबोएं	30 मि.
लौकी	छीलकर बीज निकाल दें और मुलायम भागों को 6 मिमी की घनाकृतियों में काटें	2 मिनट तक डुबोएं	30 मि.

तालिका 3: लघु स्तर पर बागवानी फसलों को सुखाने के लिए उपयोग में आने वाली उपयुक्त उपकरण, क्षमता एवं अनुमानित मूल्य :

क्र.स.	मशीनरी एवं उपकरण का नाम	क्षमता (किग्रा प्रति घंटा)	अनुमानित मूल्य (लाख रू)	उद्देश्य एवं उपयोग	चित्र
1.	ट्रे ड्रायर (ट्रे शुष्कारित्र)	50	1.2-1.5	विभिन्न फलों को सुखाने के लिए	
2.	संघनिच (कॉसेन्ट्रेटर) (इलेक्ट्रिक के कैटल)	80	0.5-0.7	फल की ब्लाँचिंग के लिए	

7

दलहनी एवं तिलहनी फसलों का मूल्यवर्धन

डॉ. अल्का जोशी एवं डॉ. राम रोशन शर्मा

भारत में दलहनी एवं तिलहनी, दोनों फसलों का अत्यधिक महत्व है क्योंकि एक तो भारत में अनुमानन सभी दलहनी एवं तिलहनी फसलें उगाई जाती हैं, दूसरे दोनों ही हमारे रोजमर्रा के भोजन का अभिन्न हिस्सा हैं। दलहनी एवं तिलहनी, दोनों में ही प्रतिपोषक तत्व पाए जाते हैं। प्रतिपोषक वे तत्व हैं जिनका कोई पोषणीय महत्व नहीं होता तथा ये अन्य पोषक तत्वों के महत्व को भी कम कर देते हैं जैसे ट्रिप्सिन संदमक, हीमग्लूटिनिन इत्यादि। क्योंकि अनुमानन सभी प्रतिपोषक तत्व तापमान से प्रभावित होते हैं, अतः जो भी उत्पाद दलहन एवं तिलहन से बनाए जाएं उन्हें उच्च ताप से उपचारित करना अत्यंत आवश्यक होता है, जैसे उबालना, भूनना या तलना, माइक्रोवेव, बेकिंग करना आदि। उच्च तापमान के उपचार के अभाव में यह प्रतिपोषक तत्व भोजन की गुणवत्ता को कम कर देते हैं तथा शरीर में अन्य पोषक तत्वों की उपलब्ध्ता को भी प्रभावित करते हैं। इस दृष्टि से भी दलहनों एवं तिलहनों दोनों के लिए ही प्रसंस्करण आवश्यक है। साथ ही साथ प्रसंस्करण द्वारा रोज खाने के विकल्पों में भिन्नता लाई जा सकती है तथा मूल्यवर्धन द्वारा आय में भी बढ़ोतरी की जा सकती है।

दलहनी फसलों का मूल्यवर्धन

दालें प्रोटीन की उच्च स्रोत मानी जाती हैं जिनमें साधारणतः 20 से 40 प्रतिशत तक प्रोटीन पाई जाती है। शाकाहारियों के लिए दालें उच्च प्रोटीन की एक मात्र स्रोत होती हैं। प्रोटीन शरीर के सम्पूर्ण विकास के लिए अति आवश्यक वृहत पोषक तत्व है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, कम से कम 80 ग्राम प्रोटीन मानव को रोज खाने की सलाह दी जाती हैं। इस हिसाब से यदि दूध उत्पादन को साथ में लें तो भी 55 ग्राम दालों को प्रतिदिन खाने की सलाह दी जाती है ।

बाजार में मिलने वाली दालों में प्रमुख रूप से चना, अरहर, मसूर, मूंग व राजमा हैं। इनके अतिरिक्त सोयाबीन भी प्रोटीन की महत्वपूर्ण स्रोत हैं किंतु इसमें स्टार्च की अनुपस्थिति के कारण यह अन्य दालों की भाँति नहीं बनाई जा सकती। मोटे तौर पर यदि सभी दालों के पोषक तत्वों को ध्यान से देखें तो दालों में अनुमानन 17.1 से 24.9 प्रतिशत तक प्रोटीन, 54.5 से 60.9 प्रतिशत तक कार्बोहाइड्रेट तथा 0.8 से 5.6 प्रतिशत तक वसा होता है । ये कैल्सियम, लौह तत्व व विटामिन बी की भी अच्छी स्रोत होती हैं। इस गणना में सोयाबीन को सम्मिलित नहीं किया गया है। अब प्रश्न उठता है कि दालों के प्रसंस्करण की आवश्यकता क्यों है?

दालों के प्रसंस्करण की आवश्यकता

दालों को कठोर संरचना के कारण, बिना प्रसंस्कृत किए खाना सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त जटिल

प्रोटीन संरचना, प्रतिपोषक तत्वों की उपस्थिति तथा पाचन शीलता में वृद्धि करने के लिए भी दालों का प्रसंस्करण आवश्यक है। इसके साथ ही रोजमर्रा के भोजन में विविधता के लिए भी बाजार में कई उत्पाद उपलब्ध हैं। इसमें प्रमुख है: दालों का आटा, भुने, तले, फ्लेक्ड (परत वाले) दाल के उत्पाद, सोया दूध, सोया पनीर, प्रोटीन की सघन स्रोत जैसे कंसन्ट्रेट आइसोलेट इत्यादि।

दालों का आटा: बेसन सभी घरों में बहुतायत से प्रयोग होता है साथ ही साथ बिस्कुट एवं चपाती में भी प्रोटीन की मात्रा को बढ़ाने के लिए दालों के आटे (मुख्यतः टूटे दाल के टुकड़ों) का प्रयोग होता है। मैदे की तुलना में दाल के आटे में लगभग दोगुना प्रोटीन होता है।

बेसन

भुने उत्पाद: भुने हुए दाल के उत्पाद जैसे चना, सोयाबीन, मूंगदाल आदि भी स्नैक्स के रूप में खाए जाते हैं।

भुने हुए चने

उत्सारित्र उत्पाद: उत्सारण तकनीक से भी कई तरह के आटे को मिश्रित कर फूले हुए विभिन्न बनावट वाले उत्पाद बनाए जाते हैं जो हल्के होने के कारण स्नैक्स के रूप में पसंद किए जाते हैं।

नमकीन: दाल की तली हुई नमकीन बहुत पुराने समय से ही पसंद की जाती है ।

दाल की नमकीन

किण्वित उत्पाद: किण्वन के बाद भिन्न-भिन्न प्रकार के उत्पाद तैयार किए जाते हैं जो स्वाद में दाल के मूल रूप से बिल्कुल भिन्न होते हैं जैसे सोया सॉस आदि। इसके साथ ही किण्वन के बाद कुछ ऐसे अवयव भी संश्लेषित हो जाते है जो मूलरूप से दालों में नहीं होते तथा दालों की पोषण गुणवत्ता में वृद्धि करते हैं।

सोया सॉस

अंकुरित उत्पाद: अंकुरण के बाद भी दालों के पोषणीय गुणों में वृद्धि दर्ज की गई है। यह कई प्रतिपोषक तत्वों को कम करने में सहायक है। उदाहरणार्थ अंकुरित मूंग, अंकुरित चना, अंकुरित राजमा इत्यादि ।

अंकुरित मूंग

मिष्ठान: मैसूर पाक, सोहन पपड़ी, लड्डू, बूंदी दालों से बनने वाली मिठाइयां हैं ।

मैसूर पाक

फ्लेक्ड उत्पाद: फ्लेक्ड (परती) उत्पादों में चने से भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान द्वारा उन्नत मूंग दाल से निर्मित परती उत्पाद सर्वप्रमुख हैं।

फ्लेक्ड चना

सोया उत्पाद: सोयाबीन, प्रोटीन की सर्वोच्च स्रोत एवं भिन्न संरचना के कारण अन्य दालों से भिन्न हैं। इससे बनने वाला सोया दूध एवं पनीर, संरचना एवं पोषक गुणों में सामान्य दुग्ध के समतुल्य है।

टेक्चराइज्ड सोया प्रोटीन: टेक्सचराइज्ड सोया प्रोटीन को जंतु प्रोटीन के विकल्प के रूप में जाना जाता है जिसकी बनावट जंतु मांसपेशियों की भाँति है तथा शाकाहारियों के लिए जंतु प्रोटीन का अति उत्तम विकल्प है ।

अन्य उत्पाद

इसके अतिरिक्त दाल के पापड़, सोया चॉकलेट आदि उत्पाद भी बाजार में उपलब्ध हैं। कई घरेलु उत्पाद भी मानकीकृत करके पैकिंग में उपलब्ध है, जैसे दही बड़ा, ढोकला इत्यादि।

दाल के पापड़

तिलहनी फसलों का मूल्यवर्धन

तिलहन, वसा की प्रधान स्रोत के रूप में उगाए जाते हैं। वसा तलने एवं भोजन को पकाने के लिए एक माध्यम के रूप में प्रयुक्त होता है। भारत तिलहनी फसलों का प्रमुख उत्पादक देश है क्योंकि भारतीय भोजन प्रणाली में तेलों का अति विशिष्ट स्थान है। विभिन्न तिलहनों में सोयाबीन, सरसों, मूंगफली, सूरजमुखी, बिनौला, कुसुम प्रमुख हैं। आजकल अलसी के तेल का भी बहुत प्रचलन है। विश्व स्वास्थ्य

संगठन के अनुसार रोजाना की कुल ऊर्जा का 30-35 प्रतिशत भाग वसा से प्राप्त होना चाहिए। ना केवल संतृप्त, अपितु असंतृप्त वसा अम्लों की भी शरीर को आवश्यकता होती है जिन्हें बिलकुल बराबर अनुपात (1:1) में लेने की सलाह दी जाती है। अतः स्वस्थ रहने के लिए दोनों प्रकार के वसा अम्ल आवश्यक हैं।

यह बात भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि वसा के साथ-साथ, तिलहन में प्रतिपोषक तत्व भी पाए जाते हैं। तिलहनों में विशेषतः सरसों के तेल में इरूसिक अम्ल एवं ग्लूकोसिनोलेट की समस्या बहुत है। यह भी प्रतिपोषक तत्व ही हैं। इनकी समस्या को ध्यान में रख कर वैज्ञानिको ने कनोला नामक सरसों की किस्म विकसित की है जिसमें रूपांतरण कर इरूसिक अम्ल एवं ग्लाइकोएल्कोलॉइड की मात्रा को अत्यंत कम कर दिया गया है।

साधारणतः तेल को, तिलहनों को दबा कर या विलायक निष्कर्षण विधि से अलग किया जाता है जिसमें रिफाइनिंग करके वसा के अतिरिक्त सभी तत्वों, अशुद्धियों को अलग कर दिया जाता है। निष्कर्षण के बाद शेष बचे हुए वसा रहित आटे (डिऑयल्ड केक) के रूप में भी तिलहनी फसलों का महत्व है क्योंकि वसा निकल जाने के बाद यह प्रोटीन का सघन स्रोत बन जाता है जिससे प्रोटीन कंसन्ट्रेट एवं आइसोलेट बनाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त तिलहनी फसलों से बन सकने वाले प्रमुख उत्पाद निम्नवत हैं।

तिलहनों से तेल का निष्कर्षण
(विलायक निष्कर्षण विधि द्वारा)

अपरिष्कृत तेलों की रिफाइनिंग

लेसिथिन: यह एक मूल्यवान उत्पाद है जो पायसीकारक की तरह कार्य करता है तथा परिशोधन का प्रमुख सह-उत्पाद है।

लेसिथिन

तिलहन सॉस: बाजार में सोयाबीन तथा सरसों से बने सॉस उपलब्ध हैं जो अपने विशिष्ट स्वाद एवं सुगंध के लिए जाने जाते हैं ।

सरसों की सॉस

मूंगफली एवं सोया दूध: दोनों ही संरचना एवं बनावट में सामान्य दूध के समतुल्य है तथा दोनों ही क्रमशः मूंगफली एवं सोयाबीन के पानी में सत्व हैं।

सोया एवं मूंगफली दूध

मूंगफली का मक्खन: आजकल बाजार में यह उच्च कोलेस्ट्रोल से पीड़ित लोगों की पहली पसंद बन गया है ।

मूंगफली का मक्खन

प्रोटीन सांद्र एवं विलग: जैसा कि पहले ही वर्णित है कि वसा रहित दलहन आटा प्रोटीन का अच्छा स्रोत है। इनसे प्रोटीन के अलावा अन्य सभी तत्वों को वैज्ञानिक तकनीक से निकाल कर प्रोटीन सांद्र एवं विलग बनाए जाते हैं जिनमें क्रमशः 70 एवं 90 प्रतिशत शुष्क भार के हिसाब से प्रोटीन होता है।

प्रोटीन कंसन्ट्रेट एवं आइसोलेट

मार्जरीन एवं शोर्टनिंग: कम लागत से बनने वाले ये उत्पाद मक्खन के विकल्प के रूप में बेकरी उत्पादों में प्रयुक्त किए जाते हैं।

मार्जरीन एवं शोर्टनिंग

मेयोनेज एवं सलाद ड्रेसिंग: कई प्रकार की मेयोनेज एवं सलाद ड्रेसिंग बाजार में उपलब्ध हैं जो सामान्य वनस्पति घी में विभिन्न स्तर तक हाइड्रोजनन से प्राप्त होती हैं।

किण्वन : जैसा कि दलहनी फसलों के लिए वर्णित है कि किण्वन से न केवल विभिन्न उत्पाद बनते हैं बल्कि पाचन एवं पोषण गुणों में भी वृद्धि होती है।

इसके अतिरिक्त सोया पनीर, टेक्सचराइज्ड सोया प्रोटीन, सोया दूध, सोयाबीन से बनने वाले ऐसे उत्पाद हैं जिनका कई जगह औद्योगिक स्तर पर दोहन हो रहा है। यहां सोयाबीन से बनने वाले दो-तीन ऐसे उत्पादों का वर्णन है जिन्हें आसानी से घर पर बनाया जा सकता है, जैसे सोया दूध, सोया पनीर (टोफू), सोया-नट्स इत्यादि। इसके अतिरिक्त कई तिलहन अचार बनाने में मसाले की भांति प्रयोग होते हैं। भारत में तो तेल (मुख्यतः सरसों का तेल) अचार को संरक्षित करने में भी प्रयुक्त होता है।

टेक्चराइज्ड सोया प्रोटीन

सोया दूध: सोया दूध दिखने एवं संरचना में गाय के दूध के समतुल्य है। इसे ठंडे पेय के रूप में भी पिया जा सकता है। इसे बनाने के लिए सोयाबीन को रातभर पानी में भिगाते हैं। आवश्यक लगे तो भिगोए बिना भी कुक्कर में एक दो सीटी देकर सोयाबीन की दृढ़ता को कम किया जा सकता है। अगले दिन पानी के साथ दोनों हाथों से मसलकर सोयाबीन का छिलका निकाल लेते हैं। इसके बीजपत्रों को सोयाबीन के भार से ढाई से तीन गुना गरम पानी के साथ पीसकर सूती कपड़े से छान लेते हैं। यह छना हुआ भाग ही सोया दूध है। सोया दूध की स्वीकार्यता गर्म अवस्था में कुछ कम होती है। इसे और अधिक स्वादिष्ट बनाने के लिए इसमें 7 प्रतिशत भार के हिसाब से चीनी मिला लेते हैं तथा ठंडा होने पर सुवास मिला लेते हैं। इस तरह ठंडे पेय के रूप में सोया दूध का आनंद लिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त भी तिलहनी एवं दलहनी फसलों से कई मूल्यवर्धित उत्पाद बनाए जाते हैं, जैसे सोयाबीन से मिलने वाला आइसोफ्लेवन, जिसका चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में बहुत महत्व है।

सोया पनीर: सोया पनीर, सोया दूध से बनने वाला एक उत्पाद है जो दिखने एवं बनाने में गाय एवं भैंस के दूध के पनीर की ही भांति होता है। सोया दूध में कोई भी खाने योग्य अवक्षेपण अवयव डालकर, सोया

पनीर प्राप्त किया जाता है। सोया पनीर बनाने के लिए सबसे पहले सोया दूध को गर्म करके इसमें 1-2 प्रतिशत कैल्सियम क्लोराइड, मैग्नीशियम क्लोराइड, लैक्टिक अम्ल अथवा सिट्रिक अम्ल के पानी में घोल बनाकर धीरे-धीरे डालते हैं जब तक पारदर्शी द्रव्य ठोस पनीर से अलग न हो जाए। उपरोक्त में से कोई एक भी अवक्षेपण कारक को उपयोग कर सकते हैं। यदि कोई कारक मौजूद न हो तो नींबू के रस से भी काम चला सकते हैं, क्योंकि यह भी सिट्रिक अम्ल का स्रोत है। अब ठोस पनीर को सूती कपड़े से छानकर एक सांचे की मदद से सुदृढ़ आकार देकर उपभोग करने तक रेफ्रिजिरेटर में रखते हैं। 5-7 दिन तक रखने के लिए कई लोग सोया पनीर को 1-5 प्रतिशत नमक के घोल में डुबाकर भी रखते हैं। यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि सोया दूध एवं सोया पनीर बनाने के समय सोया-अवशिष्ट (ओकारा) सूती कपड़े में रह जाता है जो कि व्यर्थ नहीं है। यह भी प्रोटीन एवं खाने योग्य रेशे का उत्तम स्रोत होता है। इसे सुखाकर, 5-10 प्रतिशत मात्रा में रोजाना आटे में मिलाकर रोटी एवं बिस्कुट जैसे उत्पादों की प्रोटीन मात्रा को आसानी से बढ़ाया जा सकता है। यह मानकर चलिए कि सोयाबीन का कोई भी भाग व्यर्थ नहीं है परंतु इसे प्रयुक्त करने की सही तकनीकी का ज्ञान होना आवश्यक है ।

सोया नट्सः सोया नट्स, सोयाबीन से बना एक नमकीन उत्पाद है जिसे स्नेक्स के रूप में काफी पसंद किया जाता है। सोयाबीन को रात भर पानी में डुबोकर, पानी के साथ हाथों से आराम से मसल कर, सोयाबीन के छिलकों को अलग कर लेते हैं। अलग-अलग किए गए बीजपत्रों को रिफाइंड तेल में तलकर सोया नट्स तैयार किए जाते हैं जिसमें स्वादानुसार नमक एवं मसाले मिलाकर नट्स की स्वीकार्यता को कई गुना बढ़ाया जा सकता है।

कई लोग उच्च वसायुक्त भोज्य को खाना पसंद नहीं करते। उनके लिए भा. कृ. अनु. प.- भा. कृ. अनु. स., पूसा संस्थान, नई दिल्ली में सोयाबीन को भूनकर नट्स बनाने की तकनीक का विकास किया है।

दलहनों एवं तिलहनों के महत्व को समझते हुए भारत सरकार के कई विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों में सोयाबीन पर अनुसंधान कार्य चल रहा है। इसमें गोविन्द वल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, भा. कृ. अनु. प.- भारतीय तिलहन अनुसंधान संस्थान, तेलंगाना, भा. कृ. अनु. प. - भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर, भा. कृ. अनु. प. - केंद्रीय कृषि आभियांत्रिकी संस्थान, भोपाल एवं भा. कृ. अनु. प. - सोयाबीन अनुसन्धान निदेशालय, इंदौर प्रमुख हैं। जहाँ दलहन एवं तिलहन के कई महत्वपूर्ण एवं स्वीकार्य उत्पाद एवं उन्नत किस्में विकसित की गई हैं। किस्मों का चुनाव उत्पाद की स्वीकार्यता में अति गहन प्रभाव डालता है। अतः आवश्यक यह है कि जब भी किसी उत्पाद को औद्योगिक रूप में बनाने का निर्णय लें तो किस्म का सही चुनाव वैज्ञानिक सलाह से अवश्य कर लें।

8

नागफनी - रेगिस्तान का एक उपेक्षित पोषक तत्व खजाना

डॉ.विजय राकेश रेड्डी, डॉ.रामकेश मीना, डॉ.डी.के. सरोलिया

नागफनी (केक्टस) केक्टसी कुल का पौधा है। इसका नाम प्राचीन यूनान शहर ओपस के नाम पर रखा गया है। थियोफ्रेस्टस के अनुसार, इसका प्रवर्धन पत्तियों द्वारा किया जाता है। इस पौधे में सूखा सहन करने की अद्भूत क्षमता होने के कारण इसे मरूभूमि पौधा कहा जाता है। इस पौधे का उत्पति स्थल पश्चिमी गोलार्ध माना जाता है। यद्यपि ये पौधे पर्वतों, उष्ण, आर्द्रउष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में भी पाए जाते हैं। भारत में इन पौधों को शोभाकारी पौधों हेतु उगाए जाते हैं। इन नागफनी पौधों को मरूस्थल में खेतों के परिधि में पशुओं से बचाने तथा वायु अवरोधक के रूप में उगाया जाता है। देश में नागफनी को विभिन्न प्रकार के आकर्षक रंगों के फूलों के कारण गमलों में अलंकृत फूलों के रूप में उगाते हैं। अधिकांश नागफनी में टहनिया एवं पत्तियां नहीं होती हैं। इसका तना सांप के फन के आकर के गूदेदार एवं मोटे दल वाले होते हैं। साधारणत: नागफनी की पत्तियों में बड़े स्थिर तथा मुलायम रोंए एवं कांटे होते हैं। वर्तमान समय में इस नागफनी पौधे में ऐसी जातियां भी पाई जाती हैं जिनमें बहुत ही पतले रोंएं होते हैं जिन्हें सब्जी बनाने तथा सलाद के रूप खाया जाने लगा है।

पोषण महत्व

नागफनी स्वाद में खट्टी और स्वभाव में बहुत गर्म होती है। यह पेट के अफारे को दूर करने वाली,

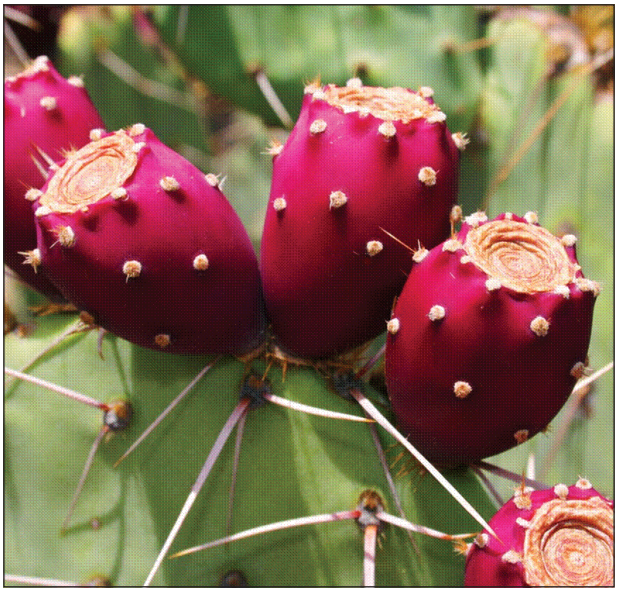

पाचक, एवं मूत्रल होती है। इसके पूरे भाग को औषधि के रूप में उपयोग किया जा सकता है। कान दर्द में इसकी 1-2 बूंदे डालने से लाभ होता है। खांसी में इसके फल को भूनकर खाने से लाभ होता है। इसके फल से बने शर्बत को पीने से शरीर के पित्त विकार दूर हो जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि इसके पत्तों का रस 2-5 ग्राम तक प्रतिदिन सेवन करने से कैंसर रोग का इलाज किया जा सकता है।

कई स्थानों पर नागफनी के नॉपलेस को खाया जाता है। नागफनी की कांटेदार नाशपती आकार की मांसल अंडाकार पत्तिया को 'पैडल्स' कहते हैं। यह पैडल्स बहुत ही मुलायम एवं कुरकरे की तरह होते हैं लेकिन जब इनको पकाया जाता है तो ये थोड़े चिपचिपे हो जाते हैं। यह खाद्य नागफनी थोड़ी नमक जैसी, शतावरी एवं हरी मिर्च के समान स्वाद जैसी होती है। इस में सभी प्रकार के विटामिन एवं खनिज लवण बहुतायत रूप में पाए जाते हैं। यह खाद्य नागफनी पूरे वर्ष में बहुत ही आसानी से राजस्थान में उपलब्ध रहती है।

तालिका 1 : नागफनी का पोषक मान

अवयव	मात्रा
उर्जा	172 किलो कैलोरी
कार्बोहाइड्रेटस	9.6 ग्राम
आहारी रेशा	3.6 ग्राम
वसा	0.5 ग्राम
प्रोटीन	2.5 ग्राम
राइबोफ्लेविन (B2)	0.1 मिलीग्राम (8%)
नियासीन	0.5 मिलीग्राम (3 %)
विटामिन (B6)	0.1 मिलीग्राम (8 %)
फोलेट	6 माइक्रोग्राम (2 %)
विटामिन सी	14 मिलीग्राम
विटामिन ई	0 मिलीग्राम (0 %)
कैल्शियम	56 मिलीग्राम (6 %)
लौह	0.3 मिलीग्राम (2 %)
मेग्निशियम	85 मिलीग्राम (24 %)
फास्फोरस	24 मिलीग्राम (3 %)
पोटेशियम	220 मिलीग्राम (5 %)
जिंक	0.1 मिलीग्राम (1 %)

स्रोत: USDA भोजन रचना डेटाबेस - 2016

इस खाद्य नागफनी को पॉलीथिन में पैक करके रेफ्रिजिरेटर में आसानी से लम्बे समय तक संगृहित किया जाता है। नागफनी के फल को कांटेदार-नाशपाती, केक्टस फल, केक्टस अंजीर और स्पेनिश में टुयूना के नाम से जाना जाता है। नागफनी के फल को उपयोग में लेने से पहले उपस्थित छोटे एवं नुकीले कांटे एवं रोंएं हटा देने चाहिए। कांटे हटाकर यह फल सलाद के रूप में भी खाया जा सकता है। कांटेदार फल कच्चा, भुना हुआ तथा उबालकर भी खाया जाता जा सकता है। नागफनी के फल विभिन्न रंगों में पाया जाता है, जैसे नारंगी से मेजेंटा, लाल, पीला, गहरा लाल, जो बहुत ही रसीला होता है। इनका उपयोग सूप बनाने, सलाद के रूप में एवं पेय पदार्थों के साथ जेली व केंडी बना सकते हैं। आजकल इस फल को अनन्नास की तरह लस्सी पर टोपिंग के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

नागफनी, कोलेस्ट्राल मुक्त, खाद्य रेशे युक्त, विटामिन, कैल्शियम तथा प्रति-ऑक्सीकारकों से भरपूर फसल है। इसमें पादप रसायनों जैसे पॉली फिनोल, गेलिक व बनेलिक अम्ल तथा केटकिन पाए जाते हैं। इसमें पाए जाने वाले पेक्टिन से बुरा कोलेस्ट्राल (कम घनत्व वाला) कम होता है। इसके गूदे में पाए जाने वाला रेशा रक्त में शर्करा की मात्रा नियंत्रित रखता है।

अत: खाद्य नागफनी को अपने भोजन में सम्मलित करने से पोषण उन्नयन के साथ हमारे शरीर को स्वस्थ रखने तथा इसे विभिन्न रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करने में सक्षम है।

9

लीची का भूरापन: समस्या एवं समाधान

डॉ.कल्याण बर्मन, डॉ.स्वाति शर्मा, डॉ.राम रोशन शर्मा, डॉ.विशाल नाथ और डॉ.पुष्पा कुमारी

लीची उपोष्ण जलवायु का आकर्षक लाल रंग का फल है। अपने सफेद स्वादिष्ट गूदे और सुंगध की वजह से यह एक लोकप्रिय फल है। लीची फल को पूरी तरह पकने में लगभग पचास से साठ दिनों का समय लगता है, तब यह मनमोहक लाल रंग का हो जाता है। इसे पूरी तरह से पकने के बाद ही पेड़ से तोड़ा जाना चाहिए क्योंकि यह अश्वसन क्रांतिक फल है। इस फल में पक्वन पूर्व तोड़ाई से इसमें रंग, गूदा और स्वाद का ठीक तरह से विकास नहीं हो पाता है। इसके छिलके में मुख्यतः ऐंथोसायनिन अवयव जैसे स्यानिडीन-3 ग्लुकोसाइड, स्यानिडीन-3 रूटिनोसाइड, माल्विडिन-3 ग्लुकोसाइड और कुएर्सीटिन-3 रूटिनोसाइड विद्यमान होते हैं। लीची फल मनमोहक लाल रंग का होता है, जिसकी विपणन में अहम मांग होती है किंतु तुडाई के बाद फल सामान्य वातावरण में एक दो दिनों में ही भूरे होने लगते हैं। लीची का भूरा रंग ग्राहकों में उसकी मांग और भंडारण अवधि को कम कर देता है और ऐसे फल बाजार में कम मूल्य पर बिकते हैं। इसका मुख्य कारण ऐंथोसायनिन का शीघ्र अपघटन, ऊतकों के पी.एच मान का बदलना, नमी का कम होना और छोटे-छोटे दरारें (माइक्रो-क्रैक) का बनना है। यही लीची के विपणन की प्रमुख समस्या है। इससे फल की मांग और मूल्य दोनों कम हो जाती हैं, हालांकि उसके खाद्य गुण में कुछ खास प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है। भूरापन, टुबेरकल्स के मध्य उत्तक से बाहरी और भीतरी उत्तक की ओर फैलता है। इससे बचाव के लिए बड़े स्तरों पर लीची के फलों में सल्फर डाइ-आक्साइड का धुंआ दिया जाता है किन्तु यह फलों के गुणों के साथ - साथ स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालता है। शोध के द्वारा अन्य सुरक्षित उपाय जैसे सतहों पर लेपन, अम्लीयकरण, संशोधित वायुमंडलीय पैकिंग आदि का प्रस्ताव किया गया है।

भूरेपन के कारण

लीची के छिलके के भूरे होने के प्रमुख कारण हैं - एंजाइमी एवं गैर एंजाइमी अभिक्रिया, कोशकीय द्रव का पी.एच. मान का बदलना और शुष्कता / निर्जलीकरण। ऐंथोसायनिन वर्णक अस्थिर स्वभाव के होते हैं, और एंजाइमी एवं गैर एंजाइमी दोनों अभिक्रियाओं द्वारा अपघटित होते हैं। गैर-एंजाइमों ऐंथोसायनिन, जलापक्षन और जल विघटन दो विधियों द्वारा टूटते हैं। जलापाक्षन विधि में यह ऐंथोसायनिन के 3-ग्लाइकोसिडिक बंधन का जलापाक्षन करके अग्लुकोन को उत्पन्न करता है। जल विघटन विधि में यह पायरिलियम रिंग को तोड़कर चाल्कोन को बनाता है। ऐंथोसायनेज ग्लुकोज को ऐंथोसायनिन से हटाकर उसे ऐंथोसायानिडिन में बदल देता है, जो कि अस्थिर होने के चलते आगे फिनोलिक्स में बदल जाता है, जिस पर पॉलीफिनॉल ओक्सिडेज एंजाइम की क्रिया

से भूरा रंग बनता है। पॉलीफिनॉल ओक्सिडेज और पेरॉक्सिडेज दोनों एंजाइम, ऐंथोसायनिन को तोड़कर भूरा रंग बना देते हैं। फलों के अंदर उत्तकों एवं कोशिकाओं में क्षति, कोशिका द्रव का रिसाव और रसधानी के बीच विलय से पॉलीफिनॉल आक्सिडेज और पेरॉक्सिडेज एंजाइम कोशिका द्रव से बाहर आ जाते हैं और ऐंथोसायनिन से मिलकर उसे अपघटित कर देते हैं। इसी कारण से लीची के छिल्के का रंग भूरा होने लगता है। कोशिकीय पी.एच. मान ऐंथोसायनिन को अपघटित करके लीची में भूरा रंग बनाता है। पी.एच. मान 3.0 और उससे नीचे होने पर ऐंथोसायनिन एक स्थिर लाल फलेविएम आयन के रूप में उपस्थित होता है। ऐंथोसायनिन 3.0 से अधिक पी.एच. पर कम स्थिर अजलीय क्षार के रूप में उपस्थित होता है। जो आगे रंगहीन क्रोमोनॉल्स में टूट जाता है। साधारणतः रसधानी के 3.0 पी.एच. मान पर एंथोसायनिन लाल रंग का होता है। नमी कम होने से रसधानी का पी.एच. बढ़ जाता है और ऐंथोसायनिन अपघटित होने लगते हैं। लीची के छिल्के में छोटे-छोटे दरारों का बनना और नमी का कम होना भी लीची के भूरे रंग के होने का एक महत्वपूर्ण कारण है। नमी की कमी रोकने से लीची को भूरा होने से बचाया जा सकता है।

भूरेपन को कम करने के उपाए

छिलके के भूरेपन की दर को कम करने और उसकी विपणन में जीवन अवधि बढ़ाने के लिए शोध द्वारा मुख्यतः इन प्रबंधन उपायों कि प्रस्तावना की गई है। जैसे सल्फर डाई आक्साइड का धुआँ करना, हाइड्रोक्लोरिक अम्ल में डुबोना, एस्कॉर्बिक अम्ल, साइट्रिक अम्ल का उपयोग, फलों पर लेपन, संशोधित वायुमंडलीय पैकिंग आदि। सल्फर डाई आक्साइड धुंआकरण विधि प्रथम समय में लीची के रंग को कम कर देती है, जो फल को वापस 22 डिग्री सेल्सियम तापमान रखने पर 3-4 दिनों के अंदर ही लाल रंग का हो जाता है। सल्फर डाई-आक्साइड किण्वन द्वारा होने वाले फलों में भूरे रंग को नियंत्रित करता है, और वर्णक को अपघटन से बचाता है। किंतु इस विधि के उपयोग से फलों में जहरीले अपशिष्ट अवशेष रह जाते हैं और उसकी गुण्वता भी प्रभावित होती है। उपयोग किए हुए सल्फर डाइ-आक्साइड का 30-65 प्रतिशत सल्फर की मात्रा फल अवशोषित कर लेता है जो कि निर्धारित सीमा (10 पी.पी.एम.) से बहुत अधिक है। यह सीमा जापान, ऑस्ट्रेलिया और यूरोपीय देशों में आयात के लिए निर्धारित है। इसका बुरा असर पैकिंग घरों में काम करने वाले मजदूरों और उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य पर भी पड़ता है। ऐंथोसायनिन का रंग छिल्के के पी.एच. मान पर निर्धारित होता है। अम्लीय पी.एच. पर यह लाल और उदासीन पी.एच. पर यह नीले रंग का होता है। इसलिए फलों को एस्कॉर्बिक अम्ल (2 प्रतिशत), आग्जेलिक अम्ल (10 प्रतिशत), साइट्रिक अम्ल (2 प्रतिशत) में डुबाने की विधि भूरे रंग के विकास को रोकने में सहायता करती है। लीची के छिलके के भूरेपन का एक मुख्य कारण नमी का कम होना है। इसका छिलका 1-3 मिमि. मोटा, असमान क्युटिकल का होता है जो सामान्य वातावरण में बहुत तेजी से अपनी नमी खोने लगता है। खाद्य लेपन इस नमी के क्षय को कम करता है। सेम्परफ्रेश और काइटोसन आदि लेपों का उपयोग लेपन के लिए किया जाता है। भूरेपन से बचाव के लिए सेलीसायलिक अम्ल, पॉलीएमीन और संशोधित वायुमंडलीय पैकिंग का उपयोग भी किया जा सकता है। यह छिलके से नमी की क्षति की दर को कम करते हैं जिससे फल अधिक समय तक लाल रंग का रहता है।

10

अल्पदोहित फल : करौंदा

डॉ. हरे कृष्ण

करौंदा (*केरिसा केरंडस एल.*) एक सहिष्णु, सदाबहार, कंटीली और देशज झाड़ी है जो भारत के अधिकतर भागों में जैव-बाड़ के रूप में प्रयोग की जाती है। इसके फलों को सब्जी, अचार, जेली या चेरी के विकल्प के रूप में केक अथवा मिठाइयों पर टॉपिंग के लिए भी प्रयोग में लाया जाता है। करौंदा प्रतिऑक्सीकारक तत्वों से भरपूर फल है, जो गठिया रोग दूर करने तथा जीवाणुरोधी गतिविधियों में भी सहायक है। जुकाम, खांसी, उच्च रक्तचाप, मोटापा, कैंसर, दाँत एवं हड्डियों की कमजोरी, मूत्र संक्रमण जैसे रोगों से लड़ने की क्षमता रखने वाले इस फल के और भी कई ऐसे लाभ हैं जो हमारे स्वास्थ्य के लिए जरूरी हैं।

जलवायु एवं भूमि संबंधी आवश्यकताएं

करौंदा एक बहुत सहिष्णु पौधा है। इसे आसानी से उष्ण तथा उपोष्ण जलवायु में उगाया जा सकता है। लेकिन अधिक बरसात और जलमग्न भूमि इसकी खेती के लिए उपयुक्त नहीं होती है। करौंदा को विभिन्न प्रकार की भूमि अथवा कम उपजाऊ भूमि में भी उगाया जा सकता है लेकिन अच्छी बढवार और पैदावार के लिए अच्छी भूमि होना आवश्यक है । अत्यधिक नमी वाली भूमि में, पौधों में वृद्धि ज्यादा होती है, जिससे उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। साधारणत: उचित जलनिकास वाली बलुई-दुमट मिट्टी करौंदा के लिए अति उपयुक्त मानी जाती है।

पादप प्रवर्धन

सामान्यत: करौंदे का प्रवर्धन बीज से करते हैं। हालाँकि अन्य वानस्पतिक तरीकों, जैसे कलम, भेंट कलम बंधन तथा दाब विधि (गूटी) से भी इसका प्रवर्धन किया जा सकता है।

किस्में

करौंदा की कई किस्में हैं, जिन्हें फलों के रंगों के आधार पर निम्न वर्गों में विभाजित कर सकते हैं जैसे, हरे रंग के फलों वाली, गुलाबी रंग के फलों वाली और सफ़ेद रंग के फलों वाली किस्में। पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय से अधिक उपज एवं बड़े फलों वाली किस्में, पंत सुवर्णा, पंत मनोहर और पंत सुदर्शन विकसित की गई हैं। इसी प्रकार, केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर से भी करौंदा की लाल रंग के फल वाली उन्नत किस्म 'थार कमल' विकसित की गई है। इस किस्म में पौधों की उपज लगभग 13 किलोग्राम प्रति पौधा होती है।

रोपण

पौधे फरवरी-मार्च व अगस्त-सितम्बर के महीने में 60 x 60 x 60 सेंटीमीटर के गड्ढे खोदकर, 3 x 3 मीटर की दूरी पर तैयार कर लगाने चाहिए। पौधों के रोपण के पश्चात् हल्की सिंचाई करने से पौधों की

स्थापना अच्छी होती है। बाग के किनारे बाड़ के रूप में करौंदा के पौधों को कम दूरी पर लगाया जाता है।

काट-छांट

शुरुआती वर्षो में, करौंदे में ज्यादा काट-छांट की आवश्यकता नहीं होती है। फिर भी, समय-समय पर अवांछित शाखाओं को निकालते रहना चाहिए। जिन पौधों में फलन शुरू हो चुका हों, उन्हें गहरी काट-छांट की आवश्यकता नहीं होती है। फिर भी पौधों को अच्छा आकार देने के लिए अवांछनीय टहनियों या आपस में उलझी एवं रोगग्रस्त शाखाओं की काट-छांट करना आवश्यक होता है। सूखी तथा पुरानी शाखाओं को बदलने के लिए भी आवश्यक काट-छांट करते रहना आवश्यक है।

अंत:-सस्यन

पौधा लगाने के पहले खरपतवार काफी समस्या पैदा कर सकते हैं जिन्हें निराई-गुड़ाई द्वारा निकालते रहना चाहिए । करौंदे की लगातार फसल में पहले 2 वर्ष तक वर्षा ऋतु में उगाई जाने वाली सब्जियों, विशेषकर दलहनी फसलों, की काश्त की जा सकती है ।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

रासायनिक उर्वरकों के अतिरिक्त, करौंदे के पौधे को 15-20 किलो गोबर की गली-सड़ी गोबर की खाद प्रति पौधा प्रति वर्ष देनी चाहिए। इसे वर्षा ऋतु के आगमन पर बाग में डालें अन्यथा इससे पौधों की बढ़वार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

सिंचाई प्रबंथन

करौंदा एक बहुत ही सहिष्णु पौधा है। अत: एक बार भूमि में अच्छी तरह से स्थापित हो जाने पर इसे ज्यादा पानी की आवश्यकता नहीं रहती है। चूंकि इसके फलों का ज़्यादातर विकास मानसून के दौरान होता है, इसलिए इस समय पौधों को बहुत पानी की जरूरत नहीं होती है। फिर भी यदि फलों के विकास के समय, किसी भी अवस्था में सूखे की स्थिति हो तो, सिंचाई की व्यवस्था करनी चाहिए।

फलन एवं तुड़ाई

करौंदा में तृतीय वर्ष से फूल व फल आने शुरू हो जाते हैं। फरवरी के महीने में फूल आते हैं और फल अगस्त के महीने में पक कर तैयार हो जाते हैं। हालांकि कच्चे फल मई माह में ही उपलब्ध हो जाते हैं। कच्चे व पके, दोनों प्रकार के फलों की तुड़ाई की जाती है। एक ही समय पर सभी फल तोड़ना संभव नहीं होता है, अत: फलों की तुड़ाई दो या तीन बार करते हैं। फलों का रंग बदलना ही फलों की परिपक्वता का सूचकांक है। सामान्यत: एक पौधे से 8-10 किलोग्राम फल लिए जा सकते हैं।

तुड़ाई उपरांत प्रबंधन

करौंदे के परिपक्व और अपरिपक्व दोनों ही तरह के फलों को मूल्य-वर्धित उत्पादों को तैयार करने के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। पके फलों को कैंडी या क्रिस्टलीकृत फल बनाने के लिए भी उपयोग में लाया जाता है। अपरिपक्व फलों को तेल और मसालों के साथ मिलाकर मसालेदार अचार तैयार किया जाता है। इसके अतिरिक्त, अपरिपक्व फलों को सुखाकर

उनका चूर्ण बनाया जा सकता है, जिसका उपयोग भोजन में खटाई के रूप में भी किया जा सकता है। चूंकि करौंदे के फलों में पेक्टिन बहुतायत में होता है, अत: इससे अच्छी गुणवत्ता की जेली, मुरब्बा, चटनी और सॉस इत्यादि मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं।

प्राकृतिक रंग से रंगे हुए कपड़े

इसके गहरे रंग के फलों को देखते हुए, अभी हाल ही के वर्षों में प्राकृतिक रंग निकालने के तरीकों पर कार्य किया गया है। इन रंगों का उपयोग खाने और सूती कपड़ों को रंगने में किया जा सकता है। विभिन्न रसायनों के प्रयोग से अलग-2 प्रकार के रंगों के उतार-चढ़ाव जैसे, लाल, पीला अथवा धूसर रंग प्राप्त किए जा सकते हैं। इसी प्रकार, सी.आई.ए.एच. सलेक्शन-1 के पके फलों से एक प्रकृतिक रंगमय पोषणोषधीय उत्पाद बनाया गया है।

'लालिमा' द्वारा अनुपूरित नींबू का शर्बत

इस पोषणोषधीय प्राकृतिक रंग के उत्पाद को 'लालिमा' नाम दिया गया है, जिसकी एक मिलीलीटर मात्रा, किसी भी रंगहीन पेय उत्पाद जैसे नींबू पानी/ शर्बत के एक गिलास को मनभावन लाल रंग देने के लिए पर्याप्त होती है।

11

हिमाचल प्रदेश की पर्वतीय कृषि में जलवायु-परिवर्तन, अनुकूलन एवं समाधान विकल्पों की समीक्षा

डॉ.रणबीर सिंह राना, डॉ. रानू पठानिया, डॉ. सुदेश रादोत्रा, डॉ. वैभव कालिया एवं डॉ. शारदा सिंह

सारांश

भारत एक बड़ा विकासशील देश है जिसकी लगभग 70 करोड़ ग्रामीण आबादी अपने निर्वाह और आजीविका के लिए सीधे जलवायु-संवेदनशील क्षेत्रों (जैसे कृषि, जंगल, पशुपालन और मत्स्य-पालन) और प्राकृतिक संसाधन (जैसे पानी, जैव विविधता, मैंग्रोव, तटीय क्षेत्र, घास के मैदान) पर निर्भर करती है। जलवायु-परिवर्तन से सभी प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्रों के साथ-साथ सामाजिक-आर्थिक प्रणाली पर भी असर पड़ सकता है। कृषि एवं जलवायु-परिवर्तन एक-दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। साधारणत: फसल पैदावार, जैव विविधता, जल उपयोग एवं मृदा शक्ति जलवायु-परिवर्तन से प्रभावित होती है। विभिन्न क्षेत्रों की जलवायु के परिवर्तन के लिए विभिन्न भेदताएं हैं। इसलिए अलग-अलग सांदयिक और क्षेत्रीय दृष्टिकोणों को लागू किया जाना चाहिए। हिमाचल प्रदेश पश्चिमी हिमालय की गोद में स्थित है। इसकी जलवायु-परिस्थितियां बेहद गर्म से लेकर ठंडे क्षेत्रों तक भिन्न होती हैं। पहाड़ी राज्य की अर्थव्यवस्था कृषि, बागवानी और पशुधन पर निर्भर करती है जो कि अत्यधिक जलवायु-संवेदनशील क्षेत्र है। खेती काफी हद तक वर्षा (82%) पर निर्भर होती है और अधिकतर परिवारों के पास कम भूमि है। जलवायु-परिवर्तन के कारण तापमान में +0.06 डिग्री सेल्सियस वृद्धि हुई है जिसका प्रभाव कृषि, बागवानी, पशुधन और जल संसाधनों पर पड़ता है। हिमाचल प्रदेश में कृषि और बागवानी मुख्य रूप से बर्फयुक्त गुरुत्वाकर्षण प्रवाह (चैनल) पर निर्भर करती हैं। वैश्विक तापन (ग्लोबल वार्मिंग) के कारण फसलों की पैदावार में भी कमी देखने को मिली है। इस स्थिति में फसलों, बागवानी व पशुपालन में जलवायु-परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के लिए अनुकूलन और शमन को अपनाना जरूरी है। हिमाचल प्रदेश में बागवानी में सेब की जगह आड़ू, नाशपाती, अनार, प्लम और खूबानी का उगाना, सेब की खेती ऊंचाई बाले क्षेत्रों में करना, निचले क्षेत्रों में सेब की जगह कम समय में होने वाली सब्जियों को उगाना, खरीफ फसलों की मैदानी और माध्यम क्षेत्रों में 10 दिन देरी से बीजाई, रबी फसलों की भी 15-20 दिन देरी से बीजाई, जैसे अक्टूबर की बजाए नवंबर में बीजाई तथा जैविक खेती, पॉलीहाउस आदि अनुकूलन और शमन के मुख्य विकल्प माने हैं।

परिचय

प्रकृति का संतुलन ब्रह्मांड के पंच शाश्वत-तत्वों के आपसी सामंजस्य की गहन-गूढ़ता पर निर्भर होता है, क्योंकि इनमें से एक भी तत्व का आनुपातिक असंतुलन समस्त वैश्विक संयोगी जटिलताओं की प्राकृतिकता को प्रभावित करता है। मानव तकनीकी

विकास के कारण विभिन्न पृथ्वी प्रणाली घटकों के मध्य होने वाली परस्पर क्रियाओं में हो रहे निरंतर असंतुलन ने वैश्विक जलवायु-परिवर्तन जैसी चुनौती को जन्म दिया है। वर्तमान में वैश्विक जलवायु-परिवर्तन का सबसे बड़ा कारण भूमंडलीय तापन है, जो हरित गृह प्रभाव के परिणामस्वरूप ही होता है। वैश्विक जलवायु-परिवर्तन से विश्व में जल की गुणवत्ता में गिरावट के साथ-साथ जहाँ उत्तरी अमेरिका में वर्षा में वृद्धि के कारण बाढ़, भूस्खलन तथा भूमि-अपरदन, एशिया, अफ्रीका तथा ऑस्ट्रेलिया महाद्वीपों में अतिरिक्त अलनिनो की बारंबारता के कारण सूखा तथा आंधी-तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाओं का प्रकोप हो सकता है। समुद्री जलस्तर में वृद्धि के साथ-साथ वैश्विक ऊपरी महासागरीय ऊष्माधारिता भी बढ़ रही है। हालांकि यह पाया गया है कि महासागरीय धाराओं की परिवर्तनशीलता तथा अन्य प्राकृतिक परिवर्तनों के फलस्वरूप महासागरीय ऊष्माधारिता में भी स्थानिक एवं सामयिक विविधता पाई गई है। हिमनदों की संहति (द्रव्यमान), आयतन, क्षेत्रफल व लंबाई में होने वाली न्यूनता को स्पष्ट तौर पर निरंतर भूमडंलीय तापन का संकेतक माना जा सकता है। हिमनदों से आने वाला जल-प्रवाह स्थानीय जल संसाधनों में महत्वपूर्ण योगदान करता है। जलवायु-परिवर्तन पर अंतर-देशीय सरकारी पैनल द्वारा प्रकाशित आकलन रिपोर्ट के अनुसार सन् 2100 तक ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के कारण वैश्विक तापमान 1.8 से 40° सेल्सियस के बीच और वैश्विक समुद्र जलस्तर में 180 मि.मी. से 590 मि.मी. तक वृद्धि होने की संभावना है। भारत एक बड़ा विकासशील देश है जिसकी ग्रामीण आबादी प्राय: अपने निर्वाह और आजीविका के लिए सीधे जलवायु प्रभावित कारकों (जैसे कृषि संवेदनशील क्षेत्रों), जंगल और मत्स्य पालन और (प्राकृतिक संसाधन जैसे पानी), जैव विविधता, मैंग्रोव, तटीय क्षेत्र, घास के मैदान पर निर्भर करती है। जलवायु-परिवर्तन का सभी प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्रों के साथ सामाजिक व आर्थिक प्रणाली पर भी असर पड़ सकता है। एक रिपोर्ट के अनुसार वास्तव में, भारत जैसे विकासशील देश को जलवायु-परिवर्तन और वैश्वीकरण के दोहरे बोझ का सामना करना पड़ रहा है।

हिमाचल प्रदेश की कृषीय-जलवायु

हिमाचल प्रदेश की कृषीय-जलवायु में गर्म क्षेत्रों जैसे ऊना, हमीरपुर, सिरमौर व कांगड़ा के निचले क्षेत्र आदि से अति ठंडे क्षेत्रो जैसे चंबा, किन्नौर, लाहौल-स्पीति तक विविधिता पाई जाती है। वर्षा की दृष्टि से जिला कांगड़ा के धर्मशाला एवं पालमपुर क्षेत्र, चेरापूंजी (विश्व में सबसे ज्यादा वर्षा) के बाद दूसरे स्थान पर आते हैं, जबकि स्पीति जैसे क्षेत्र में पूरी सर्दियों के दौरान वर्षा सिर्फ बर्फबारी से ही होती है। प्रदेश का औसत तापमान 10.4 से 22.7° सेल्सियस तक रहता है जबकि प्रदेश का वार्षिक वर्षा औसत 1122 मि.मी. है। ऐसे में किसानों को मौसम पूर्वानुमान आधारित कृषि सेवा प्रदान करने के उद्देश्य से भारत मौसम विज्ञान विभाग में कृषि-मौसम विज्ञान प्रभाग की स्थापना की गई। कृषि-मौसम संबंधी अनुसंधान व कृषि-मौसम संबंधी आंकड़ों की दृष्टि से कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर के अनुसंधान क्षेत्र में कृषि-मौसम क्षेत्र इकाई की स्थापना की गई है। इस कृषि-मौसम क्षेत्र इकाई का उद्देश्य मौसम पूर्वानुमान के आलोक में फसलों पर प्रतिकूल मौसम के प्रभाव को कम करना व अनुकूल मौसम का लाभ उठाते हुए कृषि उत्पादन को बढाना है। इसके साथ यह मौसम-पूर्वानुमान आधारित कृषि सलाह सेवाएं भी चार जिलों को प्रदान करती है। इस सलाह से मौसम के कारण होने वाली बीमारियों और प्रबंधन के संबंध में किसानों की समस्याओं को कम

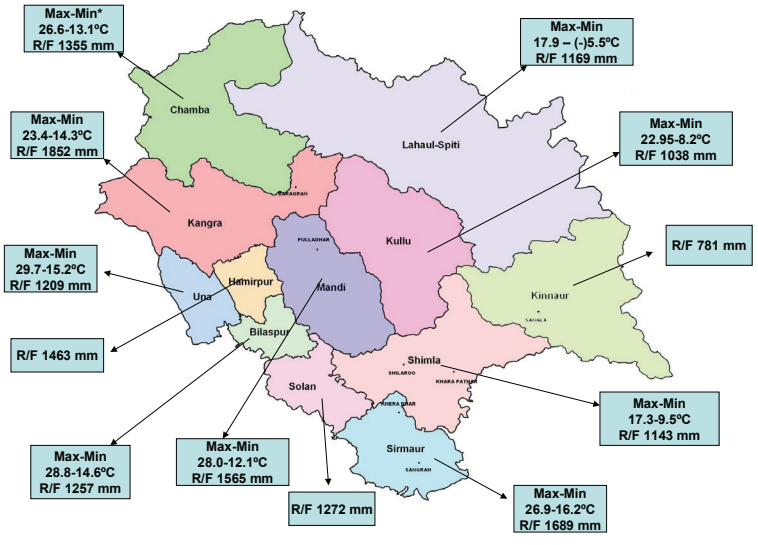

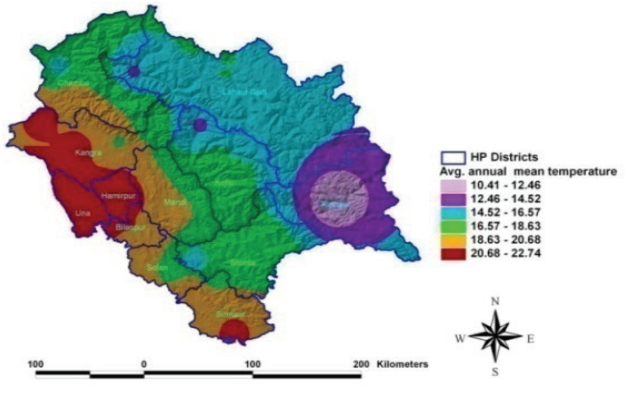

आंकड़े 1 - हिमाचल प्रदेश का वार्षिक औसत तापमान

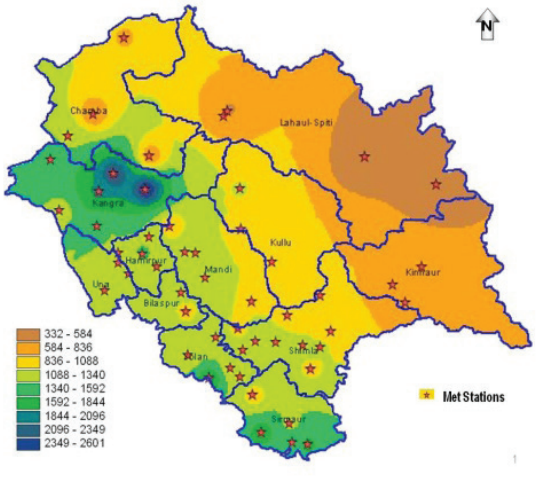

आंकड़े 2 - हिमाचल प्रदेश का वर्षा का प्रतिरूप

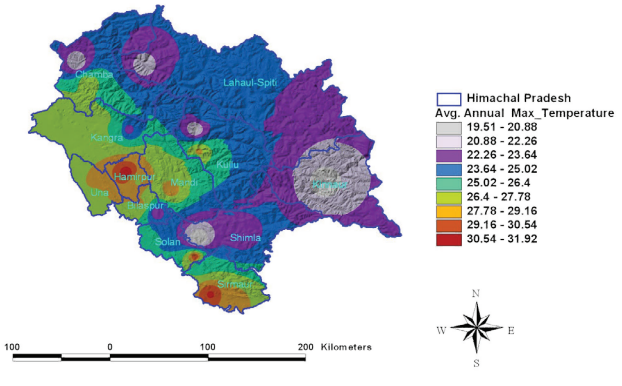

आकड़े 3. हिमाचल प्रदेश का वार्षिक अधिकतम तापमान का प्रतिरूप

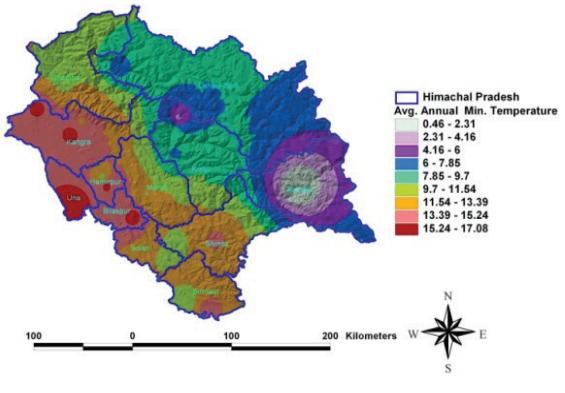

आंकड़े 4 - हिमाचल प्रदेश का वार्षिक न्यूनतम तापमान का प्रतिरूप

हिमाचल प्रदेश की जलवायु की परिस्थिति

से कम करने मे सहायता मिलती है।

पश्चिमी हिमालय में जलवायु का बदलता हुआ प्रतिरूप

- पिछली एक शताब्दी से श्रीनगर, शिमला, मुसतेरी, मुक्तेश्वर और जोशीमठ में वार्षिक वर्षा (-29.7 से -2.1 से.मी. प्रति 100 वर्ष) की गिरावट देखी गई है जबकि देहरादून, पौड़ी, नैनीताल, अल्मोड़ा और पिथौरागढ़ (3.8 से 28.7 से.मी. प्रति वर्ष) में वृद्धि देखी गई है।
- पीर-पंजाल हिमालय पर्वतमाला में बर्फ़बारी और सर्दियों की प्रभावी अवधि में कमी देखी गई है। उत्तर-पश्चिम हिमालय क्षेत्र पर तापमान के रूझान समान नहीं हैं और पिछली एक सदी में वार्षिक तापमान 1.60° सेल्सियस से बढा है एवं सर्दियों के तापमान में वृद्धि पाई गई है।

हिमाचल में जलवायु-परिवर्तन के संकेत

हिमाचल प्रदेश के मौसम संबंधी कारकों के आंकड़ों का अध्ययन करने से ज्ञात हुआ है कि हिमाचल प्रदेश के तापमान में +6.06° सेल्सियस / वर्ष दर से बढ़ोतरी हुई है। यह बढ़ोतरी अधिकतम तापमान में न्यूनतम तापमान से अधिक है। इसी तरह 1951-2005 के आकड़े वर्षा में कमी का आकलन करते हैं। एक विशेष आंकड़ों से पता लगा है कि सापेक्षिक आर्द्रता और वाष्पीकरण में कुल्लू क्षेत्र में कमी देखी गई है। अध्ययन के अनुसार हिमाचल के निचले क्षेत्रों में 60-80.7% वर्षा दक्षिण-पश्चिम मानसून से होती है जबकि ऊपरी क्षेत्रों में यह 35% आंकी गई है। वर्षा की कमी जनवरी, जुलाई, अगस्त और अक्टूबर में आंकी गई है। इसी तरह वर्षा के दिनों में भी कमी आंकी गई है। 1901-2002 के आंकड़ो के अनुसार

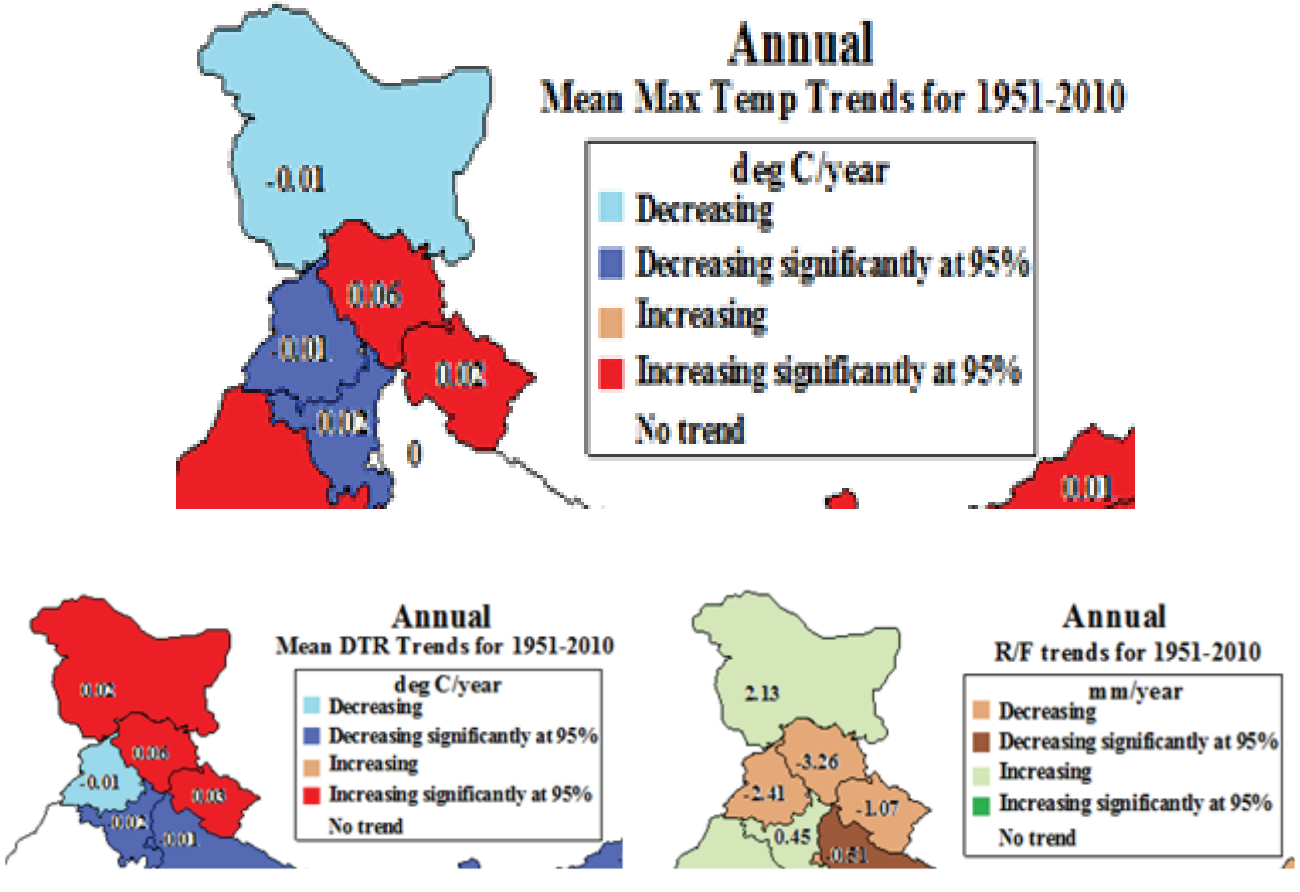

उत्तर पश्चिमी हिमालय के मौसम-संबंधी मापदंड

नवंबर से फरवरी तक की वर्षा में अधिक परिवर्तिता पाई गई है। हिमाचल के विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों पर किए गए एक विशेष अध्ययन के अनुसार वार्षिक तापमान की प्रवृत्तियों में वृद्धि पाई गई है जबकि वार्षिक वर्षा में कमी आंकी गई है। फतेहपुर, सिरमौर में निचले मैदानी इलाकों में वाष्पीकरण के बढ़ते रुझान देखे गए हैं, जबकि अधिक ऊंचाई पर पालमपुर और कुल्लू में गिरावट के रुझान हैं।

प्रदेश में जलवायु-परिवर्तन के प्रमाण

- भौतिक प्रमाण : वातावरण में बढ़ता तापमान व कार्बन डाई-ऑक्साइड की मात्रा, घटते पानी के स्रोत, प्रदेश में आने वाले मानसून के समय का बदलाव, प्रदेश की बदती प्राकृतिक विपदाएं।
- जैविक प्रमाण : समय से पहले फूलों का आना, फसलों की पैदावार में गिरावट, पहाड़ी फसलों के क्षेत्र फल व उत्पादन का घटना।
- समाजिक प्रमाण : शहरों की बढती आबादी।
- आर्थिक प्रमाण : कृषि से होने बाली आमदनी में कमी।

पहाड़ी कृषि पर प्रभाव

पहाड़ी क्षेत्र की अर्थव्यवस्था, कृषि, बागवानी और पशुधन पर निर्भर करती है जो कि अत्यधिक जलवायु-संवेदनशील क्षेत्रों में है। खेती काफी हद तक वर्षा (82%) पर निर्भर होती है और अधिकतर परिवारों के पास कम भूमि है। जलवायु-परिवर्तन के कारण तापमान में वृद्धि हुई है जिसके कारण कृषि, बागवानी, पशुधन और जल संसाधनों पर प्रभाव पड़ता है। हिमाचल प्रदेश के मामले में कृषि और बागवानी मुख्य रूप से बर्फयुक्त गुरुत्वाकर्षण प्रवाह चैनल (कुहल) ताजे और बर्फबारी पर निर्भर करती हैं। वैश्विक तापन (ग्लोबल वार्मिंग) के कारण वर्षा में होने वाले बदलाव, जल प्रवाह और मांगों के प्रतिरूप (विशेष रूप से कृषि) में बदलाव आता है, जिसमें जल वैज्ञानिक रचना और प्रबंधन प्रवृत्तियों की समीक्षा की आवश्यकता होती है।

हिमाचल प्रदेश की प्रमुख नदियों पर प्रभाव

बर्फबारी की मात्रा में औसतन सभी स्थानों में 36.8 मि.मी. की दर से कमी दर्शाई गई है। बढ़ते तापमान से कुल्लू व शिमला जिलों के निचले क्षेत्रों में ठंडक कम या द्रुतशीतन घंटों में कमी होने के संकेत हैं। नदियों के पानी के बहाव में भारी कमी के संकेत हैं। वार्षिक पानी की मात्रा में भारी कमी (4 से 150 प्रतिशत तक) होने के संकेत हैं। यह कमी 700 से 1500 मीटर ऊंचाई वाले क्षेत्रों में अधिक पाई गई है।

जल-संसाधनों पर जलवायु-परिवर्तन के प्रभाव

पिछले तीन दशकों में अधिशेष जल संतुलन स्पष्ट रूप से हिमाचल के सभी कृषि-जलवायु क्षेत्रों में घटते हुए रुझान को दर्शाता है। अधिशेष (जल-शेष) अवधि की अधिकतम उपलब्धता में जुलाई से अगस्त के दौरान बदलाव दिखाई देता है और 35.7 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई है। प्रवृत्तियों में सभी महीनों में प्रमुख नदियों के सतह के जल-प्रवाह की भारी कमी को दर्शाया है। बर्फबारी में पिछले दो तीन दशकों में कमी की स्पष्ट प्रवृत्ति दिखाई देती है।

हिमाचल प्रदेश में किसानों की धारणाएं

सेब की फसल की ऊंचाई बाले क्षेत्र में बढ़ती हुई पैदावार और सेब के उत्पादन की जगहों में सब्जियों की फसलें जगह लेती हुई नजर आ रही हैं। कृषि से मुनाफे में कमी और जलवायु-आश्रित कृषि प्रणालियों को अपनाने के कारण कृषि में लगे श्रम का अन्य उद्यमों में कमी का रुझान हैं। ऊंचाई वाले क्षेत्रों के छोटे और बड़े किसान सीमांत क्षेत्रों के किसानों की तुलना में जलवायु परिवर्तन के कारण अधिक फसल परिवर्तन अपना रहे हैं। ग्रीष्मकाल,

गर्मियों के दौरान तापमान में वृद्धि, गर्मी देर से शुरू होना और असमान वितरण, सर्दियों की शुरुआत में देर, शीतकालीन सर्दियों की अवधि, सर्दियों के दौरान सामान्य से अधिक तापमान, सर्दियों के दौरान बर्फबारी में गिरावट और सर्दियों के दिनों में कमी, उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अप्रत्याशित वर्षा आदि जलवायु-परिवर्तन के संबंध में किसानों के मुख्य अनुभव हैं। निचले और मध्य पहाड़ी क्षेत्रों में फसल उत्पादन में बदलाव, अधिक नमी की आवश्यकता वाली फसलों, बासमती चावल और गन्ना की जगह मक्का और स्थानीय धान के चावल उगाए जा रहे हैं, जिनमें कम पानी की खपत होती है।

जलवायु-परिवर्तन के प्रभाव को कैसे कम किया जाए?

कृषि एवं जलवायु-परिवर्तन एक दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। उदाहरणत: फसल पैदावार, जैव विविधता, जल उपयोग एवं मृदा शक्ति जलवायु-परिवर्तन से प्रभावित होती हैं। जलवायु-परिवर्तन मुख्यत: जीवाश्म ईंधन के दहन एवं अन्य कारणों से होता है, जो कि पृथ्वी के तापमान, वर्षा एवं जल-विज्ञानीय चक्रों को प्रभावित कर रहा है। जलवायु-परिवर्तन के कारण वर्षा, लू एवं अन्य चरम घटनाओं की आवृत्ति एवं तीव्रता में निरंतर परिवर्तन संभावित है जो कि कृषि उत्पादन को प्रभावित करता है। इसके अतिरिक्त संयोजित जलवायु-घटक पौधों की उत्पादकता को घटा सकते हैं, जिसके परिणाम-स्वरूप कई महत्वपूर्ण कृषि-फसलों की कीमतों में बढोतरी हो सकती है।

अनुकूलन : परिवर्तन की वह प्रक्रिया जिसके द्वारा जीव या जाति अपने पर्यावरण के अनुकूल बन जाती है। अनुकूलन एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से समाज खुद को जलवायु-परिवर्तन का सामना करने में सक्षम बनाता है, जैसे कि गर्मी और लवणता और बाढ़ के लिए नए फसलों की किस्में, फसल-प्रबंधन प्रथाओं को संशोधित करना - जिसमें पानी में सुधार-प्रबंधन, संसाधन संरक्षण जैसे नई कृषि तकनीकों को अपनाना, प्रौद्योगिकियां (आरसीटी), फसल विविधीकरण, कीट-प्रबंधन में सुधार, बेहतर मौसम की भविष्यवाणी और फसल बीमा और स्वदेशी तकनीकों का ज्ञान शामिल है।

शमन : जोखिम की आवृत्ति, परिमाण या तीव्रता का उन्मूलन या कमी, या खतरे या चेतावनी के संभावित प्रभाव को कम करना। जलवायु-परिवर्तन शमन में ग्रीनहाउस गैसों (जो कि मनुष्य के द्वारा उत्सर्जित की जाती हैं) को कम करना शामिल है। इसमें कार्बन सिंक की क्षमता को बढ़ाने से (जैसे पुनर्नवीनीकरण के माध्यम से) प्राप्त किया जा सकता है। चावल की खेती से मेथेन उत्सर्जन को कम करने की रणनीति, जल-प्रबंधन में परिवर्तन, अल्पकालिक जल निकासी, वायुजीवी कृषि को बढ़ावा देना, कार्बनिक पदार्थ-प्रबंधन में सुधार, मिट्टी में हरी खाद का मिश्रण, बायोगैस घोल जैसे शामिल हैं।

जलवायु सुभेद्यता का मूल्यांकन :

जोखिम (risk) = f [संकट (hazard), अनावरण (exposure), भेद्यता (vulnerability)]

जोखिम एक माप है जो किसी विशिष्ट समय-अवधि में दिए गए क्षेत्र में किसी विशेष परिमाण के एक संकटजन्य स्वरूप को दर्शाता है।

जलवायु सुभेद्यता का महत्व तब और बढ़ जाता है कि जब हम अनुकूलन और शमन को अलग-अलग जगह पर अपनाते हैं। जलवायु भेद के अध्ययन से अधिक प्रभावित क्षेत्रों को एक अनुक्रम में रख कर जलवायु-परिवर्तन का आकलन किया जाता है जो कि विभिन्न शमनों को अपनाने में मददगार साबित हो सकता हैं और इसका अध्ययन शमन एवं अनुकूलन से पहले किया जाता है।

एक अध्ययन के अनुसार कुल्लू जिले के ब्लॉक स्तर पर इसका आकलन किया गया और पाया कि नगर ब्लॉक जलवायु सुभेद्यता के आकलन में सबसे कम सुभेद्य हैं जिसका कारण वहां की उपजाऊ मिट्टी, नए बाग-बगीचे और सब्जी उत्पादन है। इस तरह के कृषि, वागवानी एवं पशु सुभेद्यता अध्ययन से सरकार को किसी क्षेत्र विशेष की नीति बनाने में, जो जलवायु-परिवर्तन से संबंधित हो, मदद मिल सकती है।

फसल उत्पादन के संभावित उपाय

> फसलों में सहफसल चक्र, फसलों में विविधता, कम से कम खेतों की जोताई, समतल खेत में बुआई, फसलों का सही संरक्षण आदि अपनाकर विविधता लाने से जलवायु-परिवर्तन के प्रभावों को कम किया जा सकता है।

> पानी व जमीन का संरक्षण करने वाले उपायों का प्रयोग करें।

> जैविक खाद का अधिक प्रयोग और रसायन खादों का बुद्धिमत्तापूर्ण प्रयोग करें।

> जैविक ईंधन का कम उपयोग करें तथा सूर्य व हवा से चलने वाले उपकरणों का अधिक उपयोग करें।

> सिंचाई के लिए प्रयोग में आने वाले पानी का सही उपयोग करें।

> फसलों की बीजाई का समय बदलते मौसम के हिसाब से करें।

> मौसम पूर्वानुमान व मौसम पर आधारित कृषि सेवाओं का प्रयोग करें।

विभिन्न फसलों के लिए प्रेरित रूपांतर

> एक अनुकूलन रणनीति के रूप में किस्म में बदलाव ।

> एक अनुकूलन रणनीति के रूप में रोपण की तारीख में बदलाव ।

> बाहरी आदानों में बदलाव ।

जैविक खेती जलवायु-परिवर्तन का महत्वपूर्ण शमन

जैविक खेती में किसानों द्वारा कृषि पारिस्थितिक तरीकों का उपयोग-किया जाता है। इसमें मिश्रित फसल का पूर्णत: क्रानुक्रम, फसलों का सहरोपण करना, हरी खाद, निवास और गैरखेती वाले क्षेत्रों का उपयोग, गैररासायनिक कीट प्रबंधन और देसी खाद का उपयोग होता है जो कि जलवायु-परिवर्तन के लिए एक महत्वपूर्ण समकारक है।

मौसम-आधारित परामर्श

भारतीय कृषि, सदियों से मौसम और विशेष रूप से मानसून की अनियमितता पर पूरी तरह निर्भर है। मौसम और जलवायु की अनिश्चितताएं देश की खाद्य सुरक्षा के लिए बड़ा खतरा हैं। मौसम-सेवाएं किसान के आदानों की सुरक्षा के लिए बहुत उपयोगी हैं। कृषि-परामर्श अनुकूल मौसम का लाभ उपलब्ध कराते हैं और प्रतिकूल मौसम के प्रभाव को कम करते हैं। एक अध्ययन के अनुसार इस प्रक्रिया को अपनाने पर किसान लगभग 104 किलोग्राम के बराबर कार्बन डाई-ऑक्साइड बचा सकते है।

जैव इंधन (बायोगैस)

एक अनुसंधान के अनुसार यह पाया गया है कि एक परिवार के जैव-ईंधन संयत्र में ग्लोबल वार्मिंग को कम करने की संभावना 9.7 टन कार्बन डाई-ऑक्साइड प्रति वर्ष के बराबर है और विकास क्रियाविधि के अनुसार 10 डॉलर प्रति टन कार्बन डाई-ऑक्साइड के हिसाब से 9.7 डॉलर कमाए जा सकते हैं।

कृषि-मिट्टी से ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन के लिए शमन विकल्प

कार्बन डाई-ऑक्साइड	नाइट्रस ऑक्साइड
संरक्षण कृषि	नाइट्रो उर्वरक प्रबंधन में सुधार
आवरण वाली फसलें, फसल का पूर्णतः चक्राणुक्रम, विविधीकरण	सिंचाई प्रथाओं को अनुकूलित करना
खेत के आदानों का सही उपयोग	जुताई के संचालन का अनुकूलन
एकीकृत फसल प्रबंधन	जैविकी आदानों का प्रावधान
टपक, कुंड व फव्वारा सिंचाई	एकीकृत पोषक प्रबंधन
अवक्रमित मिट्टी का संरक्षण	जीआईएस आधारित मृदा पोषक तत्व का मानचित्रण

जलवायु-परिवर्तन के प्रभाव को कम करने के लिए सेब के बगीचे के स्थानांतरण और गुठलीदार फलों का पौधरोपण

आलूबुखारा, नाशपाती, आड़ू और खुबानी जैसे गुठलीदार फलों की उत्पादकता पर बढती गर्मी का प्रभाव उतना नहीं हुआ है। इसलिए ये सेब वाले क्षेत्रों में अनुकूलन के रूप में अपनाए जा सकते हैं। किसानों की धारणा के अनुसार सब्जियों का उगाना सेब वाले क्षेत्रों में अनुकूलन का रूप है।

जलवायु अनुकूल खाद्य वस्तुओं की कार्बन पदचिह्न (फुटप्रिंट) के निशान

कार्बन पदचिह्न एक उत्पाद के कारण ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन का कुल समायोजन है। इसे उत्सर्जित सभी ग्रीनहाउस गैस के बराबर कार्बन डाई-ऑक्साइड समकक्ष के रूप में व्यक्त किया जाता है। फसलों के खाद्य उत्पादों ने नाइट्रस ऑक्साइड के उत्सर्जन में योगदान दिया था। पशु प्रोटीन की खपत कम करने से ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन कम हो सकता है। कुल्लू जिले के एक व्यष्टि अध्ययन के अनुसार पहाड़ी क्षेत्रों के खाद्य पदार्थ, जलवायु-परिवर्तन में अधिक उपयोगी है।

भविष्य में जलवायु-परिवर्तन के अनुकूलन के क्षेत्र के प्रति रूझान

अन्य उद्यमों की तुलना में कृषि सबसे अधिक ग्लोबल वार्मिंग के लिए सुमेद्य है। भारतीय कृषि को गर्मी, अनियमित मौसम और सिंचाई की उपलब्धता में कमी के कारण नुकसान उठाना पड़ सकता है। इसलिए जलवायु-परिवर्तन की भविष्यवाणी में स्थानिक और अस्थायी पैमाने पर उच्च संकल्प के साथ कृषि-उत्पादन प्रणाली को जोड़ने, प्रभाव का मूल्यांकन करने और कृषि उत्पादन को बनाए रखने के लिए उपयुक्त विकल्प अपनाए जा सकते हैं।

- वायुमंडलीय संरचना, जलवायु-परिवर्तन और मानव, पौधे और पशु स्वास्थ्य, बहुमुखी क्षेत्रों में आपसी बातचीत और अवांछनीय परिवर्तन के संभावित समाधान की मांग की जा सकती है।
- जलवायु-परिवर्तन नीति के कारण हुई जोखिम और कमियों के विकल्प को कम करने के लिए अभ्यास किया जा सकता है |

12

पर्यावरण परिवर्तन से कृषि को बचाने की आवश्यकता

डॉ. आर.एस. सेंगर

किसी भी क्षेत्र के पर्यावरण में परिवर्तन वहां के वायुमंडल में तापमान के परिवर्तन से जाना जाता है। आजकल यह महसूस किया जा रहा है कि पहले की अपेक्षा अब वायुमंडल ज्यादा गर्म हो रहा है, जिसका मुख्य कारण वायुमंडलीय तापमान में वृद्धि बताई जा रही है। तापमान में वृद्धि का कारण वायुमंडल में ऐसी गैसों की सांद्रता में वृद्धि है जो प्रायः प्रकाश की लौटने वाले लंबे तरंग वाली किरणों का अवशोषण कर लेती हैं जिससे वायुमंडल के तापमान में वृद्धि हो जाती है। वे सभी प्रकार की गैसें जो ऐसा करने में समर्थ हैं 'ग्रीन हाउस गैस' के नाम से जानी जाती है। ग्रीनहाउस गैसें दो प्रकार की होती हैं: पहली जो प्रकृति द्वारा उत्सर्जित की जाती हैं, जिनमें कार्बन डाई आक्साईड, मिथेन तथा नाइट्रस आक्साइड हैं, और दूसरी ओजोन, सी.एफ.सी. हैं जो मानव द्वारा उद्योग में प्रयोग के लिए उत्पादित की जाती हैं। इन सभी गैसों का मुख्य गुण यह होता है कि ये पृथ्वी पर आने वाली प्रकाश की अल्प तरंग- दैर्घ्य वाली किरणों को आने तो देती हैं परंतु लौटने वाली लंबी तंरग दैर्घ्य वाली प्रकाश की किरणों (जिन्हें ऑक्साइड किरणें कहा जाता है) जो वायुमंडल में सोख लेती हैं जिससे वायुमंडल में गर्मी बढ़ने लगती है और तापमान बढ़ने लगता है। इस प्रक्रिया को 'भूमंडलीय उष्मन' (ग्लोबल वार्मिंग) कहा जाता है। इन विभिन्न प्रकार की ग्रीनहाउस गैसों (कार्बन डाई-ऑक्साइड, मेथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, ओजोन तथा सी.एफ.सी) की गर्माहट क्षमता में काफी अंतर पाया जाता है, क्योंकि इन गैसों की अवरक्त (इन्फ्रारेड) किरणों को अवशोषण करने की क्षमता में विभिन्नता पाई जाती है। यहां वायुमंडल में विभिन्न प्रकार की ग्रीनहाउस गैसों की सांद्रता में वृद्धि के संभावित कारणों का उल्लेख किया जा रहा है।

वायुमंडल के तापमान, आर्द्रता, विकिरण तथा कार्बन डाइ ऑक्साइड में लगातार परिवर्तन के बावजूद पूरे विश्व की फसलों की पैदावार और उत्पादन में महत्वपूर्ण वृद्धि हो रही है, जबकि खेती - योग्य भूमि में शहरीकरण और औद्योगिकीकरण की वजह से लगातार कमी हो रही है। अतः खाद्य उत्पादन में वृद्धि, फसलों के प्रति इकाई क्षेत्रफल पर उपज में बढोतरी के कारण हुई है। खाद्य उत्पादन में भारी वृद्धि तथा रोगों एवं कीटों द्वारा होने वाली क्षति में कमी आई है। अतः इन सभी कृषि उपायों, लागत तथा नई बौनी किस्मों के प्रभाव अथवा विकास के कारण फसल उत्पादन की भारी वृद्धि में पर्यावरण परिवर्तन का कितना नकारात्मक या सकारात्मक योगदान है, इसका पता लगाना कठिन है। पर्यावरण परिवर्तन के फसल उत्पादन पर पड़ने वाले प्रभावों का पता लगाने के लिए ऐसे अनुसंधानों की आवश्यकता है जो कृत्रिम परिवर्तनों पर आधारित न होकर स्वाभाविक परिवर्तनों पर आधारित हों और इसके साथ-साथ

प्रयोग में लाई जाने वाली फसलों की किस्मों और उनकी आनुवंशिक संरचना में भी कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिए। इस तरह के परीक्षण काफी लंबे समय तक किए जाने चाहिए। इसके बावजूद पर्यावरण परिवर्तन के उत्पादन पर पड़ने वाले प्रभावों का जो आकलन/अनुमान लगाया जा रहा है वे निम्नलिखित प्रकार से हैं :

पर्यावरण मुख्यतः वायुमंडल के तापमान, आर्द्रता तथा कार्बन डाई ऑक्साइड में वृद्धि तथा आकाश में बादल बनने से विकिरण में कमी के कारण हो रहा है। अतः इन सभी पर्यावरण कारकों का सीधा प्रभाव फसलों के उत्पादन और उत्पादकता पर पड़ने वाला है, क्योंकि पौधों में वृद्धि, प्रवर्धन और उनकी पैदावार के इन सभी कारकों द्वारा निर्धारित होती है। सबसे पहले पर्यावरण परिवर्तन का प्रभाव भूमि में पाए जाने वाले पानी की उपलब्धता पर पड़ सकता है क्योंकि तापमान में बढ़ोतरी से वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन में वृद्धि से भूमि में पानी की कमी हो सकती है इसका सीधा असर फसलों की पैदावार पर भी पड़ सकता है। जमीन में पानी की कमी से बारानी क्षेत्रों में जहां सिंचाई की सुविधा न तो बहुत कम है, वहां मिट्टी में पर्याप्त नमी रहने की अवधि बहुत ही कम हो सकती है, जिससे फसलों को पर्याप्त जल न मिलने के कारण उनकी वृद्धि और प्रवर्धन काल में भी घटोतरी हो सकती है और फसल की उत्पादकता में कमी आ सकती है। वायुमंडल में गर्माहट से न सिर्फ भूमि में जल की उपलब्धता में कमी आती है बल्कि वाष्पोत्सर्जन की दर में भी वृद्धि हो सकती है और इस तरह फसलों को मिट्टी के साथ-साथ वायुमंडलीय सूखे का सामना करना पड़ सकता है। वायुमंडल में वाष्पोत्सर्जन की अधिक दर से जमीन में पानी रहते हुए भी पौधों से ऊत्तकों में जल की कमी होने लगती है और पानी की कमी से प्रकाश-संश्लेषण की दर में गिरावट आने लगती है।

पर्यावरण परिवर्तन का प्रभाव अप्रत्यक्ष रूप से भी भूमि की पैदावार पर पड़ सकता है। अतंतः समुद्र के खारे पानी की वजह से अच्छी तथा खेती योग्य भूमि का लवणीकरण हो सकता है जिसके फसलों के नष्ट होने की भी संभावना बढ़ी है। वहां गरान मैंग्राव जंगलों का विस्तार हो सकता है और फसल उत्पादन घट सकता है। परंतु पर्यावरण परिवर्तन से फसलों की उत्पादकता और उत्पादन में जहां एक ओर कमी आने की संभावना बढ़ी है वहीं दूसरी ओर मछली आदि के पालन में बढ़ोतरी हो सकती है।

पर्यावरण परिवर्तन का प्रभाव भूमध्य रेखा के आस-पास एवं मध्य-भूमध्यीय क्षेत्र में उगाई जाने वाली फसलों की पैदावार पर असर पडेगा, जबकि उच्च अंक्षाशों वाले शीतोष्ण क्षेत्रों में पर्यावरण परिवर्तन से खेती योग्य भूमि के क्षेत्रफल में बढ़ोतरी होने की संभावना है। समतापीय पर्यावरण वाले क्षेत्रों में गर्मी बढने से आकाश में छाए रहने से पृथ्वी पर आने वाले विकिरण की तीव्रता और प्रकाश अवधि में घटोतरी के कारण फसलों की वृद्धि और उत्पादन में कमी होने की संभावना बढ़ी है। वायुमंडल में प्रदूषण तथा तापमान में वृद्धि के साथ विकिरण तीव्रता और अवधि में कमी से सर्वप्रथम पौधों में प्रकाश-संश्लेषण की दर में गिरावट एवं श्वसन दर में बढ़ोतरी हो सकती है। इस परिवर्तन का प्रत्यक्ष असर फसलों में दाने और बीज बनाने वाले पुष्पों की बंध्यता पर पड़ता है। पर्यावरण कारकों के इस परिवर्तन से अधिकांश पुष्पों से फल नहीं बनते या कभी-कभी सभी पुष्पक्रम खाली रह जाते हैं। यह परिघटना विशेषकर धान में देखी गई है, हालांकि इसका प्रभाव अन्य धान्य फसलों पर भी पड़ता है। पर्यावरण परिवर्तन का मुख्य प्रभाव दानों और बीजों के उत्पादन पर पड़ता है। गर्मी बढ़ने के कारण रात-दिन के तापमान में अंतर कम होने के कारण रात में फसलों के श्वसन में वृद्धि हो सकती है।

वायुमंडलीय गर्माहट के कारण होने वाले पर्यावरण परिवर्तन का सबसे ज्यादा कुप्रभाव उपोष्ण पर्यावरण वाले क्षेत्रों में जाड़े के मौसम में उगाई जाने वाली फसलों, जैसे- गेहूं, जौ, चना, मटर, सरसों, गोभी, चुकंदर, इत्यादि पर पड़ने वाला है, क्योंकि तापमान में वृद्धि से इन फसलों की परिपक्वता अवधि में भारी कमी आ जाती है, यानी फसल कम अवधि में ही अपनी जीवन काल पूर्ण कर लेती है और इसके कारण उनकी वानस्पतिक, प्रजनन तथा पकने की अवस्थाओं में कमी आ जाती है। फलस्वरूप उनकी पैदावार में काफी कमी आ सकती है। ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है कि कम ठंडक वाले स्थानों, जैसे- बिहार, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, उत्तरी उड़ीसा तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश में, जहां आज कम पैदावार के बावजूद गेहूँ की खेती की जा रही है, भविष्य में इसकी खेती करना शायद संभव न हो क्योंकि तापमान में वृद्धि से उत्पादकता में कमी आ सकती है। इसके अलावा उत्तरी भारत के ठंडक वाले क्षेत्रों में जहां इसकी पैदावार काफी अच्छी है, जैसे पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, वहां भी पैदावार में कमी हो सकती है। दूसरी ओर अति ठंडक वाले क्षेत्र हैं, जहां पर तापमान बढ़ने से इन क्षेत्रों में भी खेती करना शायद संभव हो सके। इस प्रकार जहां समुद्रतटीय क्षेत्रों में फसलों के क्षेत्रफल में लवणता के कारण कमी होने के आसार बढ़े हैं, वही पर अति ठंडक वाले क्षेत्रों में खेती योग्य भूमि का विस्तार होने की संभावना व्यक्त की जा रही है और अंततः संपूर्ण भौगोलिक स्तर पर खाद्यान्नों और अन्य फसलों के उत्पादन में शायद कमी न हो, परंतु वास्तविकता का ठीक-ठीक पता लगाना अभी संभव नहीं हो पाया है।

फसलों की उत्पादकता तथा उत्पादन पर पर्यावरण परिवर्तन का प्रभाव वायुमंडल में बढ़ती कार्बन डाई ऑक्साइड की सांद्रता के कारण पड़ सकता है, क्योंकि इसके बढ़ने से जहां एक तरफ वायुमंडल का तापमान बढ़ सकता है वहीं दूसरी तरफ इसकी बढ़ती सांद्रता से फसलों की उपज में भारी परिवर्तन होने की आशंका बढ़ी है क्योंकि कार्बन डाई ऑक्साइड प्रकाश-संश्लेष्ण में प्रयुक्त होने वाली एक प्रमुख गैस है। पृथ्वी की वनस्पतियों को प्रकाश- संश्लेष्ण की प्रक्रिया के आधार पर तीन प्रमुख समूहों में बांटा गया हैः C-3, C-4, एवं सी.ए.एम.। इन तीनों समूहों के पौधों की पर्यावरण संबंधी आवश्यकता भिन्न-भिन्न होती है। सी3 पौधे मुख्यत: शीतोष्ण जलवायु, C-4 मुख्यत: समतापीय और सी.ए.एम. पौधे विशेषकर शुष्क पर्यावरण में पाए जाते हैं। C-3 पौधों पर वायुमंडल में होने वाले कार्बन डाई ऑक्साइड की सांद्रता में वृद्धि का सीधा प्रभाव पड़ता है। इस समूह के पौधे 600 पी.पी.एम तक सांद्रता बढ़ने तक अपने प्रकाश-संश्लेष्ण की दर में लगातार वृद्धि करते हैं, जबकि इस बढ़ोतरी का प्रभाव C-4 पौधों में नहीं के बराबर है। प्रयोगों से यह देखा गया है कि कार्बन डाई ऑक्साइड की सांद्रता में 600 पी.पी.एम तक वृद्धि करने से C-3 समूह की फसलों की पैदावार में 10-50 प्रतिशत तथा C-4 समूह की फसलों की पैदावार में करीब 5-10 प्रतिशत की वृद्धि होती है। अतः प्रत्यक्ष रूप से वायुमंडल में कार्बन डाई ऑक्साइड की सांद्रता में वृद्धि से C-3 फसलों की उत्पादकता में बढ़ोतरी की आशा की जा रही है, परंतु अप्रत्यक्ष रूप से C-3 फसलों में इसी समूह के पाए जाने वाली खरपतवारों की वृद्धि से फसलों व खरपतवारों के बीच सीधी प्रतियोगिता के कारण C-3 फसलों की उपज में कमी आ सकती है। C-4 समूह की फसलों की पैदावार में बढ़ती कार्बन डाई ऑक्साइड का कोई प्रत्यक्ष लाभ नहीं होने वाला है। भविष्य में जहां मिट्टी में नमी की कमी तथा वायुमंडल के तापमान में वृद्धि होने की संभावना है। ऐसी हालत में सी.ए.एम. समूह की फसलों के क्षेत्रफल में विस्तार हो सकता है।

पर्यावरण परिवर्तन के कारण मिट्टी में नमी

की उपलब्धता जल्द समाप्त होने के कारण बारानी फसलों की बोआई के समय में भी परिवर्तन हो सकता है और वायुमंडल के तापमान में वृद्धि से सामान्य सिंचित अवस्था में भी मौसमी फसलों जैसे- आम, अंगूर, संतरा, सेब, गेहूँ, चना, मटर इत्यादि की परिपक्वता वाले समय में परिवर्तन की संभावना बढ़ी है। पर्यावरण परिवर्तन का सबसे ज्वलंत उदाहरण गेहूं की बोआई के समय में परिवर्तन से आंका जा सकता है। आज से 15 वर्ष पूर्व गेहूँ की बोआई का उचित समय 15 अक्टूबर से 15 नवंबर होता था, परंतु आज इसका उचित समय 15 नवंबर से 15 दिंसबर है। अतः पर्यावरण परिवर्तन के कुप्रभावों से बचने के लिए यह आवश्यक है कि जीवों (पौधों, जंतुओं) में पर्यावरण परिवर्तन के अनुरूप अपने को ढालने की क्षमता का विकास हो।

पर्यावरण परिवर्तन का प्रभाव चूंकि पृथ्वी के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों पर भी पड़ सकता है अतः इसका प्रभाव विभिन्न स्थानों पर उगाई जाने वाली विभिन्न प्रकार की फसलो पर भी पड़ सकता है । जिस स्थान पर आज गेंहू, जौ, चना, मटर इत्यादि उगाए जा रहे हैं वहां भविष्य में कंदीय फसलों या फिर ज्वार, बाजरा या मक्के की खेती होने लगे और इस तरह वहां पर खाद्य उत्पादों और लोगों के खाने की आदतों में भी परिवर्तन आ सकता है।

कृषि क्षेत्र में पर्यावरण परिवर्तन के जो संभावित प्रभाव दिखने वाले हैं, वे मुख्य रूप से दो प्रकार के हो सकते हैं। पहला क्षेत्र-आधारित तथा दूसरा फसल-आधारित। अर्थात् विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न फसलों पर अलग-अगल प्रभाव पड़ सकता है।

गेंहू और धान हमारे देश की प्रमुख खाद्य फसलें हैं। इनके उत्पादन पर पर्यावरण परिवर्तन के निम्नलिखित प्रभाव पड़ रहे हैं :

- अध्ययनों में पाया गया है कि यदि तापमान 2° सेल्सियस के करीब बढ़ता है तो अधिकांश स्थानों पर गेंहू की उत्पादकता में कमी आएगी। जहां उत्पादकता ज्यादा है (उत्तरी भारत में) वहां कम प्रभाव दिखेगा। जहां कम उत्पादकता है वहां ज्यादा प्रभाव दिखेगा।
- प्रत्येक 1 सेल्सियस तापमान बढ़ने पर गेंहू का उत्पादन 4-5 करोड़ टन कम होता जाएगा। अगर किसान इसके बोआई का समय सही कर लें तो उत्पादन की गिरावट 1-2 टन कम हो सकती है।
- हमारे देश में कुल फसल उत्पादन में 42.5 प्रतिशत हिस्सा धान की खेती का है।
- तापमान वृद्धि के साथ-साथ धान के उत्पादन में गिरावट आने लगेगी।
- अनुमान है कि 2° सेल्सियस तापमान वृद्धि से धान का उत्पादन 0.75 टन प्रति हेक्टेयर कम हो जाएगा।
- देश का पूर्वी हिस्सा धान उत्पादन में ज्यादा प्रभावित होगा एवं अनाज की मात्रा में कमी आ जाएगी।
- धान वर्षा आधारित फसल है। इसलिए पर्यावरण परिवर्तन के साथ बाढ़ और सूखे की स्थितियां बढ़ने पर फसल का उत्पादन गेहूँ की अपेक्षा ज्यादा प्रभावित होगा।
- पर्यावरण परिवर्तन से केवल फसलों का उत्पादन ही नहीं प्रभावित होगा परंतु उनकी गुणवत्ता पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। अनाज में पोषक तत्वों और प्रोटीन की कमी पाई जाएगी जिसके कारण संतुलित भोजन लेने पर भी मनुष्यों का स्वास्थ्य प्रभावित होगा और ऐसी कमी की अन्य कृत्रिम विकल्पों से भरपाई करनी पडेगी। गंगा तटीय क्षेत्रों में तापमान वृद्धि के कारण अधिकांश फसलों का उत्पादन घटेगा।

पर्यावरण परिवर्तन के संभावित प्रभाव

- सन् 2100 तक फसलों की उत्पादकता में 10-40 प्रतिशत की कमी आएगी।
- रबी की फसलों को ज्यादा नुकसान होगा। प्रत्येक 1° सेल्सियस तापमान बढ़ने पर 4-5 करोड़ टन अनाज उत्पादन में कमी आएगी।
- पाले के कारण होने वाले नुकसान में कमी आएगी जिससे आलू, मटर और सरसों को कम नुकसान होगा।
- सूखा और बाढ़ में बढ़ोतरी होने की वजह से फसलों के उत्पादन में अनिश्चितता की स्थिति होगी।
- फसलों के बोए जाने का क्षेत्र भी बदलेगा, कुछ नए स्थानों पर उत्पादन किया जाएगा।
- खाद्य व्यापार में पूरे विश्व में असंतुलन बना रहेगा।
- पशुओं (विशेषकर दुग्ध उत्पादन हेतु) के लिए पानी, पशुशाला और ऊर्जा संबंधी जरूरतें बढ़ेगी।
- समुद्रों व नदियों के पानी का तापमान बढ़ने के कारण मछलियों व जलीय जंतुओं की प्रजनन क्षमता व उपलब्धता में कमी आएगी।
- सूक्ष्म जीवाणुओं और कीटों पर प्रभाव पड़ेगा। कीटों की संख्या में वृद्धि होगी तो सूक्ष्म जीवाणु नष्ट होंगे।
- वर्षा आधारित क्षेत्रों की फसलों को अधिक नुकसान होगा क्योंकि सिंचाई हेतु पानी की उपलब्धता भी कम होती जाएगी।

13

फूलों की खेती से ग्रामीण समृद्धि

श्री जगनारायण

फूलों की उपयोगिता सर्वव्यापी है। फूल मानव के लिए हमेशा से आकर्षण का केंद्र रहे हैं। दुनिया के सभी समुदायों में पूजा-सजावट, भेंट-सम्मान, श्रद्धा और प्रेम के प्रदर्शन में फूलों के आदान-प्रदान की परंपरा अत्यंत प्राचीन काल से रही है। पुष्प-गुच्छ, गुलदस्ता, हार, गजरा, माला और खुले फूल, देवी-देवताओं, महापुरूषों को आज भी समर्पित होते हैं। फूलों के प्रयोग की यह परिपाटी शादी-ब्याह में मंडप और दुल्हन की सजावट के साथ ही महिलाओं के शृंगार के लिए अनादि काल से सारी दुनिया में प्रचलित है। सभी तरह के आयोजनों में फूलों की सजावट प्रतिष्ठा की सूचक मानी जाती है। फूलों की इस व्यापक उपयोगिता के चलते इसकी मांग दिनों-दिन बढ़ रही है, जिसके चलते इसके व्यापार, खेती और उत्पादन में लगातार वृद्धि हो रही है।

फूलों की खेती का वैश्विक परिदृश्य

आज के वैश्वीकरण के इस दौर में पूरी दुनिया में फूलों की खेती और व्यवसाय में मांग की उत्तरोत्तर बढ़ोतरी के चलते, इसकी खेती में गुणात्मक बदलाव हो रहे हैं। आज दुनिया के देशों में कटे हुए फूलों के साथ सजावटी पत्तों की मांग 15 प्रतिशत की वार्षिक दर से बढ़ रही है। इस बढ़ोतरी में फूलों की वैश्विक मांग के साथ ही पारंपरिक पुष्प उत्पादक देशों, जापान, अमेरिका, इटली, नीदरलैंड, और कोलंबिया की आपसी प्रतिस्पर्धा के साथ ही फूल उत्पादन के क्षेत्र में दूसरे गैर-परंपरागत देशों के प्रवेश ने वैश्विक पुष्प व्यवसाय की प्रतिस्पर्धा में विशेष रूप से इजाफा किया है।

आज फूलों की खेती में लैटिन अमेरिकी देशों के अलावा अफ्रिका, एशिया के कई अन्य देशों के आगे आने के कारण ही यह प्रतिस्पर्धा बढ़ी है। यों तो फूलों की खेती घरेलू मांग के चलते दुनिया के सभी देशों में होती है। सन् 2003-04 में सकल विश्व का पुष्प व्यवसाय 80 बिलियन अमेरिकी डालर था। आज पुष्प उत्पादन और व्यवसाय में लगे दुनिया के बीस शीर्षस्थ देश कटे हुए फूलों और सजावटी पत्तों के उत्पादन में आगे हैं। इनमें केवल नीदरलैंड, कोलंबिया, इटली और इजराइल जैसे चार देश ही दुनिया के 90 प्रतिशत पुष्प व्यवसाय पर काबिज है। शेष सोलह देश मात्र 10 प्रतिशत फूलों का वैश्विक उत्पादन और व्यवसाय करते हैं।

नीदरलैंड दुनिया का सबसे बड़ा फूलों का निर्यातक देश है। नीदरलैंड अपने निर्यात के लिए फूल दूसरे देशों से मंगाकर उनसे पुष्प-गुच्छ आदि बनाने के बाद टिकाऊ और आकर्षक रूप देकर दुनिया के दूसरे देशों को निर्यात कर देता है। कटे हुए फूलों और आकर्षक फूलों वाले गमलों और सुंदर सजावटी पौधों के उत्पादन के मामले में संयुक्त राज्य अमेरिका, नीदरलैंड, जर्मनी, फ्रांस और इटली दुनिया के सबसे अग्रणी देशों में गिने जाते हैं।

फूलों के आयातक देशों में जर्मनी, संयुक्त राज्य अमेरिका, फ्रांस, स्विटजरलैंड, ग्रेट ब्रिटेन, ऑस्ट्रिया, बेल्जियम, स्वीडन शीर्ष पर हैं। यद्यपि अमेरिका स्वयं दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक देश है, लेकिन अपने देशवासियों के पुष्प प्रेम के चलते वह अपने यहां के फूलों की मांग को केवल अपनी पैदावार से पूरा नहीं कर पाता है। वह दूसरे देशों से फूलों का आयात करके अपने देश की मांग को पूरा करता है। अमेरिका सबसे अधिक फूल अपने पड़ोसी देश कोलंबिया से आयात करता है। इसी प्रकार दुनिया का सबसे बड़ा फूलों का निर्यातक देश नीदरलैंड सबसे ज्यादा फूल इजराइल से आयात करने के बाद उसे आकर्षक सजावटी रूप देकर दुनिया के तमाम देशों को निर्यात कर आज विश्व का सबसे बड़ा पुष्प निर्यातक देश बना हुआ है।

सन् 2002 में संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा दुनिया भर में फूलों का निर्यात और आयात करने वाले देशों का विवरण तैयार कराने पर पता चला था कि सन् 2002 में विश्व भर का सकल पुष्प व्यवसाय 79074.91 अमेरिकी लाख डॉलर का था। फूलों का यह विश्वव्यापी व्यवसाय 2001 की तुलना में 1.7 प्रतिशत अधिक था। इसमें लगभग 39902.04 लाख अमेरिकी डॉलर का व्यवसाय कटे हुए फूलों का और 3222.33 लाख अमेरिकी डॉलर का व्यवसाय सजावटी पौधों का हुआ था। इसके अलावा 6949.55 लाख अमेरिकी डॉलर का कटे हुए सजावटी पत्तों वाले पौधों का व्यवसाय भी हुआ था। सन् 2003-2004 की विश्व पुष्प व्यापार में बढ़ोतरी की दर 8 प्रतिशत के आस-पास रही। यद्यपि फूलों के विश्वव्यापी व्यापार में अक्सर उतार-चढ़ाव आता रहता है, लेकिन कुल मिलाकर विश्व पटल पर फूलों का व्यवसाय औसत रूप में आकर्षक बढ़ोतरी का संकेत देता है।

भारत में फूलों की खेती और व्यवसाय

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि आज सारी दुनिया में फूलों की मांग में गुणात्मक वृद्धि हो रही है। जिसके चलते इसकी खेती भी उत्तरोत्तर प्रगति पर है। फूलों की मांग में बढ़ोत्तरी के मद्देनजर इनकी खेती और वैश्विक व्यवसाय का भविष्य अत्यंत उज्ज्वल प्रतीत होता है। भारत मूलतः कृषि प्रधान देश है। यहाँ की आधी से भी अधिक आबादी गाँवों में रह कर किसी न किसी रूप से खेती से ही जुड़ी हुई है। उसकी रोजी-रोटी और व्यवसाय खेती पर ही निर्भर है।

फूलों की मांग में बढ़ोत्तरी का यह वर्तमान परिदृश्य भारतीय किसानों के लिए इस दिशा में पारंपरिक फसलों की खेती से हटकर फूलों की खेती में अच्छी संभावनाओं वाला है। भारत का विस्तृत परिक्षेत्र और यहाँ के जलवायु की विभिन्नता के चलते वर्ष भर अलग-अलग प्रांतों में निर्यात के लायक विभिन्न श्रेणी के फूलों की खेती और उनके निर्यात की संभावनाएं सर्वथा अनुकूल हैं। इसके अलावा, भारत की धर्म प्रेमी जनता वर्ष भर पूजा-पाठ, शादी-ब्याह, महिलाओं के श्रृंगार और अन्य आयोजनों में फूलों का नियमित प्रयोग करती रहती है, जो इसके स्थानीय पुष्प व्यवसाय का ठोस आधार है।

आज के वैश्विक परिवेश में पुष्प उत्पादन के क्षेत्र में लगे भारतीय पुष्प उत्पादकों को वैश्विक मांग के अनुरूप पुष्प कृषि में लगाकर भारत की विभिन्नताओं से भरी जलवायु का लाभ लेकर विदेशी मुद्रा की अच्छी कमाई की जा सकती है। विश्व बाजार में फूलों की मांग को ध्यान में रखकर भारत सरकार ने फूलों की खेती से संबंधित समस्त पक्षों पर विशेष ध्यान दिया है, जिसके चलते भारत में घरेलू पुष्प व्यापार में अच्छी बढ़ोत्तरी देखी जा रही है। फूलों के घरेलू व्यवसाय में 7-10 प्रतिशत तक की वार्षिक बढ़ोत्तरी

आंकी गई है। वर्ष 2004 में देश का पुष्प व्यवसाय 60 करोड़ रुपए तक जा पहुँचा है।

भारत का स्थानीय पुष्प व्यवसाय कई चरणों वाला है। यह गमले में लगे पुष्पित एवं सजावटी पत्तों वाले एवं बोन्साई पौधों से लेकर तैयार फूलों, पौधों, बीज, कंद और सुगंधित तेल उत्पादन और औषधीय पुष्पों की पैदावार तक परंपरागत रूप से फैला है जो वार्षिक 200 मिलियन डॉलर का आंका गया है। लेकिन भारत का यह पुष्प व्यवसाय विश्व पुष्प व्यवसाय के परिप्रेक्ष्य में मात्र 0.06 प्रतिशत ही है। रजनी गंधा, गुलाब, गेंदा, गुड़हल, गुलादाउदी आदि भारत के पारंपरिक पुष्प हैं। आधुनिक फूलों में ग्लैडिओलस, कारनेशन, एंथूरियम और ऑर्किड का विशेष उत्पादन और व्यवसाय हो रहा है, यद्यपि इन फूलों और फूलों के पौधों का व्यवसाय अधिकतर देश के भीतर तक ही सीमित है। हाल के दिनों में निर्यात की दृष्टि से भारतीय पुष्प उत्पादकों के बीच एलस्ट्रोमिया विशेष रूप से चर्चित हुआ है जिसका निर्यात की दृष्टि से विशेष महत्व है।

फूलों की खेती और व्यवसाय में वर्तमान भारतीय प्रयास

भारत सरकार ने फूलों के निर्यात के लिए हाल के दिनों में कुछ विशेष कार्यक्रम शुरू किए हैं, जिसके अंतर्गत पुष्प उत्पादक जनपदों के समीप वाले शहरों, मुंबई, पुणे, बेंगलूरु, चेन्नई, हैदराबाद, दिल्ली, चंडीगढ़, लखनऊ और कोलकाता में विशेष निर्यातक केंद्रो की स्थापना शुरू हुई है। इनमें से कुछ केंद्रो ने विदेशी तकनीकों के सहयोग से पुष्प उत्पादन को विशेष संरक्षण देकर फूलों के निर्यात की दिशा में आशाप्रद प्रयास शुरू किया है। इस दिशा में भारत सरकार के सहयोग से निम्न पांच केंद्रों का संचालन शुरू किया गया है :

1. तमिलनाडु की टैनफ्लोरा परियोजना - इस परियोजना के अंतर्गत टैनफ्लोरा इन्फ्रास्ट्रक्चर पार्क लिमिटेड के माध्यम से 24.84 करोड़ रुपए की योजना है। सन् 2003-2004 के दौरान इस परियोजना के माध्यम से 0.30 करोड़ रुपए के फूलों का निर्यात हुआ है।

2. महाराष्ट्र पुष्प-निर्यात परियोजना - महाराष्ट्र प्रांत में इस परियोजना के माध्यम से फूलों की खेती और उसके निर्यात के लिए भारत सरकार ने 17.89 करोड़ रुपए की योजना को स्वीकृति प्रदान की है। इस परियोजना के माध्यम से आगामी पांच सालों में 75 करोड़ रुपए से फूलों के उत्पादन और निर्यात की संभावना आंकी गई है। इसके अंतर्गत मुंबई में एक फूल नीलामी केंद्र की स्थापना भी होगी। जिसके निर्माण के लिए भारत सरकार के द्वारा पांच करोड़ रुपए स्वीकृत किए गए हैं।

3. उत्तराखंड पुष्प निर्यात एवं परियोजना- इस योजना के अंतर्गत केंद्र सरकार और उत्तराखंड सरकार के संयुक्त तत्वाधान में मेसर्स चड्डा फार्म, मेसर्स विजनय फ्लोरीकल्चर एंड सीड्स और पुष्पम्, फ्लोरावेस एंड सीड्स जैसी कंपनियों के सहयोग से नैनीताल तथा उद्यम सिंह नगर और देहरादून जैसे स्थानों पर कई पुष्प उत्पादन और निर्यात परियोजनाओं पर काम चल रहा है। इन परियोजनाओं में 13.76 करोड़ रुपए की लागत की संभावना है।

4. कर्नाटक पुष्पोद्यान परियोजना - बेंगलूरु और हौसूर क्षेत्र में फूलों की खेती और व्यापार को बढ़ावा देने के लिए इस परियोजना को कार्यान्वित किया गया है। इस परियोजना के अंतर्गत बेंगलूरु हवाई अड्डे को कार्गो सुविधा से संपन्न बनाने की प्रक्रिया शुरू हुई है। इस परियोजना में लगभग 29.28 करोड़ रुपए के व्यय का अनुमान है

तथा इससे आगामी पांच वर्षों में 312 करोड़ रुपयों के निर्यात की संभावना आंकी गई है। इस परियोजना के अंतर्गत मड्डकेरी में फूलों की मांग के अनुसार संवेष्ठित करके ढुलाई के लिए पैक हाउस स्थापित करने की भी योजना है।

5. सिक्किम पुष्प कृषि परियोजना - सिक्किम प्रांत की जलवायु ऑर्किड के फूलों के लिए सर्वथा उपयुक्त है। यहां पहले से ही आर्किड के फूलों की खेती और निर्यात का कार्य होता रहा है। पहले से चली आ रही यहां के फूलों की खेती और व्यवसाय को ध्यान में रखकर 32.31 करोड़ रुपए की आधुनिक संसाधनो से युक्त पुष्प कृषि और निर्यात परियोजना कार्यान्वित की गई है। इस परियोजना में 1500 लोगों की नियुक्ति के साथ ही 3500 से ज्यादा लोगों को रोजगार मिलने की संभावना है।

भारतीय पुष्प व्यवसाय की वर्तमान समस्याएं

भारत में फूलों की बागवानी और उसके प्रयोग के प्रमाण अत्यंत प्राचीन हैं जिसकी चर्चा रामायण और महाभारत में भी मिलती है। आधुनिक वैश्विक परिवेश में हमारे फूलों के उत्पादन का स्वरूप विश्व के आधुनिक पुष्प उत्पादक और निर्यातक देशों के समकक्ष है, लेकिन इन फूलों के निर्यात के लिए इनकी तुड़ाई से लेकर गंतव्य तक पहुँचाने में उनकी सुंदरता को बरकरार रखने के मामले में हम विश्व के अग्रणी पुष्प उत्पादक देशों से बहुत पीछे हैं। इसके कारण गंतव्य स्थल तक पहुंचत-पहुंचते भारतीय फूलों की गुणवत्ता में बहुत गिरावट आ जाती है और यूरोपीय पुष्प निर्यातक देशों की तुलना में भारतीय पुष्प उत्पाद ज्यादा समय तक अपनी सुंदरता और ताजगी को कायम नहीं रख पाते, जिसके कारण विश्व बाजार में भारतीय फूलों की मांग यूरोपीय देशों की तुलना में कम है।

भारतीय पुष्पों के प्रमुख ग्राहक देश

भारतीय फूलों के प्रमुख ग्राहक संयुक्त राज्य अमेरिका और जर्मनी हैं।

भारत से उपरोक्त कुल विदेशी पुष्प निर्यात में तमिलनाडु, कर्नाटक और महाराष्ट्र राज्यों में उत्पादित कर्तित गुलाब के फूलों का हिस्सा 95 प्रतिशत था। 2003-04 में 30659.53 टन पुष्प उत्पादों का निर्यात हुआ जिसकी कीमत 249.55 करोड़ रुपए थी। इसमें 73 करोड़ रुपए के फूलों का निर्यात संयुक्त राज्य अमेरिका को, 28 करोड़ रुपए का निर्यात युनाइटेड किंग्डम को और 27 करोड़ रुपए के फूलों का निर्यात नीदरलैंड को किया गया। इसमें 71 प्रतिशत सूखे फूल और फूलों के पौधे थे। इसमें ताजा कर्तित फूलों की मात्रा केवल 18 प्रतिशत थी तथा 11 प्रतिशत फूलों के बीज और अन्य पुष्प उत्पाद शामिल थे।

भारत से होने वाले पुष्प निर्यात के इसी क्रम में हाल के वर्षों में 2009-10 और 2010-11 में हुए पुष्प उत्पादों के निर्यात को नीचे सारणी में दर्षाया गया है।

सुझाव

भारत में फूलों की खेती के विकास और मांग में वृद्धि और लाभकारी निर्यात के लिए निम्न सुझावों पर अमल कर फूलों की खेती, मांग और आपूर्ति को समुन्नत बना कर इस क्षेत्र में रोजगार की वृद्धि के साथ ही विदेशी मुद्रा प्राप्ति की संभावनाओं को सुदृढ़ किया जा सकता हैः

1. भारतीय क्षेत्रों में उगने वाले फूलों की सुंदरता और गुणवत्ता यूरोपीय देशों में उगने वाले फूलों से किसी भी प्रकार कम नहीं होती, लेकिन यहाँ के फूलों की तुड़ाई के घटिया तरीके के कारण भारतीय फूलों के टिकाऊपन और गुणवत्ता में भारी गिरावट आ जाती है। अतः हमें अपने फूल तोड़ने वाले श्रमिकों को तकनीकी प्रशिक्षण देकर

सारणी:1 भारत द्वारा वर्ष 2009-10 और 2010-11 में प्रमुख देशों को पुष्प निर्यात

देश	मात्रा (कि ग्रा)	मूल्य (लाख रु)	मात्रा (कि ग्रा)	मूल्य (लाख रु)
संयुक्त राज्य अमेरिका	5871141.00	5305.56	7153845.00	5686.54
जर्मनी	3688210.00	4064.97	4511556.00	4280.57
नीदरलेंड	3146769.00	4217.89	2989525.00	4161.98
यूनाइटेड किंग्डम	3707258.00	3788.25	4116040.00	3761.75
जापान	970917.00	1558.74	576709.00	1151.87
संयुक्त अरब अमीरात	971655.00	1071.14	812756.00	959.14
इटली	1453654.00	814.41	1234041.00	856.83
कनाडा	534144.00	769.02	532819.00	798.36
बेल्जियम	470178.00	484.12	761952.00	774.32
इथोपिया	706194.00	1746.67	69119.00	633.52
कुल निर्यात	26814518.00	29446.38	27776139.00	28645.42

स्रोत- डी जी सी आई एस वार्षिक निर्यात ।

उनके स्तर को यूरोप जैसा उन्नत बनाना होगा, जिससे फूलों के तुड़ाई के दौरान उनकी गुणवत्ता और टिकाऊपन पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

2. फूलों की ढुलाई और रख-रखाव की भारतीय व्यवस्था अत्यंत निम्नस्तरीय होती है, जिसके कारण फूलों की पंखुडियां जल्दी ही बिखर जाती हैं या तुड-मुड़ जाती हैं, जिससे उनकी गुणवत्ता और टिकाऊपन में गिरावट आ जाती है। अतः फूलों की ढुलाई के लिए हमें विशेष व्यवस्था करते हुए फूलों के अनुरूप उच्च स्तरीय परिवहन व्यवस्था करनी चाहिए।
3. नीलामी गृहों में आए हुए फूलों के रख-रखाव के लिए प्रशिक्षित कर्मियों को लगाकर उत्तम व्यवस्था करनी चाहिए जिससे फूलों की गुणवत्ता में गिरावट न आए और फूलों की ताजगी और सुंदरता लंबे समय तक बनी रहे।
4. अच्छी आय के लिए बेमौसम में फूल उगाने के लिए बड़े पैमाने पर कृत्रिम वातावरण देने वाले पॉलीहाउसों की व्यवस्था करनी चाहिए जिससे विदेशी प्रतिस्पर्धियों के साथ प्रतिस्पर्धा में आसानी रहे।
5. शोध के माध्यम से फूलों की ऐसी नई-नई किस्मों का विकास किया जाना चाहिए जो पुरानी किस्मों से हटकर मौसम और परिवहन की मार सहने में सक्षम और आकर्षक गुणवत्ता से युक्त एवं देखने में बिल्कुल अलग हों।
6. पुष्प कृषि के लिए किसानों को विशेष प्रशिक्षण और छूट दी जानी चाहिए। उन्हें बैंकों से अनुदान के साथ धन उपलब्ध कराया जाए।
7. पुष्प उत्पादन के साथ ही उसके वितरण की उपयुक्त व्यवस्था की जाए।
8. फूलों के बीज और पौधों की उपलब्धता पर विशेष ध्यान दिया जाए।
9. विदेश जाने वाले फूलों के वायुयान किराए में छूट की व्यवस्था हो।
10. पुष्पोत्पादन को उद्योग का दर्जा प्रदान किया

जाए।

11. फूलों की खेती, तुडाई, पैकिंग, परिवहन, रख-रखाव के अलग-अलग पाठ्यक्रमों का निर्धारण कर इस दिशा में किसानों सहित अन्य कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करने के वृहद् कार्यक्रम चलाए जाएं।

उपसंहार

भारत की भौगोलिक परिस्थितियों के साथ ही यहाँ की परंपराओं के आलोक में पुष्प व्यवसाय में अपार संभावनाएं हैं। ये संभावनाएं जहां देशी बाजारों के लिए हैं, वहीं विदेशी बाजारों के लिए और भी अधिक हैं। देशी बाजारों में जहां आधुनिक फूलों और परंपराओं वाले फूलों की मांग है वहीं विश्व बाजार में फूलों की भी मांग के अनुरूप वैश्विक परिवेश में प्रतिस्पर्धी देशों के नए उत्पादों के अनुसार अक्सर बदलती रहती है। अतः विश्व के फूल व्यवसायी देशों की चुनौतियों को देखते हुए हमें अपने पुष्प उत्पादन और व्यवसाय की दिशा में उन्नति के ठोस रूख का निर्धारण करना चाहिए। इसमें कोई दो राय नहीं कि इस क्षेत्र में पर्याप्त संभावनाएं हैं। लेकिन आज आवश्यकता इस बात की है कि हम सतत रूप से लगकर इस दिशा में नई-नई तकनीकों और किस्मों का विकास करें, जिससे हमारे फूलों के व्यवसाय में फैशन डिजाइन की तरह नए तरह के फूलों की किस्में समय-समय पर उपलब्ध होती रहें। इसके साथ ही पुष्प उत्पादन में इस बात की भरपूर व्यवस्था करनी चाहिए कि भारतीय खेतों में उगने वाले फूल दुनिया के अन्य देशों की तरह अधिक दिनों तक टिकाऊ बने रहने में सक्षम हों। इसके लिए फूलों को टिकाऊ बनाए रखने वाले पर्यावरण-मित्र रसायनों की खोज कर उनके प्रयोग के लिए अपने पुष्प उत्पादक किसानों में वैज्ञानिक प्रशिक्षण की योजनाएं संचालित करनी होंगी। इसके अलावा हमारे वनस्पति-वैज्ञानिकों और पुष्प-कृषि विशेषज्ञों को अपने शोध में ऐसी नई किस्मों के विकास का सतत प्रयास करते रहना होगा जिससे हमारे खेतों में उगने वाले फूल लंबे समय तक ताजे, सुंदर और टिकाऊ बने रहें और परिवहन प्रक्रिया के दौरान उनका टिकाऊपन और सुंदरता बरकरार रह सके। इसके अलावा फूलों की आकर्षक नई किस्मों की खोज के कार्य की दिशा में भी हमें अनवरत काम करने की व्यवस्था करनी होगी। यह कार्य ठीक उसी तर्ज पर करना होगा जैसा कि बड़ी कंपनियां अपने यहां शोध एवं विकास प्रभाग में करती रहती हैं। इसके लिए हमें सब्जी-बीज का व्यवसाय करने वाली विश्वस्तरीय कंपनियों की कार्यप्रणाली का अध्ययन कर उसके अनुसार अपनी नीतियों के लिए भी फूलों की मांग वाले देश के लोगों की रुचि का ध्यान रख कर ही फूल उगाने के अलावा उन देशों में अपने साधन संपन्न पुष्प विक्रय केंद्र भी खोलने चाहिए, जहां प्रशिक्षित कर्मचारियों द्वारा वातानुकूलित पुष्पगृहों में फूलों को लंबे समय तक सुरक्षित रख कर विक्रय किया जा सके। इसके साथ ही ग्राहक देश के पुष्प प्रेमियों की पसंद को जानने की भी व्यवस्था करनी चाहिए। इस क्षेत्र को गतिशील बनाने के लिए हमें विदेशी विशेषज्ञों की सहायता लेकर अपने काम में सुधार लाना चाहिए।

कुल मिलाकर भारत में प्राचीन कृषि आधारित ग्रामीण परिवेश तथा बहुमौसमी विशाल भौगोलिक स्थितियों के चलते फूलों के वैश्विक व्यापार की प्रबल संभावनाएं हैं। हमारे देश की बनावट और एक ही समय में अलग-अलग क्षेत्रों की अलग-अलग मौसमी परिस्थितियां फूलों की खेती और वैश्विक व्यवसाय के लिए सर्वथा अनुकूल है। इस दिशा में उत्तम और लाभकारी परिणाम पाने के लिए दृढ़ इच्छाशक्ति के साथ देश में उपलब्ध संसाधनों का सुनियोजित उपयोग कर अच्छी योजनाओं के साथ सतत प्रयत्नशील होने पर आकर्षक लाभ प्राप्त किया जाना पूरी तरह संभव है।

14

जैव उर्वरकों का मानकीकरण एवं उपयोगिता

डॉ. एन.के. बोहरा

रासायनिक उर्वरकों के निरंतर प्रयोग से पर्यावरण तथा भूमि दोनों ही दूषित हुए है, जिससे कि भूमि के भौतिक व रासायनिक गुणों में भी अंतर पाया गया है। फसल-उत्पादन लागत बढ़ी है तथा उर्वरकों का पर्यावरण एवं स्वास्थ्य पर भी विपरीत प्रभाव देखा गया है। अतः इससे निजात पाने हेतु 21वीं सदी के लिए भारत सरकार का कृषि मंत्रालय भी कृषि में अधिकतम जैव उर्वरकों के प्रयोग पर बल दे रहा है क्योंकि जैव उर्वरकों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। ये रासायनिक उर्वरकों से काफी सस्ते पडते हैं, भूमि व पर्यावरण को भी दूषित नहीं करते तथा भूमि की उत्पादन व उर्वराशक्ति को सत्त बनाए रखते हैं। जैव उर्वरक वायुमंडल में विद्यमान नाइट्रोजन का भूमि में स्थिरीकरण करते हैं व मृदा फॉस्फेट को भी पौधों द्वारा लेने हेतु अम्लीय क्रिया द्वारा घुलनशील बनाते हैं। विभिन्न प्रकार के जैव उर्वरकों का मानकीकरण एवं उनकी उपयोगिता निम्न प्रकार है-:

1. **नील हरित शैवाल :** नील हरित शैवाल मिट्टी के समान सूखे पपडी जैसे टुकडे होते हैं। यह नई मिट्टी का एक कोशिकीय व स्थिर पानी का स्वतंत्र जीवाणु है। इसका किसी भी ऋतु में धान के पानी भरे खेत में प्रयोग किया जा सकता है। यह 20-30 किलो स्वतंत्र वायुमंडलीय नाइट्रोजन का एकत्रीकरण करता है। अब इस उत्पाद के परीक्षण व बनाने की विधि संबंधी सभी पहलुओं की विस्तृत जानकारी उपलब्ध है। गुणवत्ता के मापदंडों में कॉलोनी बनाने की न्यूनतम दर 10000 प्रति ग्राम, उत्पाद के प्रयोग में लाने की अवधि उत्पादक द्वारा घोषित करना या दो वर्षों तक बिना किसी जीवाणु हानि के संग्रह करने की क्षमता आदि हैं। नील हरित शैवाल का मुख्यतः धान की फसल में प्रयोग होता है। साधारणत: 10-15 किलो जैव उर्वरक धान की रोपाई से एक सप्ताह बाद खेत में भरे पानी में समान रूप से छिड़क दिया जाता है। इसका अधिक प्रयोग भी हानिकारक नहीं होता है। यदि धान की फसल में पहले नाइट्रोजन नहीं दिया है तो इसकी उपरोक्त मात्रा को दो गुना कर दिया जाता है।

उपयोगिता : यह देखा गया है कि नील हरित शैवाल से धान की फसल के लिए की एक तिहाई नाइट्रोजन की आपूर्ति की जा सकती है। साधारण रूप से यह 20-30 किलो स्वतंत्र वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करता है। इसका प्रयोग सुपर फॉस्फेट के साथ अधिक लाभकारी है। यह भूमि पर कोई हानिकारक असर नहीं डालता है और उर्वराशक्ति बढ़ाता है। धान की पैदावार में 10-15 प्रतिशत की वृद्धि होती है। इसके प्रयोग से लगभग 30 प्रतिशत नाइट्रोजन उर्वरकों की बचत होती है।

2. **राइजोबियम जीवाणु संवर्ध :** सूक्ष्म जीवाणु होते हैं जिन्हें केवल सूक्ष्मदर्शी से ही देख सकते हैं।

ब्यूरो से इस उत्पाद पर आईएस 8268:1986 का द्वितीय पुनरीक्षण तैयार है जो इसकी गुणता व परीक्षण के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान करता है। इसमें निम्नलिखित निर्धारण किए गए हैं : जीवाणु संवर्ध में निम्नतम 10 संख्या में जीवित राइजोबियम जीवाणु प्रति ग्राम, पी.एच मान 6.5 से 7.5, संवर्ध का जीवन काल 6 माह उत्पादन तिथि से, नमी 30-40 प्रतिशत व पैकिंग संबंधी पॉलिथीन की मोटाई निम्नतम 75 माइक्रोन है। यही जीवाणु भूमि में स्वतंत्र वायुमंडलीय नाइट्रोजन प्रदान करते हैं। इस जैव उर्वरक के प्रयोग से पौधे की जडों में ग्रंथिकाएं बनती हैं। यही ग्रंथिकाएं नाइट्रोजन स्थिरीकरण का कार्य करती हैं। इस जैव उर्वरक के प्रयोग से 50-100 कि. ग्राम प्रति हेक्टेयर वायुमंडलीय नाइट्रोजन भूमि में उपलब्ध होती है। फसल उत्पादन में भी 15-30 प्रतिशत की बढोतरी होती है। इस उर्वरक का दलहनी फसलों में महत्वपूर्ण योगदान है। राइजोबियम संवर्ध का 200 ग्राम का एक पैकेट एक एकड भूमि में यदि 10 किग्रा. बीज बोया जाता है तो वह एतदर्थ पर्याप्त होता है। इसे बीजों के ऊपर लेप के रूप में प्रयोग करते हैं। इस संवर्ध का 300-500 मि.ली. स्वच्छ पानी में घोल बनाकर उसमें थोड़ा गुड़ मिलाते हैं जिससे कि जीवाणु बीजों से चिपक जाएं व शुरूआत में सूक्ष्म जीवाणुओं को अनुकूल वातावरण मिले। इस घोल को बीजों पर डालकर हल्के हाथ से मिलाया जाता है। लेप होने के बाद थोड़ी देर तक बीजों को छाया में सुखाया जाता है तथा इस क्रिया के 5-6 घंटे के अंदर बीजों को बोना चाहिए।

उपयोगिता : इस जैव उर्वरक के प्रयोग से 10-30 कि.ग्रा. रासायनिक नाइट्रोजन की बचत होती है फसल की उपज में भी 20-25 प्रतिशत वृद्धि होती है। राइजोबियम जीवाणु हॉरमोन व विटामिन भी बनाते हैं जिससे पौधे की जड़ों का अच्छा विकास होता है व पौधे की बढ़त भी अच्छी होती है। यह पौधों की उर्वरा शक्ति को भी बढ़ाने में उपयोगी है।

3. एजोटोबैक्टर जीवाणु संवर्ध: यह जैव उर्वरक सभी अदलहनी फसलों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण का कार्य करता है। इसके एक ग्राम उत्पाद में लगभग 10 करोड़ जीवाणु होते हैं। भामा ब्यूरो ने भी इस दिशा में मानकीकरण का कार्य कर आई.एस. 9158 बनाया है जिसका प्रथम पुनरीक्षण तैयार है, जो आज के परिप्रेक्ष्य में रूपांतरित किया गया है। इस मानक में जीवित एजोटोबेक्टर जीवाणु 107 प्रति ग्राम, पीएच. मान 6.5-7.5, नमी 30-40 प्रतिशत निर्धारित की गई है तथा पैकिंग संबंधी गुणवता व परीक्षण की जानकारी दी गई है। यह कुछ हॉरमोनों का उत्सर्जन कर पौधों के विकास में सहायक होता है। यह अदलहनी फसलों, खाद्यान्नों, ज्वार, बाजरा आदि के लिए हितकारी है। इस जैव उर्वरक से बीज पौध, जड़ कंद व मृदा का उपचार किया जाता है। अतः बीज - उपचार हेतु 200 ग्राम के एक पैकेट को 200-500 मि.ली. पानी में घोल बनाकर इसकी 10-12 कि.ग्राम. मात्रा एक एकड जमीन के लिए पर्याप्त बीजों पर डालकर हाथों से मिलाया जाता है जिससे बीजों पर एक समान परत चढ़ जाए। जड़ों के उपचार हेतु 1-2 ग्राम जैव उर्वरक 10-20 लिटर पानी में घोल बनाकर पौधे की जड़ों को उपचारित कर तुरंत सिंचाई की जाती है। कंद उपचार हेतु 10 लिटर पानी में घोल बनाकर 105 क्विंटल कंदों पर छिड़काव द्वारा इस घोल को छिड़क कर या घोल में 10 मिनट डुबोकर तुरंत प्रयोग में लाते हैं।

उपयोगिता : इसके प्रयोग से 10-20 प्रतिशत पैदावार में बढोतरी होती है व प्रति हेक्टेयर 20-30 किग्रा. नाईट्रोजन की बचत की जा सकती है। यह भूमि में फॉस्फोरस अधिक करने में सहायक है जिससे कल्ले अधिक बनते हैं। यह फसलों में रोगाणुओं का दमन करता है व बीमारियों से बचाने में उपयोगी है।

4. एजोस्पिरिलम जीवाणु संवर्ध : यह जैव उर्वरक खाद्यान्नों, ज्वार-बाजरा, सब्जियों व गन्ने आदि फसलों के लिए हितकारी है। इसकी विशेषता यह है कि यह फसलों की जड़ों का अच्छा विकास कर स्वतंत्र नाइट्रोजन भूमि में प्रदान करता है। यह तुलनात्मक दृष्टि से कुछ गर्म स्थानों में प्रयोग होता है। भा.मा. ब्यूरो ने इस उत्पाद के परीक्षण के मापदंडों हेतु मानक (मुद्रण हेतु) तैयार किया है जो एजोस्पिरिलम जीवाणुओं की जीवित संख्या प्रति ग्राम पी.एच. मान, नमी व पैकिंग आदि संबंधी जानकारी देता है। 500 ग्राम प्रति हेक्टेयर भूमि के लिए बीजों को उपचारित करने के लिए पर्याप्त है। यह 20-40 किलो नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर प्रदान करता है। इसकी प्रयोग विधि व लाभ एजोटोबैक्टर के समान ही हैं।

5. फॉस्फोरस घुलनशील जीवाणु (पी.एस.एम) फॉस्फोटिका : नाइट्रोजन के बाद फॉस्फोरस दूसरा महत्वपूर्ण पोषक तत्व है जिसकी पौधों को अत्यंत आवश्यकता होती है। फॉस्फोरस भूमि में अघुलनशील अवस्था में पडा रहता है जिसको ये सूक्ष्म जीवाणु अपनी दैहिक व जैविक क्रियाओं से कार्बनिक व अकार्बनिक अम्लों का विसर्जन कर पुनः घुलनशील अवस्था में बदल कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। इसका प्रयोग सभी प्रकार की फसलों में किया जा सकता है। भा.मा. ब्यूरो ने इस उत्पाद पर मानक तैयार किया है जिसका कार्य प्रगति पर है जो कि गुणता व परीक्षण संबंधी ज्ञान से परिपूर्ण है। यह मानक फॉस्फेट को घुलनशील बनाने वाले सक्रिय जीवाणुओं की प्रतिग्राम संख्या, पी.एच. मान, जीवाणु का जीवन काल और उत्पादन तिथि आदि की जानकारी देता है। इस जैव उर्वरक से बीज, पौद, जड़, कंद तथा मृदा उपचार किया जाता है। बीज उपचार हेतु 200 ग्राम के एक पैकेट को 300-500 मि.लि. स्वच्छ पानी में घोलकर छायादार स्थान में 10-12 किलो ग्राम बीजों पर फैलाकर व हाथ से भली भांति मिलाकर बीजों पर परत चढ़ाते हैं और इस के बाद बोआई की जाती है। पौद व कंद के उपचार हेतु 1-2 कि.ग्रा. का 10-20 लिटर पानी में घोल बनाकर तथा 10 क्विंटल कंद का उपचार कर बोआई व रोपाई की जाती है। जमीन में पहली सिंचाई से पूर्व, 2-3 कि.ग्रा. जैव उर्वरक 40-50 कि.ग्रा. कंपोस्ट खाद व भुरकी मिट्टी में मिश्रण बनाकर छिड़क देते हैं।

उपयोगिता : इसके प्रयोग से 20-30 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर फॉस्फोरस की बचत होती है। यह वृद्धि कारक हॉरमोन विटामिनों, ऑक्सीजन के विसर्जन द्वारा बीजों के शीघ्र अंकुरण व जड़ों के विकास में सहायक होता है। इसके प्रयोग से फसलोत्पादन में 10-20 प्रतिशत की वृद्धि होती है तथा 20 प्रतिशत से 30 प्रतिशत रासायनिक खादों की बचत की जाती है।

15

कद्दू वर्गीय सब्जियों की वैज्ञानिक खेती

डा. बृजगोपाल छीपा

कद्दू वर्गीय सब्जियां, कुकुरविटेसी कुल के अंतर्गत आती हैं। सब्जियों में कद्दू वर्गीय सब्जियां अपना विशेष स्थान रखती हैं। इनकी उपलब्धता वर्ष में लगभग 9-10 महीने रहती है। आर्थिक दृष्टिकोण से इनकी महता अधिक है। इनका उपयोग कच्चा सलाद (खीरा, ककड़ी), पका कर सब्जी के रूप में (लौकी, तरोई, करेला, काशीफल, परवल, कुंदरू, चिचिन्डा, कद्दू , मीठे फल के रूप में (तरबूज, खरबूज), मिठाई बनाने में (पेठा, परवल, लौकी) एवं चार बनाने में (करेला आदि) प्रयोग होता है। इस कुल की कई सब्जियों में औषधीय गुण भी पाए जाते हैं। लौकी व करेले का जूस क्रमश: मोटापे व मधुमेह दूर करने के लिए दिया जाता हैं।

मृदा एवं जलवायु संबंधी आवश्यकताएं

इन सब्जियों को सभी प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है परंतु दोमट तथा बलुई दोमट मृदा विशेष रूप से उपयुक्त पाई गई है। मृदा में जैविक पदार्थ पर्याप्त मात्रा में होने चाहिए तथा जल निकास का समुचित प्रबंध होना चाहिए। इनकी खेती नदियों के किनारे भी की जाती है। मृदा का पीएच मान 6-8 के मध्य होना चाहिए। मुख्य रूप से कद्दू वर्गीय सब्जियां गर्म जलवायु की फसलें हैं। इनमें ज्यादा ठंड व पाला सहन करने की क्षमता नहीं होती है। इनकी खेती के लिए सर्वाधिक तापमान 40 डिग्री सेल्सियस, एवं न्यूनतम 20 डिग्री सेल्सियस उचित रहता है। खीरा, लौकी तथा कद्दू के लिए उपयुक्त तापमान 20-25 डिग्री सेल्सियस है जबकि खरबूज व तरबूज के लिए 40 डिग्री सेल्सियस व इससे अधिक तापमान के साथ ही तेज धूप व शुष्क मौसम फलों में मीठास बढ़ाने में सहायक सिद्ध होते हैं। तरबूज और खरबूज में फल पकते समय वर्षा होने पर, फल स्वाद में फीके हो जाते हैं। टिण्डा, फूट, ककडी व लौकी बरसात के मौसम में भी लगाए जाते हैं।

बोआई का समय : तरबूज, खरबूज व ककडी की बोआई फरवरी-मार्च में की जाती है। वहीं तुरई, खीरा, लौकी, कद्दू, करेला तथा टिण्डे की ग्रीष्मकालीन फसल के लिए बोआई, फरवरी-मार्च में तथा वर्षाकालीन फसल के लिए बोआई जून-जूलाई में करनी चाहिए। नदी तट पर बोआई का उत्तम समय नवम्बर से फरवरी के मध्य होता है। बीज को अंकुरण के लिए उपयुक्त तापमान के लिए खेतों / क्यारियों में गोबर की खाद डालकर तापमान में वृद्धि कराते हैं तथा पाले से बचाने के लिए पौधे के चारों तरफ कूचे की दीवार बनाई जाती है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

गेबर की सड़ी खाद/वर्मी कम्पोस्ट, 20-25 टन/ हेक्टेयर खेत में बीज बोने के 3-4 सप्ताह पहले भूमि तैयार करते समय अच्छी तरह मिला देते हैं। इसके अतिरिक्त, 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा.

कद्दू वर्गीय महत्वपूर्ण सब्जियां :

तरबूज	:	*सिट्रुलस लैनेटस*	आरा तोरी	:	*लूफा एक्यूटैंगुला*
खरबूजा	:	*कुकुमिस मेलो*	चिकनी तुरई	:	*लूफा सिलिन्ड्रिका*
फूट	:	*कुकुमिस मेलो किस्म मोमोरडिका*	करेला	:	*मोमोर्डिका चरेंसिया*
ककड़ी	:	*कुकुनिस मेलो किस्म यूटिलिसिमस*	काशीफल	:	*कुकरबिटा मोस्चाटा*
टिण्डा	:	*सिट्रुलस फिस्चुलोसस*	चप्पन कद्दु	:	*कुकरबिटा पेपो*
लौकी	:	*सिट्रुलस सिसेरिया*	पेठा	:	*बेनिनकासा हिस्पिडा*
खीरा	:	*कुकुमिस सेटाइवस*			

उन्नत किस्में

तरबूज	शुगर बेबी, काशी पीतांबर आसाही यामेटो, दुर्गापुरा मीठा, दुर्गापुरा केसर, अर्का ज्योति (संकर), मधु, आर डब्ल्यु, 187-2 एन एस 295, सुरभि, खुशबु, सुगन्ध आदि।
खरबूजा	दुर्गापुरा मधु, पंजाब सुनहरी, पंजाब हाईब्रिड-1, अर्काजीत, हरा मधु, पूसा मधुरस, आरएम 43, आर एम 50, एम एच वाई 3, एम एच वाई 5, एन एल 7455 आदि।
चिकनी तुरई	पूसा चिकनी, सलेक्षन 99 आदि।
धारीदार तुरई	पूसा नसदार, सीओ-1, काशी खुशी (सतपुतिया) आदि।
खीरा	बलम खीरा, पाइनसेट, पूसा संयोग (संकर), जापानी लांग ग्रीन, स्ट्रेट एट, चाइना आदि।
करेला	कोयम्बटूर लोंग, पूसा दो मौसमी, प्रिया, अर्काहरित, पूसा विशेष, मटिको करेला, ग्रीन लोंग आदि।
टिण्डा	बीकानेरी, ग्रीन, दिल पसन्द, टिण्डा लुधियाना (एस 48), हिसार सलेक्सन 1, अर्का टिण्डा आदि।
ककड़ी	लखनऊ अगेती, अर्का शीतल, वी.आर.एस.एल.एम.-16 आदि।
लौकी	पूसा समर प्रोलोफिक लोंग, पूसा समर प्रोलोकिक राउण्ड, पूसा मंजरी, पूसा मेघदूत, पूसा नवीन, अर्का विहार, थार समृद्धि आदि।
कद्दू (काशीफल)	पूसा विश्वास, पूसा अलंकार, अर्का चंदन आदि।

फॉस्फोरस और 30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यकता पड़ती है। देशी खाद, फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन की 1/3 मात्रा अर्थात 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन बोआई के समय भूमि में मिलाएं तथा शेष नाइट्रोजन की मात्रा को दो बराबर भागों में बांट कर टोप ड्रेसिंग (खड़ी फसल में) के रूप में प्रथम बार बोआई के 25 से 30 दिन बाद व दूसरी बार फूल आने के समय देना चाहिए।

सिंचाई प्रबंधन

बीज की बोआई खेत में नमी की पर्याप्त मात्रा रहने पर ही करनी चाहिए। जिससे बीजों का अंकुरण

बीज दर व दूरी

सब्जी	बीज दर (किग्रा/ हेक्टेयर)	दूरी (कतार से कतार)
लौकी	4.5	2.5.3 x 0.75 मी.
कद्दू	4.5	3.4 x 1.25 मी.
करेला	4.5	1.25 x 0.50 मी.
तरबूज	45.5	2.5 x 1.00 मी.
खरबूज	15.2	2.0 x 0.6 मी.
तुरई	4.5	1.0 x 0.6 मी.
खीरा	2.25	1.5 x 0.5 मी.
ककडी	2.0	2.5 x 0.5 मी.
टिण्डा	4.5	2.0 x 0.75 मी.

एवं वृद्धि अच्छी हो। वर्षाकालीन फसल के लिए सिंचाई की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती। केवल लम्बे समय तक वर्षा न होने पर ही सिंचाई करनी चाहिए। औसतन गर्मी की फसल में 4-6 दिन के अन्तराल पर तथा जाड़े की फसल को 10-15 दिन पर पानी देना चाहिए। खरबूजे और तरबूजे की फसल में फलों की बढवार होने के बाद पानी देने की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

पौधों को सहारा देना

ग्रीष्मकालीन कद्दू वर्गीय सब्जियों में साधारणतः सहारा देने की आवश्यकता नहीं पड़ती लेकिन वर्षाकालीन फसल में लौकी, तुरई आदि के फलों को सड़ने से बचाने के लिए बेलों का किसी मचान या अन्य से सहारा देने पर उनकी बढ़वार और उपज पर बहुत अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

प्रमुख कीट एवं रोग तथा उनका प्रबंधन

कद्दू वर्गीय सब्जियों को कई कीट एवं रोग लगते हैं जो उन्हें बहुत क्षति पहुंचाते हैं। ऐसे ही प्रमुख कीट एंव रोगों का वर्णन निम्नलिखित है :

लाल भृंग - यह कीट लाल रंग का होता है तथा अंकुरित एवं नई पत्तियों को खा कर छलनी कर देता है। इसके प्रकोप से कई बार पूरी फसल नष्ट हो जाती है। नियंत्रण हेतु कार्बोरिल (5 प्रतिशत) चूर्ण का 20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से बुरकाव करें या कार्बोरिल (50 प्रतिशत) घुलनशील चूर्ण का दो कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें या एसीफेट (75 एसपी) आधा ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिडकें एवं 15 दिन के अंतर पर दोहराएं।

फल मक्खी - यह करेला, तुरई, टिण्डा, ककड़ी व खरबूजे आदि को अधिक क्षति पहुंचाती है। इसके प्रकोप से फल काने हो जाते हैं। मादा मुलायम फलों के छिलके के अंदर अण्डे देती है। अण्डों से अपादक निकलते हैं जो फल के गूदे को खा कर सड़ा देते हैं। फल विकृत व छोटे रह जाते हैं। नियंत्रण के लिए प्रभावित फलों को नष्ट कर देना चाहिए। पौधे के आस-पास की जमीन की खुदाई जनवरी-फरवरी में करने से मक्खी के प्यूपे ऊपर आ जाते हैं और तेज धूप से नष्ट हो जाते हैं। मेलाथियॉन 50 ईसी या डाईमिथोएट 30 ईसी, एक मि.ली. का प्रति लीटर पानी की दर से छिडकाव करें। आवश्यकतानुसार 10 से 15 दिन बाद छिड़काव को दोहराएं।

बरूथी - बरूथी पत्तियों के निचली सतह पर रह कर रस चूसती हैं। इससे पत्तियों पर प्रारम्भ में सफेद धब्बे बनते हैं जो बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं। परिणामस्वरूप पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बुरी तरह प्रभावित होती है। नियंत्रण हेतु इथियॉन 50 ईसी, 0.6 मिली लीटर प्रति लीटर पानी में घोल कर जून के द्वितीय सप्ताह में छिडकें।

चूर्णिल आसिता - यह विशेष रूप से जाड़े वाली कद्दू वर्गीय सब्जियों में लगने वाला सामान्य रोग है। प्रथम लक्षण, पत्तियों या तनों की सतह पर सफेद या धुंधले घूसर धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। कुछ दिनों बाद ये धब्बे चूर्णयुक्त हो जाते हैं। उग्र आक्रमण के कारण पौधे का असमय निष्पत्रण हो जाता है। इसके कारण फलों का आकार छोटा रह जाता है। नियंत्रण के लिए खेत को स्वच्छ रखें। रोगग्रस्त फसल के अवशेषों को इक्ट्ठा करके खेत में ही जला देना चाहिए। बोने के लिए रोग रोधी किस्मों का चयन करें। फफूंदीनाशक दवा जैसे केलिक्सीन (0.05 प्रतिशत) अर्थात 1/2 मि.ली. दवा एक लीटर पानी में घोल बना कर सात दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

म्लानि रोग एवं जड़ विगलन रोग - यह रोग आमतौर पर खीरा, खरबूज एवं लौकी में पाया जाता है। रोग ग्रसित पौधे मुरझा जाती हैं। पौधे की जड़ें

भी सड़ जाती हैं, जिसके कारण पौधा धीरे-धीरे सूख जाता है। नियंत्रण के लिए रोग ग्रसित पौधे को खेत से निकाल कर जला देना चाहिए। बीज को बाविस्टिन (2.5 ग्राम दवा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से) उपचारित करके बोना चाहिए एवं ट्राईकोडर्मा को 3-5 कि.ग्रा/है. की दर से खेत में डालें।

श्यामव्रण - इस रोग में पत्तियों पर भूरे अथवा हल्के रंग के धब्बे पाए जाते हैं तथा पत्तियां सिकुड कर सूख जाती हैं। ये धब्बे तने तथा फलों पर भी पाए जाते हैं। यह रोग खरीफ में अधिक आता है। बीजों को बाविस्टिन 2.5 ग्राम दवा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए। रोग के लक्षण शुरू होने पर बाविस्टिन 1 ग्राम प्रति लीटर पानी का घोल 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए। फसल अवशेष को जला दें।

खीरा मोजैक विषाणु रोग - यह रोग कई पत्तियों में चितकबरापन और सिकुडन के रूप में प्रकट होता है। पत्तियां छोटी एवं हरी पीली हो जाती हैं और उनकी वृद्धि रूक जाती है एवं पुष्प, गुच्छों में बदल जाती हैं। ग्रसित पौधा बौना रह जाता है। नियंत्रण के लिए रोगग्रस्त पौधों को उखाड़ कर जला देना चाहिए। खेत के आस-पास से जंगली खीरा एंव इसी कुल के अन्य खरपतवारों का उन्मूलन कर देना चाहिए। रोगवाहक कीटों से बचाव करने के लिए मेलाथियान (0.1 प्रतिशत) का घोल बना कर, 10 दिन के अंतराल में 2-3 छिड़काव करें।

16

संरक्षित सब्जी पौद उत्पादन : एक व्यवसाय

डॉ.प्रवीन कुमार सिंह

उच्च गुणवक्तायुक्त सब्जी उत्पादन या सब्जी बीज उत्पादन करने के लिए यह अति आवश्यक है कि पौधे स्वस्थ, ओजस्वी एवं रोगमुक्त हों।

सब्जी पौद बहुत रोगों मुख्यत: विषाणु-जनित रोगों के प्रति संवेदनशील होती है। क्योंकि यह पौधे नाजुक, रसभरे तथा बहुत ही कोमल होते हैं जिनमें विषाणुवाहक कीट जल्दी विषाणुओं को प्रसारित कर देते हैं। इसके अतिरिक्त उच्च गुणवत्ता युक्त सब्जियों की संकर किस्मों के बीज काफी महंगे होते हैं। अत: यह अति आवश्यक हो जाता है कि सब्जी बीज उत्पादक, सब्जी पौद को संरक्षित दशाओं में उगाए ताकि हर एक बहुमूल्य बीज से स्वस्थ, रोगरहित पौद प्राप्त हो क्योंकि वह बीज मुक्त परागित किस्मों की अपेक्षा 20-25 गुना अधिक मूल्य में प्राप्त होता है। अत: यह आवश्यक है कि सब्जी पौद उत्पादन उचित दशाओं में किया जाए।

आजकल तकनीकी प्रगति एवं कम कीमत पर उच्च गुणवक्तायुक्त रोपण सामग्री की वजह से पौद उत्पादन ने एक व्यवसाय का रूप ले लिया है। प्लास्टिक की बहुकोशीय ट्रे की उपलब्धता, जिनके हर खाने का अपना आकार होता है, तथा कृत्रिम मृदारहित माध्यम में हर पौधे की बढवार दर पर नियंत्रण रखना संभव कर दिया है। ट्रे में कोशिका (खाने) का आकार एवं पौद उगाने हेतु मृदारहित माध्यम, जड़ की बढवार तथा नियंत्रित आवश्यक पानी एवं पोषक तत्वों को उपलब्ध कराने हेतु भी उचित होता है।

सब्जी पौद को अति आधुनिक पौधशाला में उगाने के अनेक लाभ हैं : जैसे (1) पूर्णत: विषाणुमुक्त पौद तैयार करने की संभावना (2) मृदाजनित रोगों एवं सूत्रकृमि की समस्या न होना (3) बे-मौसमी पौद उत्पादन की संभावना (4) कम बीज की आवश्यकता (5) सभी कददूवर्गीय फसलों की पौद उत्पादन संभव जो कि परंपरागत ढ़ग से सम्भव नहीं (6) पौद में अच्छी जड़ बढ़वार (7) मृत्युदर कम होना (8) पौधे में रोपण झटके का नहीं लगना एवं मुख्य खेत में शीघ्र स्थापित हो जाना (9) छोटे संरक्षित क्षेत्र में अधिक पौद उत्पादन (10) आसान देखभाल एवं दूरस्थ स्थानों पर ले जाने में सुगमता अत: इसे एक छोटे व्यवसाय के रूप में अपनाया जा सकता है।

सब्जी पौद उत्पादन की आवश्यकता

सब्जी पौद उत्पादन, छोटे तथा महंगे बीजों से कम जगह में सुगम तरीके से नाजुक युवा पौधों को अच्छे ढंग से पौद उत्पादन का उपाय है। सामान्यत: सब्जी फसलों को रोपण सुविधा के हिसाब से तीन समूहों में बांटा गया है। चुकन्दर, ब्रोकोली, ब्रुसेल्स स्प्राउट, पत्ता गोभी, फूलगोभी, टमाटर तथा लेट्टूस फसलें प्रभावी तरीके से पानी को अवशोषित करती

हैं तथा रोपण के बाद आसानी से नई जड़ें बना लेती हैं। सब्जी फसलें जो सामान्यत: आसानी से रोपित हो जाती हैं, जैसे बैंगन, प्याज, शिमला मिर्च तथा सेलेरी, जो कि उस तरीके से जल अवशोषित नहीं करती जितनी आसानी से रोपित हो जाती हैं लेकिन ये फसलें सामान्यत: नई जड़ें जल्दी बनाती हैं। वे सब्जी फसलें जिनको रोपित करना कठिन है - जैसे कद्दू वर्गीय सब्जियां, स्वीटकार्न अत: इन सब्जियों में पौद उत्पादन एवं रोपण में विशेष ध्यान रखना पड़ता है।

तैयार पौद सिर्फ फसल अवधि ही कम नहीं करती बल्कि फसल की एकरूपता को भी बढ़ाती है। पौद रोपण के बाद बीच में से पौधे नहीं निकालने पड़ते तथा विषाणुरहित, ओजस्वी तथा बे-मौसम पौद उत्पादन की सम्भावनाएं भी प्रदान करता है। अत: इस तरह से सफल पौद उत्पादन हेतु संरक्षित संरचनाओं के बारे में जानकारी देना अति अवश्यक है। इसके साथ उचित प्रकार के पात्र और पौधे उगाने हेतु माध्यम, मृदारहित माध्यम में बीज बोने का तरीका, पौद को पानी व खाद की आवश्यकता, पौद दृढीकरण या कठोरन तथा पौद की मुख्य खेत में उगाने की दशा आदि के बारे में भी जानकारी अति आवश्यक है।

संरक्षित सब्जी पौद उत्पादन तकनीक बहुत ही विशेषज्ञता वाला कार्य है जिसे शहरों के आस-पास के क्षेत्रों में छोटे उद्योग के रूप में बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

संरक्षित सब्जी पौद उत्पादन ग्रामीण युवाओं एवं अन्य लोगों को रोजगार ही नहीं देता अपितु यह तकनीक विषाणुरहित, स्वस्थ, ओजस्वी, वेमौसमी पौद को भी समय पर किसानों हेतु उपलब्धता सुनिश्चित करती है।

संरक्षित सब्जी उत्पादन हेतु कुछ संसाधनों की आवश्यकता होती है जो कि निम्न प्रकार है :

1. प्लग ट्रे या प्रो ट्रे

सब्जी पौद उत्पादन विभिन्न प्रकार के पात्रों में किया जा सकता है परंतु स्टायरोफोम या प्लस्टिक ट्रे को दुनिया के विभिन्न भागों में एक अच्छे स्तर का माना गया है।

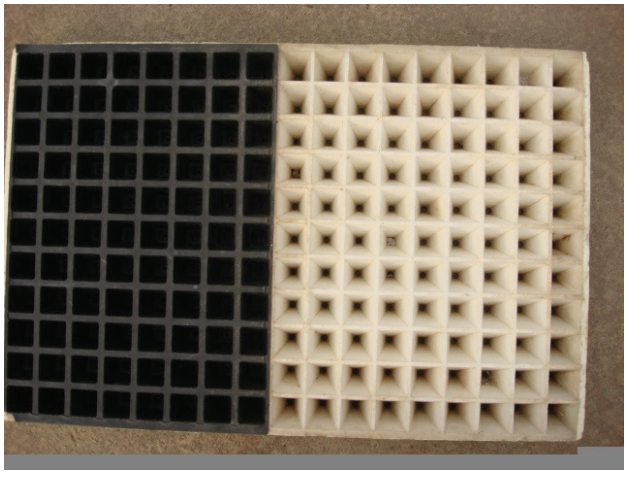

प्लग ट्रे

एक समान आकार की ट्रे जिसमें एक ही आकार प्रकार के कोष होते हैं, उन्हें स्टायरोफोम में स्थापित कर दिया जाता है। इन ट्रे में जड़ क्षेत्र में समान तापमान तथा नमी रहती है। प्रो ट्रे के कोष / सेल विभिन्न आकार प्रकार के भी हो सकते हैं जैसे पिरामिड आकार, गोला या षटकोणीय जिन्हें विभिन्न फसलों हेतु प्रयोग किया जाता है। परंतु समान्यत: इस उद्योग में एक इंच आकार वाले या दो सौ पौधे प्रति प्लास्टिक प्रो ट्रे को ही प्रयोग में लाया जाता है। प्रो ट्रे का चयन पौधों की पौधशाला में रखने की समय अवधि, पौधे उगाने में अर्थिक लाभ या क्षति आदि पर भी निर्भर करता है। सब्जी पौधे उगाने में प्रयोग की जाने वाली ट्रे में जल-निकासी, मृदारहित माध्यम को संभालने तथा रखरखाव में आसानी आदि विशेषताएं होनी चाहिए।

विभिन्न स्थानों पर सब्जी पौद उत्पादन हेतु 1.0 इंच तथा 1.5 इंच आकार की कोष वाली ट्रे प्रयोग की जाती हैं। कोष का आकार फसल के प्रकार पर निर्भर करता है। जैसे खीरा, खरबूजा, टमाटर और बैंगन आदि की पौद तैयार करने हेतु 187 कोष/छेद वाली ट्रे जिसमें कोष या छेद का आकार 1.5 इंच का होता है, सलाद, पत्तागोभी, फूलगोभी, मिर्च आदि सब्जियों की पौद तैयार करने हेतु 345 छेद वाली ट्रे, जिसमें कोष/छेद का आकार 1.0 इंच होता है, प्रयोग की जाती हैं।

2. पौधा उगाने हेतु मृदारहित माध्यम

संरक्षित वातावरण में पौद उगाने हेतु मुख्यत: मृदारहित माध्यम का प्रयोग किया जाता है जिसमें मुख्यत: तीन अवयव (घटक) होते हैं :

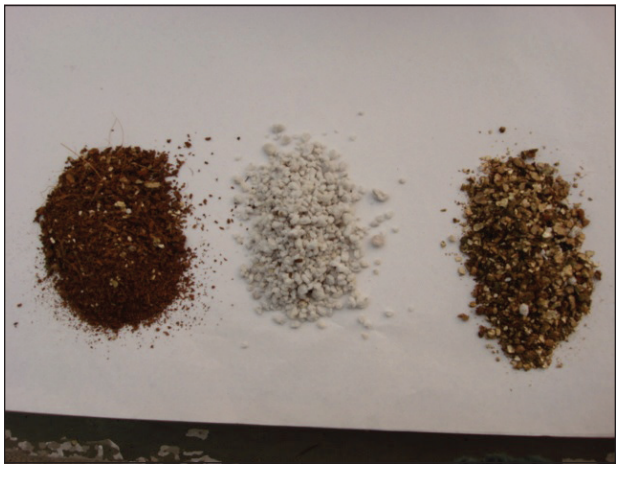

प्रवर्धन माध्यम मिश्रण

बीजों की बोआई

अ) कोको पीट

आ) वर्मीक्युलाइट

इ) परलाइट

इन तीनों का पौधशाला में पौद उत्पादन हेतु माध्यम के रूप में प्रयोग किया जाता है। इन अवयवों (घटकों) को 3:1:1 (भार अनुसार) अनुपात में मिलाकर पौद उगाने वाले बर्तनों या प्रो ट्रे में भरा जाता है। जिस माध्यम में बड़े आकार के लंबे रेशों वाले कण होते हैं, वैसा कोको पीट बेहतर हवा का संवाहन एवं जल निकासी वाला होता है। कोको पीट में पौद का बेहतर जड़ विकास होता है। इन अवयवों की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित है:

कोकोपीट : इसे नारियल के रेशे वाले कवच के चूरे से बनाते हैं। इसमें अच्छी जल निकासी तथा हवा का आसानी से आवागमन होता है। यह माध्यम पूरी तरह से रोग मुक्त होता है।

परलाइट : यह एक हल्का ज्वालामुखी से उत्पन्न चट्टानी पदार्थ है। इसे अति उच्च तापमान पर गर्म करके सफेद दानेदार बनाया जाता है। परलाइट उदासीन प्रतिक्रिया वाला होता है तथा मिश्रण में लगभग न के बराबर पोषक तत्व प्रदान करता है।

तैयार पौद

परिवहन हेतु पौद की पैकिंग

तैयार पौधशाला

पौधशाला का दृश्य

तैयार स्वस्थ पौद

वर्मीक्युलाइट : यह बहुत अधिक तापमान पर गर्म किया हुआ अभ्रक है। यह भार में बहुत हल्का होता है जिसमें मैगनीशियम एवं पोटेशियम होते हैं जो मिश्रण को शक्ति प्रदान करते हैं एवं इसकी जलधारण क्षमता को बढ़ाता है। यह भी उदासीन प्रतिक्रिया वाला होता है।

मृदारहित माध्यम के लाभ

सब्जी पौद उत्पादन में प्रयोग होने वाले मृदारहित माध्यम के निम्नलिखित लाभ हैं :

मिश्रण की एक समानता : मृदारहित माध्यम के मिश्रण की भौतिक एवं रासायनिक गुण सारे मिश्रण में एक समान होते हैं जो कि मिट्टी में नहीं होते हैं। मिश्रण की यह समरूपता पौद को समान रूप से उगने एवं बढ़ने में सहायता करती है।

संभालने में आसान : यह मिश्रण भार में हल्का और लाने ले जाने में आसान होता है। सभी अवयव मिश्रण बनाते समय एवं अन्य कार्यों के दौरान आसानी से इधर-उधर हटाए जा सकते हैं।

प्रयोग में सुगमता : ये मिश्रण बने बनाए भी बाजार में उपलब्ध हैं जिन्हें सीधे प्रयोग किया जा सकता है।

बहुउद्देश्यता : ये मिश्रण विभिन्न कार्य-विशेष हेतु भी प्रयोग किए जा सकते हैं, जैसे गार्डन मिश्रण, फूलों की क्यारियों हेतु, लॉन में प्रयोग हेतु आदि।

जीवाणु/बीजाणु मुक्त : यह मिश्रण प्राय: कीट एवं रोगों से मुक्त होता है। अत: पौद में गलन जैसे रोग कम लगते हैं।

विधि

इस प्रकार, ऐसे मिश्रणों का प्रयोग करते हुए विभिन्न प्रकार की सब्जियों की पौद तैयार की जाती है। पौद तैयार करने के लिए मिश्रण तैयार कर प्रो ट्रे में भर दिया जाता है। फिर ट्रे के प्रत्येक कोष/छेद में एक बीज बोया जाता है तथा बाद में बीज के ऊपर वर्मीक्युलाइट की एक पतली पर्त डाली जाती है और फिर फव्वारे/हजारे की मद्द से हल्का पानी देते हैं। फिर ट्रे को एक के ऊपर एक रख देते हैं। सर्दी के मौसम में प्रत्येक प्रो ट्रे को अंकुरण कमरे में रखा जा सकता है जहाँ का तापमान 25° सेल्सियस रखा जाता है ताकि बीजों का अंकुरण जल्दी व ठीक प्रकार से हो सके। अंकुरण के बाद सभी ट्रे को पॉलीहाउस या अन्य संरक्षित क्षेत्र में बने प्लेटफार्म या फर्श पर फैलाकर रखा जाता है।

अंकुरित हुए पौधों को समय-समय पर फव्वारे/हजारे की सहायता से पानी एवं खाद दिया जाता है। घुलनशील नर्सरी ग्रेड रासायनिक उर्वरक को पानी के साथ ही पौधों को देते हैं। पौधों की प्रारंभिक अवस्था में यह रासायनिक उर्वरक 70 पी.पी.ऐम. तथा बाद में 140 पी.पी.एम. प्रति सप्ताह की दर से दिया जाता है।

इस प्रकार, पौधे को तैयार होने में 22-30 दिन (मौसम के अनुसार) लगते हैं। तैयार पौद की माध्यमसहित मुख्य खेत में रोपाई की जाती है। पौद पैक करके दूरस्थ स्थानों तक भी भेजी जा सकती है।

इस प्रकार संरक्षित सब्जी पौद उत्पादन तकनीक द्वारा पौद उत्पादित कर अच्छी आय प्राप्त की जा सकती है तथा हमारे शहरी क्षेत्रों के आस-पास के बेरोजगार युवाओं को रोजगार के साथ किसानों को स्वस्थ, कीट एवं रोग मुक्त, ओजस्वी पौद प्राप्त हो सकती है।

लेखक परिचय

डॉ. राम रोशन शर्मा	प्रधान वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली - 110012
डॉ. आर.एस. सेंगर *डॉ. रेशू चौधरी*	कृषि जैव प्रोद्योगिकी विभाग, कृषि महाविद्यालय सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश
डॉ. वीरेंद्र कुमार	तकनीकी अधिकारी, सस्य विज्ञान संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली - 110012
डॉ. दिनेश मणि	प्रोफेसर, कृषि रसायन विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश
डॉ. रचना पांडे, डॉ.विवेक शाह, डॉ. प्रभुलिंगा टी., डॉ. मधु टी.एन., डॉ. पूजा वर्मा	भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराश्ट्र
डॉ. प्रेरणा नाथ और डॉ. एस.जे. काले	बागवानी फसल प्रसंस्करण प्रभाग, केंद्रीय फसलोत्तर अभियांत्रिकी एवं प्रोद्योगिकी संस्थान, अबोहर, हरियाणा
डॉ. अल्का जोशी एवं डॉ. राम रोशन शर्मा	खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली - 110012
डॉ.विजय राकेश रेड्डी, डॉ. रामकेश मीना, डॉ. डी.के. सरोलिया	केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, राजस्थान
डॉ. कल्याण बर्मन, डॉ. स्वाति शर्मा, डॉ. राम रोशन शर्मा, डॉ. विशाल नाथ और डॉ. पुष्पा कुमारी	भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, राष्ट्रीय लीची अनुसंधान संस्थान, मुसाहरी, मुजफ्फरपुर - 842002, बिहार
डॉ. हरे कृष्ण	वैज्ञानिक, केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, राजस्थान
डॉ. रणबीर सिंह राना, डॉ. रानू पठानिया, डॉ. सुदेश रादोत्रा, डॉ. वैभव कालिया एवं डॉ. शारदा सिंह	भौगोलिक सूचना अनुसंधान केंद्र, हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर, हिमाचल प्रदेश
डॉ. आर.एस. सेंगर	कृषि जैव प्रोद्योगिकी विभाग, कृषि महाविद्यालय, सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश
श्री जगनारायण	ईशान स्टुडियो, श्री विश्वनाथ मंदिर, वाराणसी, उ.प्र.
डॉ. एन.के. बोहरा	प्लॉट 389, गली नं. 10, मिल्कमैन कॉलोनी, पाल रोड, जोधपर, राजस्थान
डॉ. बृजगोपाल छीपा	सहायक प्रोफेसर अनुसंधान निदेशालय, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्याल, उदयपुर-313001, राजस्थान
डॉ. प्रवीन कुमार सिंह	प्रधान वैज्ञानिक, संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी केंद्र, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली - 110012

कृषि विज्ञान मूलभूत शब्दावली

A	
abiogenesis	अजिवात् जनन
abnormal	अपसामान्य
abomasum	चतुर्थ आमाशय, ऐबोमैसम
aborted organ	रूद्ध-वृद्धि अंग
aborted seed	रूद्ध वृद्धि बीज
abortion	गर्भपात, गर्भस्त्राव, वृद्धि विरोध
absolute weed	अवांछित अपतृण, पूर्ण खरपतवार
absorbed cation	अवशोषित धनायन
absorption	अवशोषण
Abyssinian mustard	ऐबिसिनी सरसों
acaricide	चिचड़ीनाशी
acentric	अकेंद्री
accentuate (cell)	प्रवर्धन (कोशिका)
accepted tolerance	स्वीकृत सहयता
accessory	अतिरिक्त, सहायक, गौण
acclimatization	पर्यनुकूलन
accumulation	संचय
accuracy	यथार्थता, परिशुद्धता
acervulus	एसर्वुलस, बीजाणुपात्र
acetification	ऐसीटीकरण, सिरका बनाना, ऐसीटीलन
acidification	अम्लीकरण, अम्लन
acidimeter	अम्लतामापी, एसिडीमीटर
acidity	अम्लता
acidophilic	अम्लरागी

acidulated rock phosphate	अम्लीकृत रॉक फॉस्फेट
aciduric	अम्लसह
aquifer	जलभृत
acquisition	अधिग्रहण
acre	एकड़
acreage	क्षेत्रफल, रकबा
acrocentric chromosome	उपांत बिंदु क्रोमोसोम
acropetal	अग्राभिसारी
acrosome	ऐक्रोसोम
actinomycetes	एक्टिनोमाइसिटीज
active root zone	सक्रिय मूल क्षेत्र
acute	उग्र, तीव्र
adaptability	अनुकूलनशीलता
adaptation	अनुकूलन
adhesion	आसंजन, अभिलाग
adipose	वसामय
adjustment equation	समायोजन समीकरण
adobe soil	ऐडोब मृदा
adulterant	अपमिश्रक
adventitious	अपस्थानिक
aecidiospore	इसीडियोस्पोर, इसीडियम बीजाणु
aeolian process	वातोढ़ प्रक्रिया
aeolian	वातोढ़
aerate	वातन करना
aerial	वायव, आकाशी

aerometer	ऐरोमीटर,वायुमापी, वायुघनत्वमाप
aerosol	ऐरोसोल
aestivation	1. पुष्पदलविन्यास 2. ग्रीष्मनिष्क्रियता
aetiology (etiology)	रोग हेतु विज्ञान
afforestation	वनरोपण
agitation	विलोडन, प्रक्षोभन
Agmark	ऐगमार्क
agrarian	भूमि संबंधी, कृषि संबंधी
agricultural clinic	कृषि निदानालय
agricultural labour	कृषि श्रम, खेतिहर मजदूर
agricultural marketing	कृषि विपणन
agricultural technology	कृषि प्रोद्योगिकी
agriculture	कृषि, खेतीबारी, कृषि विज्ञान
agrisilviculture	कृषि वनवर्धन
agrobiodiversity	कृषि जैविक विविधता
agrobiological defects	कृषि जैविक दोष
agrobiology	कृषि जैविकी
agroclimatic diversity	कृषि जलवायुवीय विविधता
agroclimatic zoning	कृषि जलवायुवीय जोन निर्माण
agroforestry	कृषिवानिकी
agrology	सस्य मृदा विज्ञान
agronomy	सस्य विज्ञान
agropastoral	कृषि पशुचारणिक
agroprocessing	फसल प्रसंस्करण
agrostology	घास विज्ञान
agrotype	सस्य प्ररूप
air plant	अधिपादप
Akiochi soil	ऐकिओची मृदा
albinism	वर्णकहीनता
Alfisols	एल्फिसॉल
algae	शैवाल
algal disease	शैवाल रोग
alkali water	क्षार जल
alkaline	क्षारीय

allele	विकल्पी
allelochemicals	एलीलो रसायन
allelomorph	विकल्परूपी
allelopathy	एलीलोपैथी
alley cropping	वीथी सस्यन
allocarpy	परनिषेक-फलता
allogamy	परनिषेचन
allometry	सापेक्षमिति, ऐलोमैट्री
allopolyploid	परबहुगुणित
allosynapsis (allosyndesis)	परयुग्मन, अपायुग्लन
alternate bearing	एकातंर वर्ष फलन, एकांतरित फलन
alternate land use	वैकल्पिक भूमि उपयोग
ambient	परिवेश
ameliorant	सुधारक
amitosis	असूत्रीविभाजन
amminization	ऐमीनन
ammonification	अमोनियन
ammonifier	अमोनीकारक
amorph	1. अप्रभावी रूप 2. अरूपी
amphimixis	उभयमिश्रण
amphoteric	उभयधर्मी
anabolism	उपचय
anaerobe	अवायुजीव, अनाक्सी जीव
aneuploid	असुगुणित
angle planting	कोणीय रोपण
animal husbandry	पशुपालन
animal refuse	पशु उच्छिष्ट
animate energy	सजीव ऊर्जा
anisoploid	असमगुणित
annual plant	एकवर्षीय पादप
annual	वार्षिक
anthesis	परागोद्भव, प्रफुल्लन
anthrax	ऐन्थ्रैक्स
anthropogenic factor	मानवजनिक कारक

antibiosis	प्रतिजीविता
antibiotic	प्रतिजैविक, ऐन्टीबायोटिक
antidote	प्रतिकारक
antioxidants	प्रतिऑक्सीकारक
antitoxin	प्रतिआविष
anulus	वलयिका
aphid	ऐफिड, माहू, चेपा
apical bud	शीर्ष कलिका
apical dominance	शिखाग्र प्रभाविता
apiculture (bee keeping)	मधुमक्खी पालन
apomixis	असंगजनन
apoptosis	एपोप्टोसिस
appendage	उपांग
appetizer	क्षुधावर्धक
applied	अनुप्रयुक्त
aquatic weed	जलीय खरपतवार
arboreal	वृक्षीय, वृक्षवासी
arborization	शाखायन
archaeo-botanical records	आद्य वानस्पतिक अभिलेख
area statistics	क्षेत्रांकड़
area	क्षेत्र, क्षेत्रफल
arid ecosystem	शुष्क पारितंत्र
aril	बीजचोल
aroma	सौरभ
aromatic plant	सुगंधी पादप
aromatic rice	सुगंधित चावल
arrowing	इक्षु पुष्पन
asepsis	अपूति
aseptic	अपूतित, अजर्म
asexual propagation	अलैंगिक प्रवर्धन
assay	आमाप
assets	परिसंपत्ति
assimilation	स्वांगीकरण, आत्मसात्करण
association	1. साहचर्य 2. संघ

astringent	स्तंभक, कषाय
asynapsis	असूत्रयुग्मन
atavism	पूर्वजता, ऐटाविज्म
atomizer	कणित्र
atrophy	अपुष्टि, क्षीणता
autogamy	स्वयुग्मन
autolysis	स्वलयन
autooxidation	स्वतःउपचयन, स्वतःआक्सीभवन
autopolyploid	स्वबहुगुणित
auxin	ऑक्सिन
awn (bristle)	शूक, तूड़
B	
baccilovirus	दंड विषाणु
bacillus	दंडाणु, बैसिलस
bacteria	जीवाणु, बैक्टीरिया
bacteriotoxin	जीवाणु आविष
bagasse	खोई
balance sheet	तुलन-पत्र
balanced fertilization	संतुलित उर्वरक उपयोग
bar diagram	दंड आरेख
bark	छाल
barometer	वायुदाबमापी, बैरोमीटर
barren	बंजर, अकृष्य, बांझ
base	आधार, बेस, कपांग
basin	थाला, द्रोणी
basipetal	तलाभिसारी
basisternum	बेसिस्टर्नम, मूलाधारक
bay monsoon	खाड़ी मानसून
bearing plant	फलदायी पौधा
bed	क्यारी
bedder	क्यारी - पौधा
bedding	क्यारी बनाना
beet molasses	चुकंदर शीरा
bellows	धौंकनी

belt	पट्टी, इलाका
benefit-cost analysis	लाभ-लागत विश्लेषण
biased (sampling)	अभिनत (प्रतिचयन)
biennial	द्विवर्षीय
binomial	द्विपद
bioagent	जैवकारक
bioclimate	जीव जलवायु
bioenergy	जैव ऊर्जा
bionomics	जीव पारिस्थितिकी
bio-reactor	जैव-प्रक्रियापात्र, बायो रिएक्टर
biosphere	जीव-मंडल
biotic	जीवीय
biotype	जीव प्ररुप
bisexual	द्विलिंगी
blanching	धवलन
blast	प्रध्वसं (रोग), झोंका रोग
blend	संमिश्रण
blight	अंगमारी (रोग), ब्लाइट (रोग)
blister	छाला, फफोला, उद्वर्त, ब्लिस्टर
blue revolution	नीली क्रांति
bottom heat chamber	तलीय ताप चैंबर
bottom heat technique	तलीय ताप तकनीक
bran	चोकर
branching	शाखन
branchlet	टहनी, उपशाखा
breed	नस्ल
breeding	प्रजनन
brimming	शीघ्र अंकुरण उपचार
brood	शाव, अंड, भ्रूण
budding	कलिकायन
budget	बजट
buffer	उभयप्रतिरोधी, बफर
bulb	शल्ककंद
bunt	बंट (रोग)
by-product	उपजात, उपोत्पाद

C	
cake	खली
calcarious	चूनेदार, कैल्सियमी
calcification	कैल्सीयन
calcination of phosphate	फॉस्फेट का निस्तापन
callosity	किणता, कैलसता
callus	कैलस, किण
calyx	बाह्यदलपुंज, कैलिक्स
calyx-end	बाह्यदल अंत
cambium	एधा
canker	कैंकर (जीवाणु रोग)
canning	डिब्बाबंदी
canopy	वितान
capital	पूंजी
caprification	परागण (अंजीर का)
capsule	संपुट, संपुटिका, कैप्सूल
carbonated	कार्बोनीकृत
carbonization	कार्बनन
carpel	अंडप
carpus	मणिबंध
casting	1. ढलाई (लोहे की) 2. क्षिप्ति (कीट)
catabolism	अपचय
catalysis	उत्प्रेरण
caterpillar	इल्ली,सूंडी
C-DNA library	सी डी. एन. ए. संग्रह
ceiling	सीमा
cell	कोशिका, कोष्ठिका
central leader system	केंद्रीय अग्रग प्रणाली
centric	सबिंदु, सकेंद्र
centrifugation	अपकेंद्रण
centrifuge	अपकेंद्रक
centriole	तारककेंद्र
centrogenic	केंद्रजनिक
centrogenous	केंद्रजा

cercus	लूम
cereal	धान्य
certification	प्रमाणीकरण, प्रमाणन
certified seed	प्रमाणित बीज
chaff	भूसा, कुट्टी, शल्क सहपत्र
chalaza	निभाग, कैलाजा
chemotropism	रसानुवर्तन
chiasma	किआज्मा, व्यत्यस्त
chilling hours	अतिशीतन घंटे
chilling injury	शीतज क्षति
chimera	विचित्रोतकी, काइमेरा
chloranthy	हरित दली
chlorophyll	पर्णहरित, हरितक
chlorosis	हरिमाहीनता
chorology	जीव वितरण विज्ञान
chromatid	क्रोमैटिड, अर्धगुणसूत्र
chromatin	क्रोमैटिन
chromatography	वर्णलेखन
chromatolysis	क्रोमोटिनलयन
chromocentre	परिसूत्र बिंदु
chromogenesis	वर्णजनन
chromoprotein	क्रोमोप्रोटीन, वर्णकप्रोटीन
chromosome	गुणसूत्र, क्रोमोसोम
chronic	चिरकाली, दीर्घकाली, जीर्ण, पुराना
citrange	सिट्रेंज
cladode	पर्णाभपर्व
classification	वर्गीकरण
clay	मृत्तिका, चिकनी मिट्टी
cleaning	निर्मलन, मार्जन, सफाई, शोधन
cleistogamy	अनुन्मील्य परागण
climacteric fruit	क्रांतिक श्वसनी फल
climate	जलवायु
climatology	जलवायु विज्ञान
clipper	कतरनी

clod	ढेला (मिट्टी का)
clone	क्लोन
cloud	मेघ, बादल
clump	पुंज (क्लंप, संपुंजन)
cluster	गुच्छ
coarse	स्थूल, मोटा, कच्चा, अपरिष्कृत
coat (seed)	आवरण, चर्मावरण
cocoon	कोया
coenzyme	कोएन्जाइम, सह-एन्जाइम
cohesion	संसंजन
coir	1. रेशा (जूट पटसन) 2. नारियल जटा
coleorrhiza	मूलांकुर चोल
collar	स्तंभमूलसंधि, कॉलर, ग्रीवा
colloid (soil)	कोलॉइड (मृदा)
columella	स्तंभिका, कालुमेला
column	दंड, स्तंभ, कॉलम
commensalism	सहभोजिता
commercial bank	वाणिज्यिक बैंक
commodity	जिंस, पण्य वस्तु
community	समुदाय
compaction (of soil)	संहनन, (मृदा का)
compatibility	सुसंगति, संगतता
compensation	क्षतिपूर्ति, मुआवजा
competitive interaction	स्पर्धी अन्योन्यक्रिया
complementary crop	पूरक सस्य
complex	सम्मिश्र, जटिल
component	घटक
composition	संघटन
compost	कंपोस्ट
compound interest	चक्रवृद्धि ब्याज
computation	अभिकलन
computer	अभिकलित्र, कंप्यूटर
concentration	सांद्रण, संकेद्रण
conditioner	अनुकूलक, पुनरुद्धारक

conductance	चालकता
configuration	विन्यास, संरूपण
conformity	अनुरूपता, समविन्यास, संरुपता
confounding	समाकुलन, संकरण
conjugation	संयुग्मन
connective	योजी, संयोजी
conservation	सरंक्षण
consolidation	चकबंदी
constituents	संघटक, अवयक
consumer	उपभोक्ता
consumption	उपभोग
contamination	संदूषण
contour planting	समोच्च रोपण
contour	समोच्च रेखा
contract farming	संविदा कृषि, ठेका कृषि, अनुबंधित खेती
controlled atmosphere storage	नियंत्रित वातावरणीय भंडारण
co-operative bank	सहकारी बैंक
cooperator	सहकारी संस्था सदस्य
coppice	गुल्मवन
corm	घनकंद
corolla	दलपुंज, कोरोला
cortex	वल्कुट, कोर्टेक्स
cost	लागत
cotyledon (seed)	बीजपत्र
credit society	ऋण समिति
credit	उधार, साख
creditor	ऋणदाता, लेनदार
crest	शिखा, शीर्ष, शिखर
crinkle	व्याकुंचन
crisis	संकट
criterion	कसौटी
critical	क्रांतिक
crop insurance	फसल बीमा

crop loan	फसल ऋण
crop	सस्य, फसल
cropping area	सस्यन क्षेत्र
cross-incompatible	पार-असंगत
crown (plant)	मुकुट, शिखर (पादप)
crumb	मृदुकण
crust	पपड़ी
cryptogam	क्रिप्टोगैम, अपुष्पीपादप
cull (fruits)	छांटन (फल)
culm	कल्म
cultivar	कृष्य किस्म
cultivation	कर्षण, कृषि, खेती
cultivator	1. किसान 2. कल्टीवेटर (यंत्र)
culture	1. संवर्ध 2. संवर्धन 3. पालन
curing	1. संसाधन 2. तैयार करना
curling	कुंतलन, कुंचन
currency	मुद्रा
cuticle	उपत्वचा, क्यूटिकल
cutting	1. कलम 2. कटाई, काटना 3. कटाग्र, कटावा
cyst	1. कृमि कोष, सिस्ट, पुटी 2. विकृत गुल्म, रसौली
cytochrome	साइटोक्रोम
cytogamy	कोशिका युग्मन
cytogenesis	कोशिका जनन
cytogenetics	कोशिका आनुवंशिकी
cytokinesis	कोशिका द्रव्य विभाजन
cytology	कोशिका विज्ञान
cytolysis	कोशिका लयन
cytomere	साइटोमियर, कोशिका खंड
cytoplasm	कोशिका द्रव्य
D	
dairy	डेरी, दुग्धशाला
dairying	डेरी उद्योग

dam	1. बांध 2. प्रजननी
day-neutral	दिवस निरपेक्ष पादप
days after flowering	पुष्पन के बाद दिन
days after full bloom	पूर्ण पुष्पन के बाद दिन
deblossoming	निष्पुष्पन
decalcification	विकैल्सीकरण
decant	निथारना, निस्तारना
decay	क्षय
deciduous	पर्णपाती
decimal	दशमिक, दशमलव
deficiency	न्यूनता
deflocculation (soil)	अनूर्णन (मृदा)
defloration	विपुष्पन
defoliation	विपत्रण
deforestation	वनोन्मूलन
degeneration	अपह्रासन
degradation	निम्नीकरण
degree days	अंश दिवस
degree	मात्रा, अंश
dehiscence	स्फुटन
dehulling	भूसी हटाना
dehusking	भूसी हटाना
dehydration	निर्जलीकरण
dehydrator	निर्जलकारित्र
demand	मांग
denaturation	विकृतीकरण, गुणनाशन
denudation	अनाच्छादन
deposit	निक्षेप (मृदा), जमा (अर्थशास्त्र)
deposition	निक्षेपण
depreciation	1. मूल्यह्रास 2. अवमूल्यन
desalinization	विलवणीकरण
desiccation	जल शुष्कन, निर्जलीकरण
design	अभिकल्पना, डिजाइन
dessicator	शुष्कित्र

destoning	गुठली निकालना
desuckering	वि-अंतःभूस्तारीकरण
desynapsis	वियुग्मन
detassel	नर मंजरी निकालना (मक्का), बल्लर निकालना
detasseling	बल्लर या फुंदन को काटना
determinant	निर्धारक
devaluation	अवमूल्यन
devegetation	वनस्पति रहित करना
deviation	विचलन
diad	द्विक
diagnosis	निदान
dichogamy	भिन्नकाल पक्वता
dichotomy	द्विभाजन
dicotyledon (seed)	द्विबीजपत्री,
die back (disease)	पश्चमारी (रोग)
diffusion	विसरण, विसार
digestibility	पाचनीयता
dihybrid	द्विसंकर
dike (dyke)	बांध, नाली, परिवाह
dilute	तनु
dioecious	एकलिंगाश्रयी, पृथक् लिंगी
diploid	द्विगुणित
diplonema	द्विसूत्र
disbudding	निष्कलिकायन, कलिका निकालना
discing	तवेदार हल चलाना, चक्काकरण
discount	छूट
disinfection	रोगाणुनाशन
dispersion	परिक्षेपण, प्रकीर्णन
dissemination	1. प्रकीर्णन 2. प्रसरण
diversification	विविधीकरण
diversified farming	विविधीकृत कृषि
DNA ladder	डी.एन.ए. सोपान
DNA receptor	डी.एन.ए. ग्राही
dockage	गोदी-भाड़ा

dominant	प्रभावी
dormancy	प्रसुप्ति
dose	मात्रा, खुराक
double sigmoid curve	दोहरा सिग्माभ वक्र
draft (draught)	झोका, खिंचाव
drain	निकास नाली, अपवाहिका
drainage	जलनिकास
draw	कर्षण
drenching	1. दवा पिलाना 2. दवाई से तर करना
dressing (seed)	प्रसाधन (बीज)
drill (n.)	बरमा, ड्रिल, वपित्र
drilling (Ag. Engg)	सूराख करना, बेधन, बरमाना
drilling (agronomy)	बैधना, ड्रिल से बोना, ड्रिल से डालना
drip irrigation	बूंद-बूंद सिंचाई
dryland farming	शुष्क खेती
dust	धूल, बुकनी
duster	धूलित्र, प्रकीर्णक
dusting	बुरकना
dwarf	बौना, वामन
dwarf pyramid	वामन पिरामिड
dwarfing	वामिनीभवन
E	
ecology	पारिस्थितिकी
econometrics	अर्थमिति
economic efficiency	आर्थिक दक्षता
ecotype	पारिस्थितिक प्ररूप
ectotrophic	बहिःस्तरपोषित
edaphic	मृदीय
edaphology	मृदा विज्ञान
edging	मेड़बंधी, किनारा बनाना, किनारा बंदी
edible part	खाद्य अंश
elasticity of demand	मांग की लोच

elasticity of production	उत्पादन लोच
electrolysis	विद्युत्-अपघटन
electrophoresis	वैद्युतकण-संचलन
eluviation	अवक्षालन
emasculator	1. विपुंसीकारित्र, बंधकारित्र 2. विपुंसीकार, बंध्यकार
embanking	मेड़ बंदी,डौलबंदी
embryo	भ्रूण
embryology	भ्रूणविज्ञान, भ्रौणिकी
emergence	निकलना, निर्गमन
emulsifier	पायसीकारक
endogenous	अंतर्जात
endomitosis	अंतःसूत्री विभाजन
endoparasite	अंतःपरजीवी
endosperm	भ्रूणपोष
enterprise	उद्यम
entomology	कीटविज्ञान
environment	पर्यावरण
enzyme	प्रकिण्व, एन्जाइम
epicotyl grafting	दलपुंज कलमबंदी
epiphyte	अधिपादप
equity	समानधारिता
eradication	उन्मूलन
essential nutrients	आवश्यक पोषक तत्व
estimation	परिमापन, कूतना, आकलन
etiolation	पांडुरता
eugenic	सुजननिक
evaluation	मूल्यांकन
evaporimeter	वाष्पनमापी
evapo-transpiration	वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन
evergreen revolution	सदाहरित क्रांति
evergreen	सदाहरित, सदापर्णी
evolution	विकास
excise	उच्छेद करना
exhaustion (fertility)	परिक्षय (उर्वरता)

exploitation	शोषण
exploration	खोज, अन्वेषण
extrusion	बहिर्वेधन, उत्सारण
eye (sugarcane / potato)	आंख
F	
factor	कारक, घटक, उपादान, साधन
factor productivity	कारक उत्पादकता
factorage	आढ़तिये का बट्टा
factorial block design	क्रमगुणित ब्लॉक डिजाइन
facultative	विकल्पी
fallow	पड़ती, पलिहर
family	कुल
farm appraisal	प्रक्षेत्र मूल्यांकन
farm budgeting	प्रक्षेत्र का बजट बनाना
farm business	कृषि व्यवसाय
farm planning	प्रक्षेत्र नियोजन
farmer	किसान, कृषक
farming	कृषि, खेती
fasciation	संघट्टन
fecundation	बहुप्रजनन
fermentation	किण्वन
fertility	उर्वरता
fertilizer use efficiency	उर्वरक उपयोग दक्षता
fertilizer	उर्वरक
fibrous	रेशेदार
field capacity	मृदा जलधारिता
field demonstration	प्रक्षेत्र प्रदर्शन
field	खेत, क्षेत्र, स्थान
fixation	स्थिरीकरण, यौगिकीकरण, निर्धारण
flooding	आप्लावन, अधिसिंचन
flow diagram	प्रवाह आरेख
food value	खाद्य मान
forage (fodder)	चारा
forecasting	पूर्वानुमान
forest	वन
forestation	वनरोपण
frond	ताड़पर्ण, प्रपर्ण
frost resistant	तुषार रोधी
frost	पाला, तुषार
frozen (fruit & vegetable)	हिमशीतित, हिमीकृत
fructification	फलन
fruit drop	फल पातन,फल का झड़ना
fruit-set (fruit setting)	फल बनना
fumigation	धूमन, धूम देना
fungicide	कवकनाशी
fungistatic	कवकरोधी
fungus	कवक
furrow	खूड़, सीता
fusion	संलयन, संगलन
fuzz	रूंआ
fuzzy	रोएंदार
G	
gall (hort)	वृक्षव्रण, पिटिका
gamete	युग्मक, गैमीट
garden	उद्यान, बाग
gauge (water)	पनसाल, जलमापी
gene bank	जीन संग्रह
gene tagging	जीन टैगन
genealogy	वंशावली विज्ञान
genetic map	जीन मानचित्र
genetics	आनुवंशिकी
genome	जीनोम, संजीन
genomic library	संजीनी संग्रह
genomics	जीनोमिक्स
genotype	जीनी संरचना, जीन प्ररूप
genus	जीनस, वंश

germ	रोगाणु, जर्म
germicide	रोगाणुनाशी
germination	अंकुरण
germplasm	जननद्रव्य, जर्मप्लाज्म
gibberellic acid	जिबरेलिक अम्ल
ginning	ओटना
glume	तुष
glutinous	लसदार, ग्लूटिनी
glycolysis	ग्लाइकोलिसिस
gneiss	नाइस
golden revolution	स्वर्णिम क्रांति
grading	श्रेणीकरण, वर्गीकरण, स्तरीकरण
grafted plant	कलमबंद पादप, कलमी पौधा
graft-incompatible	कलम असंगत
granna	ग्रैना
granulation	कणिकायन
green manure	हरी खाद
green revolution	हरित क्रांति
growth and development	वृद्धि और परिवर्धन
gummosis	गोंद रोग,गोंदार्ति
gynodioecious	भिन्नस्थ - उभयस्त्रीलिंगी
H	
habit	प्रकृति, स्वभाव, रूपगुण, स्वरूप
hail	ओला, करकापात, करका
hairyvetch	रोमिलवैच
halophyte	लवणमृदोद्भिद्
harrow	हैरो
harvest index	तुड़ाई सूचकांक, कटाई सूचकांक
harvest	कटाई, कटी फसल, तैयार फसल, उपज
harvesting	तोड़ना, कटाई, तुड़ाई
hatch	अंडे से निकलना, अंडा सेना
hay	सूखी घास
haylage	सूखा चारा

haystack	गंजी
haze	धुंध
hazy	धुंधता
head (agro)	बाली, सिट्टा, मुंडक, शीर्ष, सिर
head (of channel)	सिरा (नालीका)
heading back	शीर्ष छंटाई
hedge	बाड़
hedging	अधिरक्षण
helix	कुंडलिनी
hematite	हेमैटाइट
herb	शाक, बूटी
herbarium	वनस्पति संग्रह, वनस्पति संग्रहालय
herbicide	शाकनाशी
heredity	आनुवंशिकता
heretability	वंशागतित्व
hermaphrodite	उभयलिंगी
heterochromatic	विषमवर्णी
heterofertilization	विषम-निषेचन
heterosis	संकरओज, हेटेरोसिस
heterosome	लिंगक्रोमोसोम
heterotroph	परपोषित
hexaploid	षड्गुणित
hibernate	शीत निष्क्रियता
high density planting	उच्च सघनता रोपण
hill (rice)	पिंडलक, हिल (धान)
histogram	आयतचित्र
hitech horticulture	उच्च तकनीकी औद्यानिकी
hive	करंड, छत्ता
hoeing	गुड़ाई, गोड़ना
holding	जोत
home farm	निजी फार्म
homeostasis	समस्थिति
homestead	वासभूमि
homogeneity	समांगता

homogenous	सजातीय, समांगी
homologus	समधर्मी
homozygote	समयुग्मज
hopper	खुरलिका, खाद्यधानी, हापर
horizon	संस्तर, क्षितिज
horticultural crops	औद्यानिक फसलें
horticulture	उद्यान विज्ञान, बागवानी, उद्यान कृषि, औद्यानिकी
horti-silvi pastoral farming	उद्यान वानिक पशुपाल्य खेती
host	परपोषी
hot water treatment	तप्त जलोपचार
hull	हल
humidity	आर्द्रता
humus	हयूमस
husk	भूसी
husker	छिलका मशीन
husking	छिलका उतारना
hybrid	संकर
hybridization	संकरण
hydration	जलयोजन, जलीयन
hydrology	जल विज्ञान
hydrolysis	जल अपघटन
hydrometer	द्रवघनत्व मापी, हाइड्रोमीटर
hydrophilous	जल परागित
hydroponics	जल संवर्धन
hydrosphere	जल मंडल
hygroscopicity	आर्द्रता-ग्राहयता
hyperparasite	परात्पराजीवी
hyperplasia	अतिवृद्धि
hypha	कवक तंतु, हाइफा
hypocotyl	बीजपत्राधार
hypothesis	परिकल्पना
hysteresis (water)	शैथिल्य (जल)

I	
in situ grafting	स्वः स्थाने कलम-बंधन
in vitro	पात्रे
in vivo	जीवे
indiscriminate	अविवेकपूर्ण
insect pest	कीट पीड़क
insect	कीट
insectary	कीटालय
insecticide	कीटनाशी
insectivorous	कीटाहारी
insolation	सूर्यतापन, आतपन
insoluble	अविलेय
instar (insect)	इन्स्टार (कीट), अंतरानिर्मोकीय अवस्था
insulator	रोधी
integrated disease management	समेकित रोग प्रबंधन
integrated nutrient management	समेकित पोषक तत्व प्रबंधन
integrated pest management	समेकित पीड़क प्रबंधन
intensification	सघनता, गहनता
intensive	गहन, सघन
intercrop	बीच की फसल, अंतराफसल
intercultivation (interculture)	अंतः सस्य कर्षण, निराई, गुड़ाई
interest	ब्याज
internode	पर्व, पोरी
interphase (cell division)	अंतरा प्रावस्था (कोशिका विभाजन)
interpolation	अंतर्वेशन
inter-sterile	अंतर्बंध्य
inventory	विवरण, सूची
inversion	प्रतिलोमीकरण
involucre	चक्र, सहपत्र
ion	आयन
irradiation	किरणन
irrigation	सिंचाई

iso alleles	समविकल्पी
iso product curve	समोत्पाद वक्र
isobar	समदाब रेखा
isogamy	समयुग्मन
isolation distance	पृथक्करण दूरी
isoploid	समगुणित
isoquant	समोत्पाद
isotope	आइसोटोप
J	
jaggery	जैगरी, खांडसारी
Japonica rice	जैपोनिका धान
Jassid	जैसिड
Javanica rice	जावाई धान (चावल)
jelling	जैली बनाना
jhum cultivation	झूम कृषि
jumping gene	झंपक जीन
junk DNA	अनुपयोगी डी.एन.ए.
juvenile phase	वयस्क पूर्व प्रावस्था
K	
kaolin	केओलिन
kaolinite	केओलिन मिट्टी, खडिया मिट्टी
karyenchyma	केंद्रककाइमा
karyodesma	केंद्रकबंध
karyogamy	केंद्रक संलयन
karyogram (idiogram)	गुणसूत्र आरेख
karyokinesis	सूत्री विभाजन
karyology	केंद्रक विज्ञान
karyolysis	केंद्रकलयन
karyon	केंद्रक
karyotype	1. केंद्रक प्ररूप 2. गुणसूत्र प्ररूप
kelp (algae)	कैल्प
kelvin cycle	केल्विन चक्र
keratin	किरेटिन

kernel	गिरी, दाना
khaira disease	खैरा रोग
kharif	खरीफ
kidding	बकरी का ब्याना
kinetochore	काइनेटोकोर
kitchen garden	शाक-वाटिका, गृहवाटिका
kleinfilter syndrome	क्लाइनफिल्टर संलक्षण
klenow fragment	क्लिनो खंड
knotching	खांच लगाना
Koch's postulate	कोच का अभिगृहित
Koppen's classification (climate)	कोपन का वर्गीकरण (जलवायु)
krebs cycle	क्रेब का चक्र
kurtosis	करटोसिस, ककुदता
KVK (krishi vigyan kendra)	कृषि विज्ञान केंद्र
L	
L.D. 50 (lethal dose 50)	घातकमात्रा 50
lab to land	प्रयोगशाला से खेत तक
labile	अस्थिर
labour	श्रम, मजदूर, श्रमिक
lac operon model	लैक प्रचालक प्रतिदर्श
lactation	दुग्ध स्त्रवण
lactogenic hormone (prolactin)	दुग्धजनक हॉर्मोन (प्रोलैक्टिन)
lactose	लैक्टोस
lagging strand	पश्च रज्जुक
lambda cloning vector	लैम्डा क्लोनन संवाहक
laminar air flow	पटलीय वायु प्रवाह
lamp brush chromosome	लैंपब्रुश गुणसूत्र
land	भूमि, जमीन, स्थल, प्रदेश
land capability classification	भूमि समर्थता वर्गीकरण
land capability map	भूमि समर्थता मानचित्र
land degradation	भूमि निम्नीकरण

land equivalent ratio	भूमि तुल्यांक अनुपात
land levelling	भूमि समतलीकरण
land reclamation	भूमि सुधार
land suitability	भूमि उपयुक्तता
land use pattern	भूमि उपयोग पद्धति
landscaping	भूदृश्यकला
langerhans cells	लैंगरहैंस कोशिकाएं
lapse rate	ह्रासदर
larva	लार्वा, डिंभक
latency	प्रसुप्तता
latent infection	प्रसुप्त संक्रमण
latent	गुप्त
lateral	पार्श्व, पार्श्विक, पार्श्वीय
laterite soils	लैटराइट मृदा
latex	लेटेक्स, असंस्कृत रबड़
lathyrism	लैथिरस रोग, लैथिरसता
Latin Square Design (LSD)	लातीनी वर्ग अभिकल्पना
lattice	जालक
law of comparative advantage	तुलनात्मक लाभ नियम
law of constant returns	स्थिर प्रतिफल का नियम
law of diminishing returns	ह्रासमान प्रतिफल का नियम
law of increasing returns	वर्धमान प्रतिफल का नियम
law of limiting factors	सीमित कारकों का नियम
law of minimum	न्यूनता का नियम
law of substitution	प्रतिस्थापन का नियम
law of variable proportions	परिवर्ती अनुपात नियम
layer	1. दाब 2. परत 3. अंडे देने वाली मुर्गी
layout	अभिन्यास
leachate	निक्षालित तत्व
leaching efficiency	निक्षालन क्षमता
leaching requirement	निक्षालन मांग
leading strand	अग्रग रज्जुक

leaf area duration	पर्ण क्षेत्र अवधि
leaf area index	पर्णक्षेत्र सूचकांक
leaf area ratio	पर्ण क्षेत्र अनुपात
leaf miner	पर्ण सुरंगक
leaf testing	पर्ण परीक्षण
leaf	पर्ण, पत्ती, पत्र, पत्ता
leaflet (ag. Ext.)	समाचार पत्रक
lease	पट्टा
legume	शिंब, फली
LEISA - (Low External Input Sustainable Agriculture)	निम्न ऊर्जा लागत संधारणीय कृषि
lenticel	वातरंध्र
lento capillary point	लेन्टो केशिका बिंदु
leptonema	तनुसूत्र, लेप्टोनीमा
leptospirosis	लेप्टोस्पाइरता
lero-morphic	शुष्करोधक आकारिकी
lesion	विक्षति
lethal mutation	घातक उत्परिवर्तन
leucoplast	अवर्णीलवक
level terrace	समतल वेदिका
leveler (leveller)	करहा, समतलक, पाटा
levelling (of land)	समतलन (भूमिका)
ley farming	ले कृषि
Liebig's law of minimum	लीबिग का न्यूनता नियम
ligation	बंधन
light compensation point	प्रकाश समायोजन बिंदु
light saturation intensity	प्रकाश संतृप्त सघनता
light transmission ratio	प्रकाश संचरण अनुपात
light trap	प्रकाश पाश
liming	चूना मिलाना
limitation	सीमा, सीमा बंधन
limiting factor	सीमाकारी कारक
limonite	लाइमोनाइट

line	रेखा, वंशक्रम
linear response	रैखिक अनुक्रिया
linkage group	सहलग्नी समूह
linkage	सहलग्नता
linker	योजक
lint index	रुई सूचकांक
linters	रोम
lipid	वसा, लिपिड
lipolysis	वसा-अपघटन
liquidation	परिसमापन
lister	1. मेंडकारी 2. लिस्टर
listing	मेंड़ बनाना
lithosphere	स्थल मंडल
litter	1. बिछाली 2. संशाव
live mulches	सजीव पलवार
liverwort	लिवरवर्ट
livestock	पशुधन
local control	स्थानीय नियंत्रण
locus	संस्थिति, निधान, विस्थल
locust	टिड्डी
lodging (crop lodging)	अवशयन, गिरना (फसल का गिरना)
lodicule	लॉडिक्यूल
loess	लोएस
logarithmic transformation	लघुगणकीय रूपांतरण
long - day plant	दीर्घ प्रदीप्तकाली पादप
long wave radiation	दीर्घ तरंगीय विकिरण
loop	पाश
lopping	कर्तन
lumber	कटि
lux	लक्स
luxury consumption (nutrient)	विलासिता उपयोग (पोषक तत्व)
luxury genes	विलासी जीन
lycopene	लाइकोपीन
lymph	लसीका
lysimeter	लाइसीमीटर, लिसजलमापी
lysis of cell	कोशिकालयन
lysogeny	लयजनन
lysosome	लयनकाय, लाइसोसोम
lysozyme	लाइसोजाइम
M	
macro evolution	गुरू विकास
macroclimate	विस्तृतक्षेत्री जलवायु
macromolecule	बृहदणु
macromutation	गुरू उत्परिवर्तन
macronutrient	प्रमुख पोषक तत्व
macropores	दीर्घ छिद्र
maggot	मैगट
magma	मैग्मा
magnesia	मैग्नीशिया
magnesium	मैग्नीशियम
magnetic stirrer	चुंबकीय विलोडक
magnitude	परिमाण
mahua cake	महुए की खली
maintainer line	अनुरक्षक पंक्ति
maintenance (Ag. Engg)	अनुरक्षण, संभाल, देखभाल
maize sheller	मक्का के दाने निकालने वाली मशीन
male sterile	नरबंध्य
malformation	कुरूपता, कुरचना
malignancy	दुर्दमता
malnutrition	कुपोषण
malpractice	कुरीति
malting	माल्टन
manger	नांद
mangroves	मैंग्रोव, गरान
manometer	मैनोमीटर, दाबांतरमापी
mantissa (of logarithm)	अपूर्णांश (लघुगणक का)

manure	खाद
manuring	खाद देना, खाद डालना
marginal cost	सीमांत लागत
marginal land	उपांत भूमि
marginal product	सीमांत उत्पाद
marginal return	सीमांत आय
marginal	सीमांत, उपांत
marine	समुद्री
marker (genetic)	चिह्नक (आनुवंशिक)
market	बाजार, मंडी
marketable surplus	विपणन-योग्य अधिशेष
marketable	पण्य, विक्रेय, विपणन-योग्य
marketed surplus	विपणित अधिशेष
marketing	विपणन
marsh	कच्छ
mass flow	द्रव्यमान बहाव
mass selection	महा चयन, व्यापक चयन, समूह चयन
mass-spectrometer	द्रव्यमान स्पेक्ट्रोमीटर
mast	दंड़, मस्तूल
maternal inheritance	मातृक वंशागति
mating	मिलन, संगम
matric potential	मैट्रिक विभव
maturation	तैयार होना, परिपक्वन
maturity (crop)	परिपक्वता (फसल)
maximum available water	अधिकतम उपलब्ध जल
maximum cropping	अधिकतम सस्यन
maximum residue limit	अधिकतम अवशेष सीमा
maximum sustainable yield	अधिकतम संधारणीय उपज
maximum thermometer	अधिकतम तापमापी
maximum water holding capacity	अधिकतम जलधारण क्षमता
meadow orcharding	शाद्वल बागवानी
mealy	चूर्णी

mean deviation	माध्य विचलन
mean life (nuclear)	माध्य जीवन (नाभिकीय)
mean sea level	माध्य समुद्र तल
mean square	माध्य वर्ग
measure	माप, माप करना
measurement	मापन
mechanical analysis (soil)	प्रमापी विश्लेषण (मृदा)
mechanical impedance	यांत्रिक प्रतिबाधा
mechanical	यांत्रिक
mechanized farming	यांत्रिक कृषि
median (stat.)	मध्य, मध्यस्थ, मध्यिका
median	मध्यिका
medicinal plant	औषधीय पादप
mediterranean climate	भूमध्यसागरीय जलवायु
megagametogenesis	गुरुयुग्मकजनन
megasporangia	गुरुबीजाणुधानी
megaspore (macrospore)	गुरुबीजाणु
megasporogenesis	गुरुबीजाणुजनन
meiosis	अर्धसूत्रीवि भाजन, अर्धसूत्रण
mellow soil	नरम मृदा
melting of DNA	डी.एन.ए विरज्जुकन
membrane filter	झिल्ली निस्यंदक
mendelian inheritance	मेन्डेलीय वंशागति
mendelism	मेन्डलवाद
mendel's law of inheritance	मैंडल के वंशागति नियम
merchandise	पण्यमाल, विक्रयमाल
mercury	पारा, पारद
meristem	विभज्योतक
mesoclimate	मध्य जलवायु
mesoderm	मध्यचर्म, मध्यजनस्तर
mesophyll	पर्ण मध्योतक
mesophyte	समोद्भिद
meso-pores	मध्य छिद्र

mesosphere	मध्य मंडल
messenger RNA (m-RNA)	दूत आर.एन.ए. (एम.-आर. एन.ए)
metabolism	उपापचय
metabolites	उपापचयज
metal dam	धातु बांध
metamorphic rocks	कायांतरित शैल
metamorphosis	कायांतरण
metaphase	मध्यावस्था
metastrus	अनुमदकाल
metaxenia	परागानुप्रभाव, मैटाजीनिया
meteorology	मौसम विज्ञान
methaemoglobinaemia	मेटहीमोग्लोबिनिमिया
method demonstration	विधि प्रदर्शन
mica	अभ्रक
micro basin	लघु द्रोणी
micro fauna	सूक्ष्म प्राणीजात
microbe	सूक्ष्मजीव
microbial biomass carbon	सूक्ष्मजीवी जैवभार कार्बन
microbial degradation	सूक्ष्मजीवी निम्नीकरण
microbial insecticide	सूक्ष्मजीवी कीटनाशी
microbiology	सूक्ष्मजीव विज्ञान
microbiotic	लघुजीवी
microclimate	सूक्ष्म जलवायु
microenvironment	सूक्ष्म पर्यावरण
microflora	सूक्ष्म वनस्पतिजात
microgametogenesis	लघुयुग्मकजनन
microirrigation	लघु सिंचाई
micrometeorology	सूक्ष्म मौसमविज्ञान
micronutrient	सूक्ष्म पोषक तत्व
microplot	लघु क्यारी
micropore	सूक्ष्मरंध्र
micropyle	बीजांड द्वार
microscopy	सूक्ष्मदर्शिकी
microsporangium	सूक्ष्मबीजाणुधानी

microspore culture	सूक्ष्मबीजाणु संवर्धन
microspore mother cell	सूक्ष्मबीजाणु मातृ कोशिका
microspore	लघुबीजाणु, माइक्रोस्पोर
microtome	सूक्ष्मकर्तक, माइक्रोटोम
microtopography	सूक्ष्म स्थलाकृति
mid-season correction	मध्य-ऋतु सुधार
migration	प्रवास, प्रवसन
milk grain stage	दाने की दुग्धावस्था
millipede	मिलीपीड
millets	मिलेट (ज्वार, बाजरा, आदि)
milling recovery	पेषण प्राप्ति, पेरना प्राप्ति
milling	पेरना, पेषण, दलना, कूटना, पीसना
mineral nutrition	खनिज पोषण
mineral soil	खनिज मृदा
mineralisation	खनिजीकरण, खनिजीभवन
mineral	खनिज
minimum thermometer	न्यूनतम तापमापी
minimum tillage	न्यूनतम कर्षण
minor crops	गौण फसलें
mitotic index	समसूत्रणी सूचकांक
missense mutation	अपार्थक उत्परिवर्तन
mist irrigation	कुहासा सिंचाई
mist	कुहासा
mitochondria	माइटोकोड्रिया, सूत्रकणिका
mitosis	समसूत्रण
mitscherlich's law	मित्शेर्लिक का नियम
mixed cropping	मिश्रित सस्यन
mixed farming	मिश्रित खेती, मिश्रित कृषि
mixed fertilizer	मिश्रित उर्वरक
mixed grazing	मिश्रित चराई
mixed sward	मिश्रित स्वार्ड
model	प्रतिरूप, निदर्श
modelling	प्रतिरूपण

modified atmosphere packaging	आपरिवर्तित वातावरणीय पैकिंग
moisture availability index	नमी उपलब्धता सूचकांक
moisture characteristic curve	नमी विशिष्टता वक्र
moisture deficit index	नमी ह्रास सूचकांक
moisture equivalent	नमी तुल्यांक
moisture regime	नमी प्रवृत्ति
moisture release curve	नमी मोचन वक्र
moisture retention	जल धारण-शक्ति
moisture stress	नमी प्रतिबल
moisture tension	नमी तनाव
moisture	नमी
molar solution	ग्राम अणुक विलयन
molasses	शीरा
mole drainage	मोल अपवाह
molecular biology	अणु जैविकी
molecular breeding	आण्विक प्रजनन
molecular hybridization	आण्विक संकरण
molluscicide	मोलस्कनाशी
Monetary Advantage Index (MAI)	आर्थिक लाभ सूचकांक
monoclonal antibody	एकक्लोनी प्रतिरक्षी
monocotyledons	एकबीजपत्री
monocrop (monoculture)	एकधा सस्यन
monoecious	उभयलिंगाश्रयी
monogenesis	1. अलैंगिक 2. एकोद्भव वाद
monohybrid	एकसंकर
monozygotic	एकयुग्मनज
monsoon	मानसून
montmorillonite	मान्टमोरिल्लोनाइट
moor	मूर
mor	मोर
morgan unit	मॉर्गेन इकाई
morphogenesis	संरचना विकास

morphological adaptation	आकृतिक अनुकूलन
morphology	आकारिकी
mortgage	बंधक
mottle	चितकबरा, बहुरंगी, कर्बुरित
mottling	कर्बुरण
mould	फफूंदी
moulting	निर्मोचन
mound culture	टीला खेती
mound layering	ढेरी दाब
mower	मोवर, घासकर्तक
mowing	घास काटना
mucilage	म्यूसिलेज, श्लेष्मक
muck soil	मक मृदा
muddy	पंकसम, कीचडयुक्त
muffle	मफल
mulch farming	पलवार खेती
mulch tillage	पलवार कर्षण
mulch	मल्च, पलवार
mulching	पलवारना, मल्च बनाना
mull	अंतरीप, मल (ह्यूमस)
multi storey cropping	बहुस्तरी सस्यन
multiple correlation	बहु सहसंबंध
multiple cropping index	बहु सस्यन सूचकांक
multiple cropping	बहु सस्यन
multiple cross	बहु संकर
multiple resistance	बहु प्रतिरोध
multivariate	बहुचर
multizygotic	बहुयुग्मनज
mummification	ममीकरण
mummified fruit	ममीभूत फल
muscovite	मस्कोवाइट
mushroom	खुंबी, छत्रक
mutagen	उत्परिवर्तजन
mutant	उत्परिवर्ती

mutation	उत्परिवर्तन
mutual inhibition	पारस्परिक संदमन
mutualism	सहोपकारिता
mycelium	कवकजाल, माइसीलियम
mycology	कवक विज्ञान
mycoplasma	कवक द्रव्य
mycorrhiza	कवकमूल
N	
nanotechnology	सूक्ष्मप्रौद्योगिकी
napiform	कुंभीरूप
narcotic	स्वापक
nastic movement	अनुकुंचनीय गति
national demonstration	राष्ट्रीय प्रदर्शन
nationalization (of land)	भूमि का राष्ट्रीयकरण
natural erosion	प्राकृतिक अपरदन
natural farming	प्राकृतिक खेती
natural resources	प्राकृतिक संसाधन
natural selection	प्राकृतिक वरण
natural vegetation	प्राकृतिक वनस्पति
natural	प्राकृतिक, प्राकृत
neck (hort)	वृंत
necrosis	ऊतकक्षय
nectar	मकरंद
negative allelopathy	ऋणात्मक एलीलोपैथी
nematicide	सूत्रकृमिनाशी
nematode resistant rootstock	सूत्रकृमिरोधी मूलवृंत
nematology	सूत्रकृमिविज्ञान
neoteny	चिरडिम्भता
net assimilation rate (NAR)	नेट स्वांगीकरण दर
net gain	नेट लाभ
net income (farm income)	निवल आय (फार्म आय)
net irrigation requirement	निवल सिंचाई मांग
net productivity	निवल उत्पादकता
net return	शुद्ध प्रतिफल
netting	जाली लगाना, जाली से पकड़ना
neuron	न्यूरॉन, तंत्रिकाकोशिका
neutral soil	उदासीन मृदा
neutral	निष्प्रभावी, उदासीन
neutralism	उदासीनता
neutralization	उदासीनीकरण, निष्प्रभावीकरण
neutron moisture meter	न्यूट्रॉन नमीमापी
niche	1. निकेत 2. कर्मस्थिति, कर्मता
nicotine	निकोटिन
night soil	मल, विष्ठा
nitrate assimilation	नाइट्रेट स्वांगीकरण
nitrate reduction	नाइट्रेट अपचयन
nitrate toxicity	नाइट्रेट आविषालुता
nitre	शोरा, नाइटर
nitrification inhibitor	नाइट्रीकरण संदमक
nitrogen assimilation	नाइट्रोजन स्वांगीकरण
nitrogen cycle	नाइट्रोजन चक्र
nitrogen deficiency	नाइट्रोजन न्यूनता
nitrogen fixation	नाइट्रोजन स्थिरीकरण
nitrogenous	नाइट्रोजनी
nobilization	उत्कृष्टीकरण
noble cane	पौंडा, मोटा गन्ना
nocturnal	रात्रिचर
node	गांठ, पर्वसंधि, नोड
nodulated plant	ग्रंथिल (मूल) पादप
nodulation	ग्रंथन
nodule	ग्रंथि
nomadion	घुमंतू, चलवाही, खानाबदोश
nomenclature	नाम पद्धति
non allelic	अविकल्पी
non capillary pore	अकेशिका रंध्र

non competing crop	अप्रतिस्पर्धी सस्य
non sense mutation	निरर्थक उत्परिवर्तन
non-significant	असार्थक
non-acid forming fertilizer	अनम्लकारी उर्वरक
non-conjugation	अयुग्मन
non-descript (animal)	अज्ञातकुल (पशु)
non-essential element	अनावश्यक तत्व
non-homogenous	असमांग
non-homologus	1. असमधर्मी 2. असमजात
non-polar compound	अध्रुवीय यौगिक
non-renewable energy	अनवीकरणीय ऊर्जा
non-selective contact herbicide	अवरणात्मक स्पर्श शाकनाशी
non-selective herbicide	अवरणात्मक शाकनाशी
non-symbiotic nitrogen fixation	असहजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण
normal distribution	प्रसामान्य बंटन
normal seedlings	सामान्य पौध
normal solution	प्रसामान्य विलयन
normalising	प्रसामान्यीकरण
northern blotting	नार्दर्न शोषण
notifiable disease	सूचनीय रोग,विज्ञाप्य रोग
no-till planting	बिना जुताई के बुवाई
noxious weeds	अनिष्टकारी खरपतवार
nuclear magnetic resonance	नाभिकीय चुम्बकीय अनुनाद
nucleic acid	न्यूक्लीकअम्ल
nucleobacter	न्यूक्लियोबैक्टर
nucleolus	न्यूक्लीयोलस, केंद्रिका
nucleotide	न्यूक्लीओटाइड
nucleus	केंद्रक
null hypothesis	निराकरणीय परिकल्पना
nullisomic	शून्यसूत्री
null-mutation	शून्य उत्परिवर्तन
nurse cell	धात्री कोशिका
nurse crop	पोषक फसल, पोषक सस्य
nursery	रोपणी, नर्सरी, पौधशाला
nut	दृढ़फल, गुठली, दृढ़कण
nutrient cycling	पोषक चक्र
nutrient deficiency symptoms	पोषक न्यूनता लक्षण
nutrition	पोषण
nutritional value	पोषण मान
nutritive value index	पोषण मान सूचकांक
O	
obligate aerobes	अविकल्पी वायुजीव
obligate anaerobes	अविकल्पी अवायुजीव
obligate parasite	अविकल्पी परजीवी
obligate	अविकल्पी
off-type plants	अवांछित पौधे
oil cake	खली
Okazaki fragment	ओकाजाकी खंड
olericulture	शाकभाजी उत्पादन, शाकभाजी संवर्धन
oligogene	अल्पजीन
oligonucleotide	अल्पन्यूक्लिओटाइड
olive oil	जैतून का तेल
omega-3-fatty acid	ओमेगा-3-वसीय अम्ल
omnivorous	सर्वाहारी
oncogene	अर्बुद जीन
oncogenic virus	अर्बुदजनक विषाणु
oncology	कैंसर विज्ञान, अर्बुदविज्ञान
on-farm research	प्रक्षेत्र पर अनुसंधान
on-station research	
oocyte	अडंक
operating cost	प्रचालन लागत
operon	ओपेरॉन, प्रचालक
opportunity cropping	अवसरी सस्यन
optimum dose	इष्टतम मात्रा
optimum economic dose	इष्टतम आर्थिक मात्रा

orchard efficiency	फलोद्यान की दक्षता
organic agriculture	जैविक कृषि
organic colloids	कार्बनिक कोलॉइड्स
organic farming	जैविक खेती
organic manure	जैविक खाद
organic matter	जैविक पदार्थ, कार्बनिक पदार्थ
organic nitrogen (soil)	जैविक नाइट्रोजन (मृदा)
organic phosphorus	जैविक फॉस्फोरस
organic soil	कार्बनिक मृदा,जैविक मृदा
organic wastes	जैविक अपशिष्ट
organic	जैविक, कार्बनिक
organised marketing	संगठित विपणन
organogenesis	अंग विकास
organoleptic evaluation	इंद्रीयग्राही मूल्याकंन
ornithology	पक्षिविज्ञान
orthodox seed	सुसाध्य बीज
orthogonal polynomials	लांबिक बहुपद समीकरण
osmosis	परासरण
osmotic effect	परासरणी प्रभाव
osmotic potential	परासरणी विभव
outbreak	1. उद्भेद 2. फैलना
out breeding	बहिःप्रजनन
oven	अवन, बंद चूल्हा
over winter	शिशिर लंधन
overlapping generation	अतिव्यापी पीढ़ी
ovum	अडांणु
oxidation	ऑक्सीकरण
oxylophytes	अम्लोद्भिद्
P	
packing	पैकिंग
paddock	बाड़ा
paired row planting	युगल पंक्ति बुवाई
palatability	खाद्यता, स्वादिष्टता

panicle	1. पुष्पगुच्छ 2. यौगिक असीमाक्ष
paraboiling	अंशक्वथनन
paracentric inversion	पराकेंद्री प्रतिलोमन
parameter	प्राचल
parasite	परजीवी
parenchyma	मृदूतक
parent rock	जनक शैल, मूल शैल
parmanent drought	स्थायी अनावृष्टि, स्थायी सूखा
parthenogenesis	अनिषेकजनन
partial factor productivity	आंशिक कारक उत्पादकता
participatory rural appraisal	सहभागी ग्रामीण आकलन
particle density	कण घनत्व
passive absorption	निष्क्रिय अवशोषण
pasture	चरागाह
pasturization	पाश्चुरीकरण
PCR (polymerase chain reaction)	पी.सी.आर. (पॉलिमरेज श्रृंखला अभिक्रिया)
peasant farming	भूस्वामित्व खेती
peat (soil)	पीट (मृदा)
ped	पेड
pedicel	पुष्पवृंत, वृंत
pedigree	वंशावली
pedogenesis	मृदाजनन
pedology	मृदाविज्ञान
peel	छिलका उतारना
peeling	छीलना, विशल्कन
pelleting	टिकियाकरण
percolation	अंतःस्त्रवण
perennial	बहुवर्षीय
pericentric inversion	परिकेंद्री प्रतिलोमन
peri-urban	परिनगरीय
permeability	पारगम्यता
permeability coefficient	पारगम्यता गुणांक

permaculture	स्थायी कृषि
permanent wilting point (PWP)	स्थायी म्लानि बिंदु
permeability rate	पारगम्यता दर
permeameter	पारगम्यतामापी
persistent herbicide	दीर्घस्थायी शाकनाशी
pesticide	पीड़कनाशी
petrophyte	शैलोद्भिद्
phage	विभोजी, फाज
phased planting	समयांतराल बुवाई
phasmid	फैस्मिड, प्रणाभक
phellogen	कागजन
phenolic compounds	फिनोलिक यौगिक
phenology	रूपानुकृति विज्ञान, घटना विज्ञान
phenotype	लक्षण प्ररुप, समलक्षणी, लक्षण
pheromone	फीरोमोन
phloem	पोषवाह, फ्लोएम
phosphate fixation	फॉस्फेट स्थिरीकरण
phosphate rock	फॉस्फेट शैल
phosphate solubilization	फॉस्फेट विलयीकरण
phosphate solubilizing bacteria	फॉस्फेट विलयीकरण जीवाणु
phosphatide	फॉस्फेटाइड
phospho-gypsum	फॉस्फोरस युक्त जिप्सम
phospholipid	फॉस्फोलिपिड
phosphorylation	फॉस्फोरिलीकरण
photo spectrometer	प्रकाश वर्णक्रममापी
photoautotroph	प्रकाशस्वपोषी
photochemical reaction	प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया
photodecomposition	प्रकाशिक अपघटन
photometry	प्रकाशमिति
photomorphogenesis	प्रकाशीय संरचना विकास
photon	फोटॉन
photo-oxidation	प्रकाश आक्सीकरण

photoperiod	दीप्तिकाल,प्रकाशकाल
photoperiodism	दीप्तिकालिता
photophosphorylation	प्रकाशीय फॉस्फोरिलीकरण
photoreactivation	प्रकाश पुनः सक्रियन
photoreceptor	प्रकाशग्राही
photorespiration	प्रकाशीय श्वसन
photosynthesis	प्रकाश संश्लेषण
photosynthetic efficiency	प्रकाश संश्लेषी दक्षता
photosynthetic quotient	प्रकाश संश्लेषी गुणांक
photosynthetically active radiation	प्रकाश संश्लेषी सक्रिय विकिरण
phototropism	प्रकाशानुवर्तन
phyllody	पर्णाभता
phyllotaxy	पर्णविन्यास
physical weathering	भौतिक अपक्षय
physiological disorder	कार्यिकीय विकार
physiological drought	कार्यिकीय शुष्कता
physiological loss	कार्यिकीय भार ह्रास
physiological maturity	कार्यिकीय परिपक्वता
phytochrome	पादपवर्णक
phytoextraction	पादप निष्कर्षण
phytomass	पादप भार
phytonematode	पादप सूत्रकृमि
phytoremediation	पादप उपचार
phytosiderophore	पादप सिडरोफोर
phytotoxic	पादप आविषालु
phytotron	फाइटोट्रोन
pictograph	चित्रालेख
pie diagram	पाई आरेख
piezometer	दाबमापी
pitcher farming	घट खेती
placement (fertilizer)	अवस्थापन, निवेशन (उर्वरक)
placenta	1. बीजांड आसन (पौधों में) 2. अपरा, प्लेसेंटा
planking	सुहागा, पाटा फेरना

plant breeding	पादप प्रजनन
plant density	पादप सघनता
plant ecology	पादप पारिस्थितिकी
plant growth promoter	पादप वृद्धि कारक
plant growth regulator	पादप वृद्धि नियामक
plant introduction	पादप प्रवेशन
plant nutrients	पादप पोषक तत्व
plant nutrition	पादप पोषण
plant quarantine regulation	पादप संगरोध नियमन
plant tissue test	पादप ऊतक परीक्षण
plantation crops	रोपणी फसलें, बागानी फसलें
planter	प्लांटर, रोपण यन्त्र
planting material	रोपण सामग्री
planting ratio	रोपण अनुपात
plasma	प्रद्रव्य
plasma membrame	प्लाज्मा झिल्ली
plasmid	प्लाज्मिड़
plasmodesmata	प्रद्रव्यतंतु
plasmolysis	प्रद्रव्यलयन
plasticity	सुघट्यता, प्लास्टिकता
plasticulture	प्लास्टीकल्चर
plastid	लवक
pleiotropic gene	बहुप्रभावी जीन
plot (experimental)	प्रखंड (प्रायोगिक)
ploughing	जुताई
plough-sole placement	खूड़तली निवेशन
plough-sole	खूडतली
pluvial rice land	वर्षा-आधारित धान भूमि
pluvic	वर्षासबंधी
pneumatic sprayer	वायुचालित फुहार
pneumatophores	श्वसन मूल
podzol soil	पॉडजोल मृदा
podzolization	पॉडजोलीभवन
point mutation	बिंन्दु उत्परिवर्तन
poisson distribution	प्वासां बंटन

pollinator	परागक
pollinizer	परागद
polyembrony	बहुभ्रूणता
polymerization	बहुलकन
polymorphism	बहुरूपता
polyspermy	बहुशुक्राणुता
polytene chromosome	बहुपट्टीय गुणसूत्र
pomology	फल विज्ञान
population	समष्टि
porosity (pore-space)	सरंध्रता
post harvest	कटाई उपरांत, तुड़ाई उपरांत, सस्योत्तर
post-emergence	अंकुरण-पश्चात
post-harvest tillage	कटाई-उपरांत जुताई
potassium absorption ratio (PAR)	पोटैशियम अवशोषण अनुपात
potassium fixation	पोटैशियम स्थिरीकरण
potential acidity	संभाव्य अम्लता
potential crop yield	संभाव्य फसल उपज
potential evaporation	संभाव्य वाष्पन
potential evapo-transpiration	संभाव्य वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन
poultry farming	कुक्कुट पालन
prairie	प्रेयरी
pre-bearing period	फलनपूर्व अवधि
precipitation	अवक्षेपण, वर्षण
precision farming	परिशुद्ध कृषि
predator	परभक्षी
pre-emergence treatment	अंकुरण-पूर्व उपचार
pre-emergence	अंकुरण पूर्व
preplanting treatment (herbicides)	बुवाई-पूर्व उपचार (शाकनाशी)
precision agriculture	परिशुद्ध कृषि
pressmud	प्रैसमड (चीनी की मैली)
pressure gradient	दाब प्रवणता
price elasticity	कीमत लोच

price index	कीमत सूचकांक
primary culture	प्राथमिक संवर्ध
primary growth	प्राथमिक वृद्धि
primary tillage	प्राथमिक कर्षण
primer	प्रारंभक
priming (tobacco)	रचाना (तम्बाकू)
primordial stage	आद्य अवस्था
prion	प्रायोन
probability	प्रायिकता
probe	संपरीक्षक
problem soil	समस्याग्रस्त मृदा
processing	प्रसंस्करण
production function	उत्पादन फलन
productivity	उत्पादकता
profit	लाभ
progeny-testing	संतति परीक्षण
progressive farmer	प्रगतिशील किसान
project evaluation	परियोजना मूल्यांकन
prokaryote	प्राक्केंद्रकी
promotor	उन्नायक
prophylactic spray	रोग निरोधी छिड़काव
proprietary cultivar	स्वामित्व किस्म
protandrous	पुंपूर्वी
protein engineering	प्रोटीन इंजीनियरी
protein sequencing	प्रोटीन अनुक्रमण
protein synthesis	प्रोटीन संश्लेषण
protein	प्रोटीन
proteomics	प्रोटीन संजीनिकी
protogyny	स्त्रीपूर्वता
protoplasm	जीवद्रव्य
prototroph	प्रपोषित
prussic acid (HCN/ dhurin)	प्रूसिक अम्ल
pseudoallele	कूटविकल्पी
pseudohermaphrodite	आभासी उभयलिंगी
psychrometer	साइक्रोमीटर, आर्द्रतामापी
puddle	कादों, गाद, कीचड़
puddled soil	गादयुक्त मिट्टी
puddling	कादों करना, गाद करना
pulping	गूदा निकालना
pulse seed	दलहनी बीज
pulverization (soil)	भुरभुराकरना (मिट्टी)
pungent	तीखा
pure culture	शुद्ध संवर्ध
pure line selection	शुद्ध वंशक्रम वरण
pure line	शुद्धवंशक्रम
purgative	रेचक
purification	शोधन
purity test	शुद्धता परीक्षण
pyranometer	पाइरेनोमीटर
pyregeometer	भू-तापमापी
pyreheliometer	सौर्य विकिरणमापी
Q	
Q 10	क्यू दस
QTL (quantitative trait loci)	मात्रात्मक विशेषक विस्थल
quadrat	चतुष्कोण
quadratic response	द्विघाती अनुक्रिया
quadruple cropping	चतुः सस्यन
qualitative inheritance	गुणात्मक वंशागति
quality seed	गुणता बीज
quantitative genetics	मात्रात्मक आनुवंशिकी
quantitative inheritance	मात्रात्मक वंशागति
quantum seed	क्वांटम बीज
quarantine pest	संगरोध पीड़क
quarantine	संगरोध
quartz	स्फटिक
quick test	त्वरित परीक्षण
quiescence	प्रशांति
quiscent centre	प्रशांत केंद्र

R	
R value	आर मान
rabi (winter) crop	रबी फसल
raceme	असीमाक्ष
radiation	विकिरण
radicle	मूलांकुर
radioactivity	रेडियोधर्मिता
radiobiology	विकिरण जैविकी, विकिरण जीव विज्ञान
radioimmuno assay	विकिरण प्रतिरक्षी आमापन
radioisotope	रेडियोधर्मी समस्थानिक
rain water harvesting	वर्षा जल संग्रहण
rainbow revolution	इंद्रधनुषी क्रांति
rainfall	वर्षा
rainfed	बारानी, वर्षा आश्रित
raingauge	वर्षामापी
rainy season	वर्षा ऋतु, बरसात
raised bed	उत्थित क्यारी
ranching	रैंचन, पशु-संबंधी उद्यम
rancidity	विकृतगन्धिता, खटवास
random amplified polymorphic	यादृच्छिक प्रवर्धित बहुरूपी
random sample	यादृच्छिक नमूना
randomization	यादृच्छिकीकरण
randomized block design	यादृच्छिक ब्लॉक डिजाइन
range (statistics)	दूरी विभेदन (सांख्यिकी)
range management	चरागाह प्रबंध
rangeland	चरागाह
rapid rural appraisal (RRA)	त्वरित ग्रामीण ऑकलन
ration	राशन
ratoon cropping	पेड़ी सस्यन
ratoon	रतून, पेड़ी
reaper	फसल कटाई यंत्र, फसल कर्तक
recalcitrant seed	दुःसाध्य बीज
recession farming	प्रतिसार कृषि

recession phase	प्रतिसार प्रावस्था
recessive	अप्रभावी
recharge	पुनर्भरण, पुनःपूरण
reciprocal gene	पारस्परिक जीन
reclaimed land	उद्धारित भूमि
recombinant DNA technology	पुनर्योगज डी.एन.ए. प्रौद्योगिकी
recombination	पुनर्योजन
recon	पुनरेक, रेकॉन
reconnaissance survey	आवीक्षी सर्वेक्षण
recurrent parent	पुनरावर्ती जनक
recyclable waste	पुनःउपयोगी अविशष्ट
red algae	लाल शैवाल
red data book	लुप्तप्राय जीवों की सूची
red soils	लाल मृदा
redox potential	रेडॉक्स विभव, अपचयोपचय विभव
reduced sample	लघुकृत नमूना
reduced tillage	लघुकृत जुताई
reducing sugar	अपचायी शर्करा
reduction	1. अपचयन 2. लघुकरण
reference crop	संदर्भ फसल
reflection coefficient	परावर्तन गुणांक
reflection	परावर्तन
reflexed stamen	प्रतिवर्ती पुंकेसर
refractive index	अपवर्तन सूचकांक
refractometer	अपवर्तनमापी
regeneration	पुनर्जनन, पुनरूद्भवन
registered seed	पंजीकृत बीज
regolith	आवरण प्रस्तर
regression coefficient	समाश्रयण गुणांक
regression	समाश्रयण
regulator gene	नियामक जीन
relative crop-intensity index	सापेक्ष फसल सघनता सूचकांक
relative crowding coefficient (K)	सापेक्ष सघनता गुणांक

relative growth rate (RGR)	सापेक्ष वृद्धि दर
relative humidity (RH)	सापेक्ष आर्द्रता
relative spread index	सापेक्ष परिसर सूचकांक
relative water content	आपेक्षिक जलांश
relative weed	संबंधित खरपतवार
relative yield index	सापेक्ष उत्पादन सूचकांक
relative yield total	कुल सापेक्ष उत्पाद
relay cropping	क्रमिक सस्यन, अनुपद सस्यन
relief	उच्चावच (भूमितल)
remote sensing	सुदूर संवेदन
renewable sources of energy	नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत
renovation	जीर्णोद्धार
repellent	विकर्षक
replication fork	प्रतिकृतियन द्विशाख
replication	प्रतिकृतियन, पुनरावृत्ति
reporter gene	प्रतिवेदक जीन
residual effect of fertilizer	उर्वरक का अवशिष्ट प्रभाव
residual effect of manure	खाद का अवशिष्ट प्रभाव
residual sodium carbonate	अवशिष्ट सोडियम कार्बोनेट
residual soil fertility	अवशिष्ट मृदा उर्वरता
residue	अवशिष्ट
resilience (crop)	सहनशीलता (फसल)
resource-use indices (RUI)	संसाधन उपयोग सूचकांक
respiration quotient	श्वसन गुणांक
respiratory pigments	श्वसनी वर्णक
respiratory quotient	श्वसन घातांक
response curve	अनुक्रिया वक्र
response	अनुक्रिया
restitution nucleus	प्रत्यवस्थान केंद्रक
restorer line	प्रत्यास्थापक वंशक्रम
restriction enzyme	प्रतिबंधन एन्जाइम
restriction fragment	प्रतिबंधन खंड

result demonstration	परिणाम प्रदर्शन
retailing	फुटकर, खुदरा
retarder	मंदक
retrovirus	पश्च विषाणु,श्वेत विषाणु
retting	अपगलन, सड़ाना
revenue	राजस्व
reverse genetics	उत्क्रम आनुवंशिकी
reverse mutation	उत्क्रमित उत्परिवर्तन
rhizobacteria (PGPR)	राइजोबैक्टीरिया
rhizodeposition	मूल परिवेश निक्षेपण
rhizoid	मूलाभास
rhizome	प्रकंद
rhizosphere	मूल परिवेश
ribosome	राइबोसोम
rickettsia like organisms	रिकेट्सिया जैसे जीव
ridge former (ridger)	मेंड़बंधक, कटक बंधक
ridge planting	कटक रोपण
ridge terrace	कटक वेदिका
ridge till	मेंड़ पर जुताई
rill erosion	रिल अपरदन
risk	जोखिम
RNA ladder	आर एन ए सोपान
rock	चट्टान
rogue	अवांछित
rouging	अपावांछन
root crop	मूल फसल, जड़ वाली फसल
root exudates	मूल निःस्त्राव
root gall nematode	मूल पिटिका सूत्रकृमि
root inducing plasmid	मूल प्रेरक प्लाजमिड
root nodules	मूल ग्रंथिका
rootstock	प्रकंद, मूलवृंत
rosette disease	रोजेट रोग
rosette polyembryony	रोजेटी बहुभ्रूणता
rosette virus	रोजेट विषाणु
rotary tillage	घूर्णी जुताई

rotational grazing	क्रमिक चराई
roughage	1. मोटा चारा 2. रूक्षअंश
row crops	पंक्ति फसल, पंक्तिबद्ध फसल
row intercropping	पंक्ति अंतःफसल
RTS beverage	तत्काल सेवा पेय
runner	ऊपरी भूस्तारी
run-off farming	अपवाह खेती
run-off	अपवाह जल
regional rural bank	क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक
S	
saline alkali soil	लवणीय क्षारीय मृदा
saline soil	लवण मृदा
salinization	लवणीभवन
salivary gland chromosome	लार ग्रंथि गुणसूत्र
salt index	लवण सूचकांक
salt stress	लवण प्रतिबल
salt tolerance	लवण सहयता
salt	लवण
salt-affected soil	लवण प्रभावित मृदा
sample	प्रतिदर्श
sampling error	प्रतिचयन त्रुटि
sampling unit	प्रतिचयन मात्रक, नमूना मात्रक
sampling	प्रतिचयन
sand	बालू
sandy clay	बलुई मृत्तिका
sandy loam	बलुई दोमट
sandy soil	बलुई मिट्टी, बलुई मृदा
sap	रस
sapling	पौध
saponification value	साबुनीकरण मान
satellite DNA	अनुषंगी डी.एन.ए.
satellite weed	अनुषंगी खरपतवार
saturated vapor pressure	संतृप्त वाष्प दबाव

savanna	सवाना (घास के मैदान)
scaffold protein	आलंबी प्रोटीन
scape	स्केप, प्रवृंत
scarification	क्षतचिह्न
scion	सायन, सांकुर
sciophytes	छायाप्रिय पौधे
seasonal cycle	ऋतुनिष्ठ चक्र
seasonal drought	मौसमी सूखा, मौसमी अनावृष्टि
seasonal plant	मौसमी पादप
secondary growth	द्वितीयक वृद्धि
secondary plant nutrients	द्वितीयक पादप पोषक
secondary productivity	द्वितीयक उत्पादकता
secondary tillage	द्वितीयक भूपरिष्करण
sedge	झाड़ी
seed borne fungus	बीजोढ़ कवक
seed certification	बीज प्रमाणीकरण
seed hardening	बीज दृढीकरण
seed treatment	बीजोपचार
seed-cum-fertilizer drill	बीज एवं उर्वरक बुवाई यंत्र
seedling	पौध
seepage	अंतःस्त्रवण
segregation	विसंयोजन
selectable marker	वरणयोग्य चिह्नक
selection pressure	वरण दबाव
selective herbicide	वरणात्मक शाकनाशी
selectivity index	वरणात्मकता सूचकांक
self-fertilization	स्वःनिषेचन
self sufficiency	आत्म-निर्भरता
self-thinning capacity	स्वतःविरलन क्षमता
self-fruitful	स्वतःफलदायी
self-incompatibility	स्वःअसंगतता
selfish DNA	स्वार्थी डी.एन.ए.
semi-arid	अर्धशुष्क
sensory evaluation	संवेदी आकलन
sepal	वाह्य दल

sequential cropping	क्रमिक सस्यन
serial dilution	क्रमिक तनुता
sericulture	रेशमकीट पालन
serology	सीरम विज्ञान
serum	सीरम
sex-determination	लिंग निर्धारण
sex-linkage	लिंग सहलग्नता
sexual propagation	लैंगिक प्रवर्धन
sheet erosion	परत अपरदन
shelling	निखोलना
shelter belt	हवा के विरुद्ध रोक
short-day plant	अल्प प्रदीप्तकाली पादप
short-wave radiation	लघु - तरंगदैर्घ्य विकिरण
shuttle vector	बहुपोषी संवाहक, शटल संवाहक
sibling	सहोदर
sickle cell anemia	दात्र कोशिका अरक्ता
sigmoid curve	सिग्माभ वक्र
signal hypothesis	संकेत परिकल्पना
significance test	सार्थकता परीक्षण
silage	साइलेज (चारा)
silo	भंडारण पात्र
silt loam	तलछटी दोमट
silt	तलछट
silviculture	वनवर्धन
sink capacity	विलय क्षमता
sink	गर्त, हौदी, सिंक
sister chromatid	सहअर्धसूत्र
site-specific nutrient management	स्थान-विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन
skewed distribution	वैषम्य वितरण
skip row planting	पंक्ति अंतराल रोपण
slime mould	अवपंक फफूंदी
slow-release fertilizer	मंद निर्मुक्त उर्वरक
sludge	आपंक
slurry	कर्दम

smother crops	शमनक फसलें
social forestry	सामाजिक वानिकी
sod culture	सतृणभूमि कृषि
sod	साँड घास
sodic soil	साँड मृदा
sodium adsorption ratio (SAR)	सोडियम अधिशोषण अनुपात
sodium pump	सोडियम पंप
soft-wood grafting	मृदुकाष्ठ कलमबंदी
soil adhesion	मृदा आंसजन
soil aeration	मृदा वातन
soil aggregate	मृदा पुंज
soil alkalinity	मृदा क्षारीयता
soil amendment	भूमि शोधन,भूमि सुधारक
soil analysis	मृदा विश्लेषण
soil biodiversity	मृदा जैव विविधता
soil biology	मृदा जैविकी
soil classification	मृदा वर्गीकरण
soil colloid	मृदा कोलाइड
soil compaction	मृदा संहतीकरण
soil conditioners	मृदा अनुकूलक
soil conservation	मृदा संरक्षण
soil crust	मृदा पपड़ी
soil degradation	मृदा निम्नीकरण
soil erodibility factor	मृदा अपरदनीयता कारक
soil fertility	मृदा उर्वरता
soil genesis	मृदा उत्पत्ति
soil health	मृदा स्वास्थ्य
soil horizon	मृदा संस्तर
soil macro-organisms	मृदा वृहद्जीव
soil management	मृदा प्रबंधन
soil microbiology	मृदा सूक्ष्म जैविकी
soil microorganisms	मृदा सूक्ष्मजीव
soil moisture deficit	मृदा नमी अल्पता
soil organic matter	मृदा कार्बनिक पदार्थ
soil porosity	मृदा सरंध्रता

soil productivity	मृदा उत्पादकता
soil profile	मृदा परिच्छेदिका
soil quality	मृदा गुणवत्ता
soil reaction	मृदा अभिक्रिया
soil resistance	मृदा प्रतिरोध
soil salinity	मृदा लवणता
soil science	मृदा विज्ञान
soil sickness	मृदा रुग्णता
soil sieving	मृदा छानना
soil solution	मृदा विलयन
soil sterilant	मृदा निर्जर्मीकारक
soil structure	मृदा संरचना
soil suspension	मृदानिलंबन
soil testing	मृदा परीक्षण
soil texture	मृदा गठन
soil water potential	मृदा-जल विभव
soil water	मृदा जल
solar constant	सौर स्थिरांक
solar radiation	सौर विकिरण
solar spectrum	सौर वर्णक्रम
solarization	सौर्यन,सूर्यीकरण
sole crop	एकल फसल
soluble sodium percentage	घुलनशील सोडियम प्रतिशत
somatic cell	कायिक कोशिका
somatic embryo	कायिक भ्रूण
somatic hybridization	कायिक संकरण
sorghum injury	ज्वार क्षति
SOS gene	क्षतिपूरक जीन
southern blotting	सदर्न शोषण
spacing (plant)	दूरी (पादप)
spadix	स्पेडिक्स
spathe	स्पेथ
special arrangement	विशेष विन्यास
specialized cropping	विशिष्ट सस्यन
specialized farming	विशिष्ट कृषि

species	जाति
specific crop intensity index	विशिष्ट फसल सघनता सूचकांक
specific gravity	विशिष्ट गुरुत्व,आपेक्षिक गुरुत्व
specific humidity	सापेक्ष आर्द्रता
specific leaf area	विशिष्ट पर्ण क्षेत्र
spermatogenesis	शुक्राणुजनन
S-phase	एस. प्रावस्था
spike	कणिश
spikelet	कणिशिका
spindle bush	तर्कु झाड़ी
splash erosion	बौछारी अपरदन
splicing	समबंधन
split application	विभाजित प्रयोग
split genes	विखंडित जीन
split plot design	विभक्त प्लॉट डिजाइन
spongy tissue	स्पंजी ऊतक
spontaneous mutation	स्वतः उत्परिवर्तन
spore	बीजाणु
sprinkler irrigation	फौहारी सिंचाई
spudding	स्पडन
spur bearing	दलपुटधारी
spur	दलपुट
squall	अल्पकालिक झंझावात, अंधड़
stabilizing agent	स्थायीकर कर्मक
standard deviation	मानक विचलन
staple crop	भोज्य फसल
start codon	प्रारंभी प्रकूट
starter solution	आरंभी विलयन
stem borer	तना बेधक
stem-end	स्तम्भ अंत
stenospermocarpy	अवर्ध बीजता
steppe	स्टेपी (घासकेमैदान)
sterilization	1. निर्जर्मीकरण 2. बंध्यीकरण
stigma receptivity	वर्तिकाग्र सुग्राहिता
stigma	1. वर्तिकाग्र 2. श्वासछिद्र

stilt root	अवस्तंभ मूल
stolon	भूस्तारी
stomata	रंध्र
stooling	स्टूलिंग
stop codon	रोध प्रकूट
stratified	स्तरित
stratification	स्तरण
straw	भूसा
stress	प्रतिबल
strip cropping	पट्टीदार सस्यन
strip intercropping	पट्टीदार अंतरासस्यन
stroma	पीठिका
stubble mulching	ठूंठ पलवार
stubble	ठूंठ
style	वर्तिका
sub humid	उप आर्द्र्
suberization	सुबरिनीकरण, कार्कीकरण
submergence	आप्लावन
subsistence farming	जीविकोपार्जनी सस्यन, निर्वाही कृषि
subsoiling	अवमृदा, अवभूमि की गहरी जुताई
sub-species	उपजाति
substitution cropping	प्रतिस्थापन सस्यन
substrate	क्रियाधार, अवस्तर
subsurface irrigation	उपसतही सिंचन
succession	अनुक्रमण
succulent	गूदेदार
sucker	अंतःभूस्तारी
sui-generis	स्वतःवर्गीय
sun-curing	सौर उपचार
supplemental irrigation	पूरक सिंचन, पूरक सिंचाई
supplementary enterprise	पूरक उद्यम
supplementary interaction	अनुपूरक अन्योन्य क्रिया

suppressor gene	निरोधक जीन
surfactant	पृष्ठ संक्रियक
susceptible	सुग्राही, ग्रहणशील
suspension culture	निलंबन संवर्ध
sustainable agriculture	संधारणीय कृषि, टिकाऊ खेती
sustainable development	संधारणीय विकास
swarming	वृंदन
sword leaf	तलवारी पत्ती
syconium	साइकोनियम
symbiosis	सहजीवन, सहजीविता
syngamy	युग्मक संलयन
system of rice intensification	धान सघनता पद्धति
systemic (translocated) herbicide	सर्वांगीय (स्थानांतरित) शाकनाशी
T	
tactic movement	अनुचलन गति
tagging (labelling)	टैगन (लैबलन)
tank silt	टैंक तलछट
tap root	मूसला जड़
tassel (maize)	बल्लर, नरमंजरी (मक्का)
taxonomy	वर्गिकी, वर्गीकरण विज्ञान
technology	प्रौद्योगिकी
temperate zone	शीतोष्णक्षेत्र
temporary wilting	अस्थायी म्लानि
tendril	प्रतान
tensiometer	तनावमापी, टेंसियोमीटर
tepal	परिदल
teratogeny	विरूपजनन
termination codon	समापन प्रकूट
terrace interval	वेदिका अंतराल
terrace	वेदिका
terrestrial radiation	भौमिक विकिरण
terrestrial weeds	भौमिक खरपतवार

test cross	परीक्षार्थ संकरण
test weight	परीक्षण भार
testa	बीजावरण, टेस्टा
tetrad	चतुष्क
tetraploid	चतुर्गुणित
tetraploidy	चतुर्गुणिता
thalamus	पुष्पासन
thermal conductivity	ताप संचालकता
thermal diffusivity	तापीय विसरण
thermal induction	तापीय प्रेरण
thermocouple	तापयुग्म, तापसंयुग्म
thermograph	तापलेखी
thermoperiodicity	तापीय आवर्तिता
thermoperiodism	तापीय आवर्तन
thermophile	तापरागी
thermotaxis	ताप अनुचलन
thinning out	विरलन
threshing	मड़ाई, गहाई
Ti plasmid	अर्बुद प्रेरक प्लाज्मिड
tidal swamps	ज्वारीय दलदली भूमि, दलदल
tile drainage	खपरैल जल निकास
tillability	जुताई योग्यता
tillage	जुताई, कर्षण
tiller (plant)	कल्ला (पादप)
tillering stage	कल्ले फूटने की अवस्था
tillering	कल्ले निकलना, तल शाखन
tilth	भुरभुरी भूमि
tissue testing	ऊतक परीक्षण
toddy	ताड़ी
tolerance	सहयता
top soil	ऊपरी मृदा, सतही मृदा
topato	टमाल्ू
top-dressing	खड़ी फसल में खाद डालना
topoclimatology	स्थल मौसम विज्ञान
topping (tobacco)	शीर्षो मूलन

total digestible nutrient (TDN)	सकल पचनशील पोषक तत्व
total factor productivity	सकल कारक उत्पादकता
total soluble solids	कुल घुलनशील ठोस
totipotency	पूर्ण शक्तता
toxicity	आविषालुता
toxin	आविष
trace element	लेशतत्व, सूक्ष्म मात्रिक तत्व
tracer element	अनुज्ञापक तत्व, अनुलेखक तत्व
transacting	पार क्रियाशील
transcription	अनुलेखन
transformation	रूपांतरण
transgenic	पराजीनी
translation	अनुवाद
translocation	स्थानांतरण
transmittance	पारगमनता
transpiration coefficient	वाष्पोत्सर्जन गुणांक
transpiration pull	वाष्पोत्सर्जन खिंचाव
transpiration ratio	वाष्पोत्सर्जन अनुपात
transplant shock	रोपण धक्का
transplanter	रोपाई यंत्र
transplanting	रोपण, रोपाई
transported soil	स्थानांतरित मृदा
transposon	ट्रांसपोसोन
transverse drainage	अनुप्रस्थ जलनिकास
trap crop	पाश फसल, फाँसू फसल
trashing	पत्ती उतारना (जैसेगन्नेमें)
treatment	उपचार
tree cropping	वृक्ष सस्यन
tree ring	वृक्ष वलय
trial	परख
trickle irrigation	अल्पमात्रीय सिंचाई
trigger factor	विमोचक कारक
triploid	त्रिगुणित

triple cropping	त्रिधा सस्यन, तिहरा सस्यन
trophic level	पोषी स्तर
tropic movements	अनुवर्तनी गति
tropical region	ऊष्ण कटिबंधीय क्षेत्र
tropism	अनुवर्तन
true density	वास्तविक घनत्व
true digestibility	वास्तविक पचनीयता
truncated profile	रूंड परिच्छेदिका
truncated soil	रूंड भूमि
tsunami	सुनामी
tuber crops	कंदीय फसलें
tuber	कंद
tumour	अर्बुद
truncation of soil	भूमि रूंडन
tundra	टुंड्रा
turf	दर्भस्थल, टर्फ, पीट
turgid	स्फीत
turgor movement	स्फीति गति
turgor pressure	स्फीति दाब
turgor	स्फीति
Turner's syndrome	टर्नर का संलक्षण
type (plant)	प्रकार, पादप प्रारूप
type I error	प्रथम प्रकार की त्रुटि
type II error	द्वितीय प्रकार की त्रुटि
typhoon	टाइफून
U	
ultracentrifugation	द्रुतअपकेंद्रण
ultrasound	पराध्वनि
umbel	पुष्पछत्र
uncoupling	अयुग्मन
unfruitfulness	अफलत्व, अफलन
univalent	एकसंयोजी
universal genetic code	सार्वभौम आनुवंशिक कोड
universal soil loss equation	सार्वभौमिक मृदा ह्यास समीकरण
unsaturated fatty acids	असंतृप्त वसीय अम्ल
upland rice	उच्चभूमि धान
upland	उपरिभूमि, उच्चभूमि
urban compost	शहरी कंपोस्ट
urea	यूरिया
urease	यूरिऐज (एकएन्जाइम)
V	
vaccine	वैक्सीन, टीका
vacuole	धानी, रसधानी
value added product	मूल्यवर्धित उत्पाद
value addition	मूल्यवर्धन
value cost ratio	मूल्य लागत अनुपात
value-added agriculture	मूल्यवर्धित कृषि
VAM	वैम
vapor heat treatment	वाष्प तापोपचार
vapor pressure	वाष्प दाब
variable cost	परिवर्ती लागत
variable gene	परिवर्ती जीन
variable rate technology	परिवर्ती दर प्रौद्योगिकी
variance	विभिन्नता
variety	किस्म
vector	रोगवाहक
vegetation degradation	वानस्पतिक निम्नीकरण
vegetation	वनस्पति
vegetative barrier	वानस्पतिक रोध
vegetative cover	वानस्पतिक आच्छादन
vegetative propagation	कायिक प्रवर्धन
vegetative stage	वानस्पतिक प्रावस्था
venation	शिराविन्यास
vermicastings	केंचुए का मल, कृमि-क्षिप्ति
vermicompost	वर्मी कंपोस्ट

vernalization	वसंतीकरण
vertical mulching	ऊर्ध्व पलवार
vertisol	वर्टीसॉल
viability (seed)	जीवनक्षमता (बीज)
vine	लता, द्राक्षालता
vinegar	सिरका
vir gene	उग्र जीन, विर जीन
virgin land	अकृष्य भूमि, अक्षत भूमि
virgin soil	अकृष्य मृदा, अक्षत मृदा
virulence	उग्रता
virus coat protein	विषाणु आवरण प्रोटीन
virus indexing	विषाणु सूचीकरण
virus	विषाणु
viscosity	श्यानता
visible radiation	दृश्य विकिरण
vitamin	विटामिन
viticulture	अंगूरोत्पादन
viviparous	सजीव प्रजक, जरायुज
void space	रिक्त स्थान
volatilization	वाष्पीकरण
volunteer plants	नैसर्गिक पौधे
W	
wage	मजदूरी
warm blooded animal	नियत तापीय प्राणी
waste management	अपशिष्ट प्रबंधन
wastelands	व्यर्थ भूमि, अकृष्य भूमि
water application efficiency	जल प्रयोग दक्षता
water application rate	जल प्रयोग दर
water balance	जल संतुलन
water compaction	जल संहतीकरण
water conservation	जल संरक्षण
water consumption	जल की खपत, जल उपभोग
water conveyance efficiency	जल संवहन दक्षता
water culture	जल कृषि
water deficit	जल न्यूनता
water distribution efficiency	जल वितरण दक्षता
water duty	जलकर
water furrow	जल कूंड
water gates	जल द्वार
water logging	जलाक्रांति
water management	जल प्रबंधन
water requirement of crops	फसलों की जल मांग
water saturation deficit	जलसंतृप्तता न्यूनता
water table	भौम जलस्तर
water use efficiency	जल उपयोग दक्षता
water yield	जल प्राप्ति
water-harvesting	जल संग्रहण
watershed management	जलसंभर प्रबंधन
watershed treatment	जलसंभर उपचार
watershed	जलसंभर
watershed-based system	जलसंभर प्रणाली
waterway	जलमार्ग
wave-length	तरंगदैर्घ्य
waxing	मोमीकरण
weather	मौसम, ऋतु
weathering	अपक्षयण, अपक्षय
weed control efficiency	खरपतवार नियंत्रण दक्षता
weed control	खरपतवार नियंत्रण
weed eradication	खरपतवार निर्मूलन
weed index	खरपतवार सूचकांक
weed	खरपतवार
weeding	निराई
western blotting	वेस्टर्न शोषण
wet planting	नमी रोपण

wet season	नम मौसम
wet seeding	गीली बुवाई
wet year	आर्द्र वर्ष
wet-bulb depression	आर्द्र-बल्ब गिरावट
wet-bulb temperature	आर्द्र–बल्ब तापमान
wet-bulb thermometer	आर्द्र–बल्ब तापमापी
wetland	आर्द्र- भूमि
wettable powder	कलेदनीय चूर्ण
wetting agent	क्लेदक, कलेदन कारक
whirling psychrometer	घूर्णी आर्द्रतामापी
white revolution	श्वेत क्रांति
whole farm analysis	समग्र फार्म विश्लेषण
whole farm approach	समग्र फार्म दृष्टिकोण
wider adaptability	व्यापक अनुकूलता
wilting point	म्लानि बिन्दु
wind break	वातरोध
wind energy	वायत ऊर्जा
wind erosion	वायु अपरदन
wind generation	वायु उत्पन्न करना
wind mill	पवन चक्की
wind power	वायु शक्ति
wind speed	वायु गति
wind strip cropping	वायु पट्टिका सस्यन
wind velocity	वायु वेग
wind	वायु
windrow	विंड्रो
windrower	विंड्रोअर
wind-vane	वात दिग्दर्शी
winnower	ओसाईयंत्र
winnowing	ओसाई
wobble hypothesis	वॉबल परिकल्पना
womb	गर्भाशय
wood ash	काष्ठराख
wood gas	काष्ठ गैस
work	कार्य

X	
xanthinuria	जैंथीनमेह
xanthophyll	पीतवर्णक
X-chromosome	'एक्स' गुणसूत्र
xenia	अपर पराग प्रभाव
xeroderma pigmentosum	जीरोडर्मा पिग्मेंटोसम
xerophyte	मरुपादप
xerophytism	मरुद्भिदता
X-ray diffraction	एक्स-किरण विवर्तन, एक्स-रे विवर्तन
xylem	जाइलम, दारू
xylophyte	ज़ाईलोफाइट, काष्ठीय पादप
Y	
'Y' trellis	'वाई' जाल
Y-chromosome	वाई-गुणसूत्र
yeast extract	यीस्ट अर्क
yeast	खमीर, यीस्ट
yellow revolution	पीत क्रांति
yellowing	पीला पड़ना
yield component	उपज घटक
yield monitor	उपज अनुवीक्षण
yield potential	उपज शक्यता
yield stability	उपज स्थायित्व
yield	उपज
yolk	पीतक
Z	
Zaid	जायद
Z-chromosome	जेड़-गुणसूत्र
Z-DNA	जेड़-डी.एन.ए.
zeatin	जीएटिन
zero energy cool chamber	शून्य ऊर्जा शीतकक्ष
zero tillage	शून्य कर्षण

zero tolerance	शून्य सहयता
zinc deficiency	जिंक अल्पता
zinc finger protein	जिंक फिंगर प्रोटीन
zincated urea	जिंकयुक्त यूरिया
zona pellucida	पारदर्शी अंडावरण
zoophily	प्राणी परागण
zooplankton	प्राणी प्लवक
zygote	युग्मज
zygotic lethal gene	युग्मज घातक जीन

कृषि संबंधी महत्वपूर्ण पेड़-पोधों के सामान्य नाम

alfalfa (lucerne)	रिजक्रा, लूसर्न
almond	बादाम
aloe	धीकुवार
amaranthus	चौलाई, रामदाना
ammi	अजवाइन
anjan grass	अंजनघास, धामनघास
anthurium	एंथूरियम
aonla, Indian gooseberry	आंवला
apple	सेब
apricot	खुबानी
Arabian jasmine	मोगरा, बेला
areca nut	सुपारी
arjun	अर्जुन
asafoetida	हींग
ash gourd	पेठा
Ashoka tree	अशोक
ashthma weed (euphorbia)	दूधी
asparagus	सतावर
avocado	अवोकाड़ो
babul acacia	बबूल, कीकर
baby corn	बेबीकॉर्न
bael	बेल
baill	लाजालु
balsam	गुलमेंहदी
bamboo	बांस
banana	केला
banyan tree	बरगद
barley	जौ
barnyard millet	सावां
basil	तुलसी
bastard cedar	रुद्राक्ष
bastard myrobalan	वहेड़ा
bauhinia	कचनार
bay berry	कैफल
bean	सेम
beet	चुकंदर
belladonna	बैलाडोना
ber	बेर
berseem	बरसीम
betel	पान
bilimbi	बिलिंबी
bitter gourd	करेला
black gram	उड़द
black nightshade	मकोय
bongainvillea	बोगेनविलिया
bottle brush	बोटलब्रश
bottle gourd	लौकी
bread fruit	ब्रेडफ्रूट
bridal creeper	डेला
brinjal	बैंगन
broad bean	वाकला, चौड़ीबीन
broccoli	ब्रोकोली
brussel's sprout	ब्रुसेल्सस्प्राउट
buckwheat	कुटू
butea	पलाशलता, किंशुक
cabbage	बंदगोभी
cactus	नागफनी
calendula	जरगुल

canary grass (phalaris)	गिल्लीडंडा, गेहूंकामामा
canna	कैना
capparis	करीर
capsicum	शिमलामिर्च
carambola	कमरख
carapa	पुसुर
cardamom	इलाइची
carnation	कार्नेशन
carrot	गाजर
cashew nut	काजू
cassia	अमलताश
castor	अरंडी
cauliflower	फूलगोभी
celery	सेलेरी
champac	चम्पा
chenopodium	बथुआ
cherry tomato	चेरीटमाटर
cherry	चेरी
chickpea, gram	चना
chillies	मिर्च
China turpentine tree	काकड़ा
chow-chow	लौकू
chrysanthemum	गुलदाउदी
chufa, earth almond	चिचोड़ा
cichory	चिकोरी, कारनी
cinnamon	दालचीनी
citron	सिट्रोन
citronella grass	गंजनी
climbing jasmine	मालती
clove	लौंग
cluster bean	ग्वारबीन
cocoa	कैहवा
coconut	नारियल
coffee	कॉफी
coleus	पत्थरचूर

colocasia	अर्बी
colocynth, bitter apple	इंद्रायन
common purslane	जंगलीपालक
coriander	धनिया
cotton	कपास
cowpea	लोबिया
cubeb	कबाब-चीनी
cucumber	खीरा
cucurbits	कद्दूवर्गीय
cumin	जीरा
curry leaf	कढ़ीपत्ती
custard apple	शरीफा
daisy	गुलबहार
dates	खजूर
day jasmine	दिनकाराजा
dill	सोया
Dinanath grass	दीनानाथघास
dodder	अमरबेल
doob grass, bermuda grass	दूबघास
druce	छोंकर
dry ginger	सौंठ
edible pine	चिलगोजा
elephant foot, yam	जिमीकंद
eucalyptus	सफेदा
fennel, anise	सौंफ
fenugreek	मेथी
fig	अंजीर
finger millet	कंगनी
fire-flame bush	दावी
flame of forest	पलाश
French bean	फ्रेंचबीन
garlic	लहसुन
gerbera	जरबेरा
gherkin	घरकिन
ginger	अदरक

gladiolus	ग्लेडियोलस
goat weed (ageratum)	महकुवा
grapefruit	ग्रेपफ्रूट
grapes	अंगूर
green gram	मूंग
grewia	भीमल
groundnut	मूंगफली
guava	अमरूद
Guinea grass	गिनीघास
hazel nut	हेजलनट
hemp	भांग
henbane	खुरासानीअजवाईन
henna	मेंहदी
hibiscus	गुड़हल
hop	होप
horse gram	कुल्थी
horse-eye-bean	कवांच
Indian birch	भोजपत्र
Indian blue pine	कैल
Indian cherry	लसौड़ा
Indian kino tree	बीजासर
Indian laurel tree	सुरपान, सुल्तानचंपा
Indian madder	मंजीठ
indigo	नील
Italian millet	काकुन
ivory tree	कुर्ची
ivy gourd/little gourd	कुंदरू
jacaranda	नीलीगुलमोहर
jackfruit	कटहल
jamun	जामुन
jasmine	मोतिया
jattikhatti	जट्टी/खट्टी
jatropha	रतनजोत
jute	जूट
kadam	कदंब

Kans grass	कांसघास
karonda	करौंदा
kidney bean, rajmah	राजमा
Kiwifruit	कीवीफल
knolkhol	गांठगोभी
kodampuli	विलायतीइमली
Kodo millet	कोदो
Kokam butter tree (mangosteen)	कोकम
lac tree	कुसुम
lac	लाख
lady's finger, okra	भिंडी
land caltrops	गोखरू
lantana	लैंटाना
lathyrus	खेसारी
leek	लीक
lemon grass	नींबूघास
lemon	लेमन
lentil	मसुर
lequorice	मुलैठी
lettuce	सलाद
lily	कमलिनी, कुमुदिनी
lime	नींबू
linseed	अलसी
litchi	लीची
little millet	कुटकी
long melon	ककड़ी
long pepper	पीपर, पिपलामूल
loquat	लोकाट
lotus	कमल
lucerne	रिजका
mace	जावित्री
madar	आक
madhuca	मुहुआ
maize	मक्का
makhana	मखाना

mandarin	संतरा
mango zinger	आमाहल्दी
mango	आम
margosa, neem	नीम, मारगोसा
marigold	गेंदा
mastic tree	रूमीमस्तिकी
merrill	बड़ाकांटा
mesta	मेस्ता
mint	पुदीना
molucca bean	करंघु, नकटमाला
monkey jack	बड़हल
moringa	सहजन
morning glory (convolvulus)	हिरनखुरी
mosambi	मौसम्बी
moth bean	मोठ
mulberry	शहतूत
mushroom	खुंब
musk melon	खरबूज
musk	कस्तूरी
mustard	सरसों
myrtle	विलायतीमेंहदी
nagai camphor	ककरोंदा
Napier grass	हाथीघास, नेपियरघास
Narcissus	नर्गिस
nigella	कलौंजी
niger	रामतिल
night jasmine	रातकीरानी
Nipa palm	गोफल
nut grass	सागरमोथा
nut sedge	मोथा
nutmeg	जायफल
oats	जई
oil palm	तेलताड़
oleander	कनेर
olive	जैतून

onion	प्याज
opium poppy	पोस्त
Oriental plane, European plane tree	चिनार
paddy	धान
palmarosa	गंधीजघास
palmyra palm	ताड़
pandanus	केतिकी
papaya	पपीता
para grass	पैराघास
parsley	पार्सले
parthenium (congress grass)	(कांग्रेसघास) गाजरघास
patchouli	पचौली
peach	आड़ू
peacock flower, paradise flower	गुलमोहर
pear	नाशपाती
pearl millet	बाजरा
peas	मटर
pecan nut	पीकननट
pennel	ब्राह्मी
pepino	पेपिनो
pepper	कालीमिर्च
perilla	भसिंडा
periwinkle	सदाबहार
persimmon	जापानीफल
phalsa	फालसा
pigeon pea	अरहर
pimpernel (anagallis)	कृष्णनील
pine	चीड़
pineapple	अनन्नास
pistachio, green almond	पिस्ता
plum	अलूचा
pointed gourd	परवल
pomegranate	अनार

pongamia	करंज
poplar	पोपलर
poppy	अफीम
portulaca	खुर्सा
potato	आलू
prickly poppy (mexican poppy)	सत्यानाशी
Pride of India, China tree	बकैन, नीम
proso millet	चीना
psyllium	इसबगोल
pulasaan	पुलासन
pumpkin	कद्दू
pummelo	पुमैलो
padish	मूली
rain tree	विलायतीसीरिस
rambutan	रैम्बूटान
Rangoon creeper	रंगूनकीबेल
rapeseed	राई
raspberry	रसभरी
rat-tail radish	सुंगरा, मुंगरा
rattan	बेत
red cedar (toona)	तून
red clover	त्रिपत्रा
red silk tree	सेमल
reed grass	नरकुल
rhodes grass	रोड्सघास
rhododendron	बोरांश
rice	चावल
ridged gourd	नसदारतोरई
rose	गुलाब
round gourd	टिंड़ा
rubber	रबड़
safflower	कुसुम
saffron	केसर
sage	सीस्ती

sal	साल
salvia	साल्विया
sandal wood	चंदन
sapota	चीकू
screwpine	केवड़ा
seabuckthorn	धुरचुक
senna	सनाय
serpentine wood	चंद्रभागा
sesame	तिल
snake gourd	चिचिड़ा
snap melon	कचरी
soapnut	रीठा
sorghum	ज्वार
soybean	सोयाबीन
Spanish cherry	मोलश्री
spinach	पालक
spindle wood	बारफली
sponge gourd	घीया, तोरई
stevia	स्टीविया
stinging nettle	बिच्छूबूटी
stone flower	छड़ीला
strawberry	स्ट्राबेरी
sudan grass	सुडानघास
sugarcane	गन्ना
summer squash	चप्पनकद्दू
sunflower	सूरजमुखी
sunhemp	सनई
sweet clover	बनमेथी, सैंजी
sweet gourd	ककरोल
sweet potato	शकरकंदी
sweet violet	वनषशाह
tamarind	इमली
tarragon	किरमाला
temple or pagoda tree	स्वैरचंपा, सोनचंपा
thistle	सज्जी

thuja	मोरपंखी
thyme	बनजवाइन
tobacco	तम्बाकू
tomato	टमाटर
tree of sorrow	हरसिंगार
triticale	ट्रिटिकेल
trumpet vine	लटकनिया
tuberose	रजनीगंधा
turmeric	हल्दी
turnip	शलगम
typha (Indian reed mace)	पटेर
ulla grass	उल्लाघास
vanilla	वनिला
vetiver	खस
walnut	अखरोट
water cress	ब्राह्मीसाग
water hyacinth	जलकुंभी
water melon	तरबूज
water mint	टिवरा
weeping willow	मजनून
west Indian mahogany	महोगनी
wheat	गेहूं
white clover	संफतल
white mulberry	तून
white popinac	सुबवूल
white willow	बिस
wild marjoram	सतरा, बनतुलसी
wild oat	जंगलीजई
winged bean	पंखियाबीन
winter squash	विलायतीकद्दू
withania	अश्वगंधा
wood sorrel, oxalis	खट्टीबूटी
yam bean	सकालू
yellow berried nightshade	कटीली
yellow myrobalan	हरीर
zanthophylum	तेजफल

कृषि संबंधी कीट, पक्षी और पशुओ के नाम

ants	चींटी
aphids	तेला, माहू
army worm	सैनिककीट
bandicoot	घूंस
bear	भालू
beetle	भृंग
blister beetle	फफोलाभृंग
blue bull	नीलगाय
boll worm	कपासकीसूंड़ी
butterfly	तितली
capsule borer	पुटिकावेधक
caterpiller	इल्ली
citrus psylla	सिट्रससिल्ला
cricket	झींगर
crow	कौआ
cut worm	कटुआ
defoliating beetle	पत्तियांखानेवालाभृंग
drone	नरमधुमक्खी
duck	बत्तख
earthworm	केंचुआ
flea	पिस्सू
fox	लोमड़ी
fruit fly	फलमक्खी
gall midge	पीटिकाकीट
grass hopper	टिड्ड़ा
gundhy bug	गंधीकीट
honeybee	मधुमक्खी
hopper	फुदका
jassid	जैसिड़
khapra beetle	खपराभृंग

lac insect	लाखकीट
lady bird beetle	सोनपंखी
leaf miner	पर्णसुरंगक
leaf roller	पत्तीलपेटक
leaf webber	पत्तीजालाकीट
locust	टिड्डी
mealy bug	मीलीबग, गुजियाकीट
midge	मशकाभ, मिज
mites	चिचंड़ी, बरूथी
monkey	बंदर
mosquito	मच्छर
moth	पतंगा, शलभ
nematode	सूत्रकृमि
nut weevil	नटघुन
painted bug	चित्तीदारमत्कुण
parrot	तोता
peacock	मोर
pod borer	फलीवेधक
pod fly	फलीमक्खी
pulse beetle	ढ़ोरा
pyrilla	पाइरिल्ला
quail	बटेर
queen	रानीमधुमक्खी
rat	चूहा
red palm weevil	लालताड़-घुन
red pumpkin beetle	कद्दूकीलालभृंग
rhinoceros beetle	राइनोसिरसभृंग
rice weevil	सुरसुरी
rodent	कृतंक
sap sucker	रसचूसक
saw fly	आरामक्खी
scale insect	शल्ककीट
semilooper	अर्धकुंडलक
shoot borer	प्ररोहवेधक
silkworm	रेशमकीट
snail	घौंघा
sparrow	गौरैया
spider	मकड़ी
squirrel	गिलहरी
stalk borer	तनावेधक
stem borer	तनावेधक
stem girdler	स्तंभमेखलाकीट
stone weevil	गुठलीकाघुन
tea mosquito	'टी' मच्छरकीट
termites (white ant)	दीमक
thrips	थ्रिप्स
wasp	बर्र, ततैया
weaver bird	बया
weevil	घुन
white grub	सफेदसूंड़ी
woolly aphid	रुईयामाहू

कृषि संबंधी वैज्ञानिक पदनाम

agricultural economist	कृषिअर्थशास्त्री
agricultural extensionist	कृषिप्रसारविज्ञानी
agricultural scientist	कृषिवैज्ञानिक
agriculture engineer	कृषिअभियंता
agrobiologist	कृषिजीवविज्ञानी
agronomist	सस्यविज्ञानी
agrophysicst	कृषिभौतिकीविद्
animal breeder	1.प्राणिप्रजनक 2.पशुप्रजनक
bacteriologist	जीवाणुविज्ञानी
biochemist	जैवरसायनविद्
biologist	जीवविज्ञानी
biotechnologist	जैवप्रौद्योगिकीविद्
botanist	वनस्पतिविद्
entomologist	कीटविज्ञानी
environmentalist	पर्यावरणविद्
horticulturist	उद्यानविद्

hydrologist (water technologist)	जलविज्ञानी
meteorologist	मौसमविज्ञानी
microbiologist	सूक्ष्मजीवविद्
mycologist	कवकविज्ञानी
nematologist	सूत्रकृमिविज्ञानी
pathologist	रोगविज्ञानी
pedologist	मृदाविज्ञानी

plant breeder	पादपप्रजनक
plant pathologist	पादपरोगविज्ञानी
plant physiologist	पादपक्रियाविज्ञानी
pomologist	फलविज्ञानी
soil scientist	मृदाविज्ञानी
veterinanian doctor	पशुचिकित्सक
virologist	विषाणुविज्ञानी
zoologist	प्राणिविज्ञानी

ग्राहक फार्म

सेवा में :
अध्यक्ष,
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग,
पष्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली-110066

महोदय,

कृपया मुझे "विज्ञान गरिमा सिंधु" (त्रैमासिक पत्रिका) का एक वर्ष के लिए ..... से ग्राहक बना लीजिए। मैं पत्रिका का वार्षिक सदस्यता शुल्क ..... रुपये, अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली के पक्ष में, नई दिल्ली स्थित अनुसूचित बैंक में देय डिमांड ड्राफ्ट सं. ..... दिनांक ..... द्वारा भेज रहा/रही हूं। कृपया पावती भिजवाएं।

नाम .....
पूरा पता .....

भवदीय

(हस्ताक्षर)

	सामान्य ग्राहकों / संस्थाओं के लिए	विद्यार्थियों के लिए
प्रति अंक	₹ 14.00	₹ 8.00
वार्षिक चंदा	₹ 50.00	₹ 30.00
पाँच वर्ष	₹ 250.00	₹ 150.00
दस वर्ष	₹ 500.00	₹ 300.00
बीस वर्ष	₹ 1000.00	₹ 600.00

डिमांड ड्राफ्ट "अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, के पक्ष में नई दिल्ली स्थित अनुसूचित बैंक में देय होना चाहिए। कृपया ड्राफ्ट के पीछे अपना नाम पूरा पता भी लिखें। ड्राफ्ट 'एकांउट पेई' होना चाहिए। यदि ग्राहक विद्यार्थी है तो कृपया निम्न प्रमाण–पत्र भी संलग्न करें:

कृपया डिमांड ड्राफ्ट के पीछे अपना नाम और पता लिखें।

विद्यार्थी–ग्राहक प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि कुमारी/श्रीमती/श्री..... इस विद्यालय/महाविद्यालय/विश्वविद्यालय के ..... विभाग का छात्र/की छात्रा है।

(हस्ताक्षर)

(प्राचार्य/विभागाध्यक्ष)
(मोहर)

प्रकाशन विभाग के बिक्री केंद्र / Sales Counters of Department of Publication

1	**किताब महल** प्रकाशन विभाग, बाबा खड़ग सिंह मार्ग, स्टेट एम्पोरियम बिल्डिंग, यूनिट नं. 21 नई दिल्ली–110001	**Kitab Mahal** Department of Publication, Baba Kharag Sigh Marg, State Emporia Building, Unit No.-21, New Delhi-110001
2	**बिक्री पटल** प्रकाशन विभाग, उद्योग भवन, गेट नं.–3, नई दिल्ली–110001	**Sale Counter** Department of Publication, Udyog Bhawan, Gate No.-3, New Delhi-110001
3	**बिक्री पटल** प्रकाशन विभाग, लॉयर चैंबर, दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली–110003	**Sale Counter** Department of Publication, Lawyers Chambber, Delhi Hight Court, New Delhi-110003
4	**बिक्री पटल** प्रकाशन विभाग, संघ लोक सेवा आयोग, धौलपुर हाउस, नई दिल्ली–110001	**Sale Counter** Department of Publication, Union Public Service Commissions, Dholpur House, New Delhi-110001
5	**बिक्री पटल** प्रकाशन विभाग, सी.जी.ओ.काम्पलेक्स, न्यू मेरीन लाइन्स, मुंबई–400020	**Sale Counter** Department of Publication, C.G.O. Complex, New Marine Lines, Mumbai-400020
6	पुस्तक डिपो प्रकाशन विभाग, के.एस.राय मार्ग, कोलकाता–700001	**Pustak Depot,** Department of Publication**,** K. S. Roy Marg, Kolkata-700001s

आयोग का बिक्री केन्द्र
Sales Counter of CSTT

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
पश्चिमी खंड–7, रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली–110066

Commission for Scientific and Technical Terminology
Ministry of Human Resource Development
West Block-VII, R. K. Puram,
New Delhi-110066

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें /

For detailed information please contact:

इंजी. मोहन लाल मीणा सहायक निदेशक (सिविल इंजीनियर) प्रभारी अधिकारी (बिक्री) वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग मानव संसाधन विकास मंत्रालय पश्चिमी खंड–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110066 फोन नं.–011–26105211 / विस्तार–246	Er. Mohan Lal Meena Asstt. Director (Civil Engineer) The Officer-in-Charge (Sales) Commission for Scientific and Technical Terminology Ministry of Human Resource Development West Block-VII, R. K. Puram, New Delhi-110066 Ph. No.-011-26105211/ Extn.-246

© भारत सरकार
प्रकाशन नियंत्रक

विशेषांक 104 पी.सी.एस.टी.टी. (1–3) 2018
1500

Mobile App of Administrative Terms Glossary is now available in Google Play Store.

Step-1: Search CSTT • Step-2: Download • Step-3: Open to use

वैतश आयोग द्वारा प्रकाशित शब्दावलियाँ, परिभाषा-कोश मोबाईल ऐप तथा ई-पुस्तक के रूप में उपलब्ध होंगे।

प्रोफेसर अवनीश कुमार
अध्यक्ष

Glossaries and Definitional Dictionaries published by CSTT shall now be available in mobile apps and e-books format.

Professor Avanish Kumar
Chairman

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग)
पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली - 110066.
फोन नं. 011-26105211 • वेबसाइट : www.cstt.gov.in

Commission for Scientific and Technical Terminology
Ministry of Human Resource Development
(Department of Higher Education)
West Block-7, R.K. Puram, New Delhi - 110066.
Phone: 011-26105211 • Website: www.cstt.gov.in

मुद्रण निदेशालय द्वारा, भारत सरकार मुद्रणालय में मुद्रित एवं
प्रकाशन नियंत्रक, सिविललाइन्स, दिल्ली-110054 द्वारा प्रकाशित, 2018